आध्यात्मिक पूजन-विधान संग्रह

श्री आदिनाथ भगवान

श्री अजितनाथ भगवान

श्री संभवनाथ भगवान

श्री अभिनन्दननाथ भगवान

श्री सुमितनाथ भगवान

श्री पद्मप्रभ भगवान

श्री सुपार्श्वनाथ भगवान

श्री चन्द्रप्रभ भगवान

शासननायक भगवान श्री महावीरस्वामी

श्री पुष्पदन्त भगवान

श्री शीतलनाथ भगवान

श्री श्रेयांसनाथ भगवान

श्री वासुपूज्य भगवान

श्री विमलनाथ भगवान

श्री अनन्तनाथ भगवान

श्री धर्मनाथ भगवान

श्री शान्तिनाथ भगवान

श्री कुन्थुनाथ भगवान

श्री अरनाथ भगवान

श्री मल्लिनाथ भगवान

श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान

श्री नमिनाथ भगवान

श्री नेमिनाथ भगवान

श्री पार्श्वनाथ भगवान

प्रकाशक

पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट, देवलाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आध्यात्मिक
पूजन-विधान संग्रह
(चौबीस तीर्थंकर विधान)

:: लेखक ::

ब्र. श्री रवीन्द्रजी 'आत्मन्'

:: प्रकाशक ::

पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट

देवलाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली के
अन्तर्गत् पूज्य कहानगुरुदेव स्मृतिग्रंथ प्रकाशन पुष्प ८०

प्रथम संस्करण : ११०० प्रतियाँ
देवलाली में आयोजित विधान के अवसर पर (दिनांक २७.१२.२००८)
प्रकाशक :
पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली

लेखक :
ब्र. श्री रवीन्द्रजी 'आत्मन्'

लागत : **४०/- रूपये**
न्योछावर : **१५/- रूपये**

प्राप्ति स्थान :
१. पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट
कहान नगर, देवलाली, जिला-नाशिक (महा.)
२. श्री सीमंधर जिनालय
१७३/१७५, मुम्बादेवी रोड, जवेरी बाजार, मुम्बई

विधान कर्ता परिवार :
११०००/- मातुश्री दीपाली बैन अखयराज बौरीचा
हस्ते- श्री रमेशभाई बौरीचा, दादर-मुम्बई

विशेष सहयोग :
११०००/- श्रीमती अंजूबैन माणिकलाल शाह
हस्ते- श्री हर्षदभाई मुलुण्ड-मुम्बई

मुद्रण :
जैन कम्प्यूटर्स, जयपुर
Phone :141-2701056, Fax : 0141-2709865 Mobile : 094147-17816
email : jaincomputers74@yahoo.com

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आध्यात्मिक पूजन-विधान संग्रह

(चौबीस तीर्थंकर विधान)

(खण्ड १,२,३ व ४ में समागत रचनाएँ ब्र. श्री रवीन्द्रजी आत्मन् द्वारा रचित हैं।)

विषय	पृष्ठांक
प्रकाशकीय	५
अहो भाग्य	६
श्री देव-शास्त्र-गुरु स्तुति (खण्ड-१)	
नवदेव भक्ति	१३
घड़ी जिनराज दर्शन की.....	१४
शुभ काललब्धि जागी.....	१४
धन्य घड़ी मैं दर्शन	१५
कैसी सुन्दर जिन प्रतिमा.....	१५
अद्भुत प्रभुता आज निहारी...	१६
दर्शाती जयवंत प्रभो...	१६
माँ जिनवाणी मुझ अन्तर में...	१७
धन्य-धन्य मुनिवर का जीवन...	१७
धन्य मुनिराज की समता.....	१८
जंगल में मुनिराज अहो	१९
वनवासी संतों को.....	२०
गुरु निर्ग्रन्थ परिग्रह....	२०
नित्य-नैमित्तिक पूजन (खण्ड-२)	
प्रतिमा प्रक्षाल पाठ	२१
विनय पाठ	२२
पूजा पीठिका (भाषा)	२३
श्री जिनेन्द्र अभिषेक स्तुति	२५
श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन	२६
श्री वीतराग पूजन	२९
श्री शान्ति-कुन्थु-अरनाथ पूजन	३३
श्री पंचबालयति पूजन	३६
श्री बाहुबली पूजन	४०
श्री विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन	४४
श्री सीमन्धर पूजन	४६
श्री सिद्ध पूजन	४९
सोलहकारण पूजन	५३
दशलक्षणधर्म-पूजन	५५
रत्नत्रय पूजन	६१
श्री पंचमेरु पूजन	६४
नन्दीश्वर द्वीप पूजन	६७
वीरशासन जयन्ती पूजन	६९
श्री श्रुतपंचमी पूजन	७२
सरस्वती पूजन	७५
निर्वाणक्षेत्र पूजन	७८
अक्षय तृतीया पूजन	८१
मुनिराज पूजन	८४
शान्ति पाठ	८७
विसर्जन पाठ	८८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विषय	पृष्ठांक
श्री चौबीस तीर्थंकर विधान (खण्ड-३)	
विधान पीठिका	८९
मंगलाचरण	९३
चौबीसी समुच्चय पूजन	९४
श्री आदिनाथ पूजन	९७
श्री अजितनाथ पूजन	१०२
श्री संभवनाथ पूजन	१०६
श्री अभिनन्दननाथ पूजन	१०९
श्री सुमतिनाथ पूजन	११३
श्री पद्मप्रभ पूजन	११६
श्री सुपार्श्वनाथ पूजन	१२०
श्री चन्द्रप्रभ पूजन	१२३
श्री पुष्पदंतनाथ पूजन	१२७
श्री शीतलनाथ पूजन	१३०
श्री श्रेयांसनाथ पूजन	१३३
श्री वासुपूज्य पूजन	१३६
श्री विमलनाथ पूजन	१४०
श्री अनन्तनाथ पूजन	१४४
श्री धर्मनाथ पूजन	१४७
श्री शान्तिनाथ पूजन	१५१
श्री कुन्थुनाथ पूजन	१५५
श्री अरनाथ पूजन	१५८
श्री मल्लिनाथ पूजन	१६२
श्री मुनिसुव्रतनाथ पूजन	१६६
श्री नमिनाथ पूजन	१६९
श्री नेमिनाथ पूजन	१७३
श्री पार्श्वनाथ पूजन	१७६
श्री महावीर पूजन	१८०
समुच्चय जयमाला	१८३

विषय	पृष्ठांक
आध्यात्मिक पाठ संग्रह (खण्ड-४)	
सामायिक पाठ	१८५
परमार्थ विंशतिका	१८७
जिनमार्ग	१९१
मेरा सहज जीवन	१९३
मंगल शृङ्गार	१९४
समता षोडसी	१९५
ज्ञानाष्टक	१९६
कर्त्तव्याष्टक	१९८
सांत्वनाष्टक	१९९
परमार्थ शरण	२००
(विशेष खण्ड)	
मंगल पंचक	२०१
पुण्याहवाचन	२०२
चौबीस तीर्थंकर वंदना	२०३
विद्यमान बीस तीर्थंकर वंदना	२०५
प्रतिमा प्रक्षाल पाठ	२०७
श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन	२१०
समुच्चय पूजन	२१५
श्री पंचपरमेष्ठी पूजन	२१८
श्री सीमन्धर पूजन	२२१
श्री सिद्ध पूजन	२२५
श्री पंचबालयति जिनपूजन	२२९
अर्घ्यावलि	२३३
समुच्चय महार्घ	२४०

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशकीय

आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य गुरुदेव श्रीकानजीस्वामी के शासन प्रभावना योग को गति प्रदान करने हेतु स्थापित पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली के अन्तर्गत् पूज्य कहान गुरुदेव स्मृति ग्रंथ प्रकाशन पुष्प ८० के रूप में वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति में समर्पित प्रस्तुत संकलन प्रकाशित करके हम अत्यन्त गौरव का अनुभव कर रहे हैं।

आदरणीय बाल ब्र. पण्डित रवीन्द्रकुमारजी 'आत्मन्' का निवृत्तिमय जीवन, अन्तर्मुखी पुरुषार्थ प्रेरक चिन्तन, अध्यात्म एवं आगम तथा परमार्थ और व्यवहार के सन्तुलन पोषक प्रवचन तथा भक्ति, अध्यात्म और सिद्धान्त के संगम स्वरूप लेखन – इसप्रकार उनका समग्र व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व आत्मकल्याण में प्रबल निमित्तभूत है। ऐसे लोकोपकारी महापुरुष की रचनायें प्रकाशित करने का अवसर पाकर यह ट्रस्ट स्वयं को भाग्यशाली अनुभव करता है।

इस संकलन का तथा इसे प्रकाशित करने का अवसर हमें उपलब्ध कराने का श्रेय पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, देवलाली को है। अत: हम उनके हार्दिक आभारी हैं।

लेजर टाइप सेटिंग व मुद्रण कार्य हेतु जैन कम्प्यूटर्स जयपुर के संचालक पण्डित रमेशचन्दजी शास्त्री भी धन्यावाद के पात्र हैं।

आबाल-गोपाल इस पुष्प की आध्यात्मिक सौरभ से अपनी अन्तश्चेतना को प्राणवन्त करें – यही मगंल भावना है।

– मुकुन्दभाई मणिलाल खारा, प्रवीणभाई पोपटलाल वोरा
कान्तिभाई रामजीभाई मोटाणी, सुमनभाई रामजीभाई दोशी
पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहो भाग्य

श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु के प्रति समर्पित यह लोकोत्तर कामना तथा पूजन के लोकोत्तर फल की प्राप्ति की भावना से भरी हुई ये पंक्तियाँ पढ़कर किस आत्मार्थी भक्त का हृदय नहीं उछल पड़ेगा? अध्यात्म रस की लहरों से सुशोभित यह भक्ति सरोवर आत्मार्थियों की अध्यात्म रस पिपासा शान्त करते हुए उन्हें पूज्य, पूजक, पूजा एवं पूजा के फल का सच्चा स्वरूप दिखाने में पूर्ण समर्थ हैं।

पूजन साहित्य के विकास को नई गति प्रदान करनेवाले दैदीप्यमान कवियों के रूप में आदरणीय बाल ब्र. पण्डित रविन्द्रकुमारजी आत्मन् 'बड़े पण्डितजी साहब' पूजन-परम्परा पर्यन्त स्मरण किये जाते रहेंगे। वर्तमान में अध्यात्म रसिक साधर्मियों में विशेष रूप से प्रिय उनकी रचनायें युगों-युगों तक आत्मार्थी जनों की भावनाओं में धड़कती हुई भक्ति की अन्तरात्मा का दर्शन कराके स्वानुभूति की अपूर्व प्रेरणा देती हैं।

भक्ति-पूजन साहित्य में अध्यात्म रस का परिपाक नई परम्परा नहीं है। प्राचीन पूजनों में भी सामग्री की प्रशंसा मुख्य होते हुए भी यत्र-तत्र अध्यात्म रस उछलता है। यथा :-

अज्ञान महातम छाय रहो, जब निज-पर परिणति नहीं सूझे।

अन्य अनेक पूजनों में भी अध्यात्म रस का परिपाक विशेषरूप से होता है। सिद्धचक्र विधान तो अध्यात्म की गंगा, भक्ति की यमुना और सिद्धान्त की सरस्वती की अद्भुत त्रिवेणी ही है।

आधुनिक हिन्दी में भाव प्रधान पूजनों की रचना करते हुए उनमें जैन तत्त्वज्ञान का समावेश करनेवालों में माननीय बाबू जुगलकिशोरजी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

'युगल' कोटा एवं डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर अग्रगण्य है। युगलजी कृत देव-शास्त्र-गुरु पूजन तो सम्पूर्ण दिगम्बर जैन समाज में एकछत्र राज्य कर रही है।

जड़कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी।
मैं रागी-द्वेषी हो लेता, जब परिणति होती है जड़ की।।

इन पंक्तियों में दो द्रव्यों के कर्ता-कर्म की भ्रांति का प्रक्षालन सहज हो गया है। इसी पूजा में गुरु का स्वरूप दर्शानेवाली पंक्तियाँ आज सारी समाज की पथ प्रदर्शक बनी हुई हैं।

बाबूजी द्वारा रचित "सिद्ध पूजन" का स्मरण मात्र अध्यात्म रसिक जनों को रोमांचित कर देता है।

माननीय डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल ने भी अपनी मात्र चार पूजनों में क्रमबद्धपर्याय, सात तत्त्व संबंधी भूल, इन्द्रियों तथा प्रकाश से ज्ञान की अनुत्पत्ति आदि गहन बिन्दुओं का समावेश किया है।

कविवर राजमलजी पवैया ने तो पूजन साहित्य की रचना को मानो अपना व्यसन बना लिया है। सैकड़ों पूजनों और विधानों की रचना करने पर भी ऐसा लगता है कि अभी तक उनका मन नहीं भरा। उनकी रचनाओं में भी कहीं-कहीं जैन सिद्धांतों के सूक्ष्म रहस्य एवं अध्यात्म रस का सुन्दर परिपाक दृष्टिगोचर होता है।

इसके अतिरिक्त अन्य लेखकों द्वारा रचित पूजनें भी उपलब्ध हैं, जिनमें भावपक्ष और कलापक्ष का स्तर कम अधिक होने पर भी वे युगलजी की परम्परा की अनुगामी सी दिखाई पड़ती हैं।

गत चार-पाँच वर्षों से ब्र. रवीन्द्रजी द्वारा रचित कुछ स्तवन और पूजनें मेरी जानकारी में आईं, जिनका संकलन मौ से प्रकाशित "जिनेन्द्र आराधना" में किया गया था। देव-शास्त्र-गुरु पूजन के अष्टकों तथा शान्तिनाथ पूजन की जयमाला ने तो मेरे भक्ति भावों में नया रस भरकर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मुझे झकझोर दिया। इनके पुन: शुद्ध प्रकाशन की भावना से नवम्बर २००६ में पण्डितजी से २०-२५ वर्षों के लम्बे अन्तराल के बाद प्रत्यक्ष चर्चा करने का अवसर प्राप्त हुआ।

इस संक्षिप्त समागम में उनके चिंतन का पैनापन, हृदय की सरलता, साधर्मी वात्सल्य एवं व्यक्तिगत प्रचार से विरक्ति आदि अनेक विशेषताओं का रसास्वादन करके ऐसा लगा कि इनके चिंतन का अधिकतम लाभ अवश्य लेना चाहिये।

जब उनसे अप्रकाशित पूजनों के प्रकाशन की अनुमति देने का अनुरोध किया गया तो उन्होंने भावना व्यक्त की कि उन्हें एकबार देखकर अपने विचार से उन्हें अन्तिम रूप देकर प्रकाशित करना चाहेंगे। उन पर गम्भीरता से विचार किए बिना जल्दबाजी में छपाना उन्हें मंजूर नहीं था, चाहे ये अप्रकाशित ही क्यों न रह जायें। स्वयं की रचनाओं के प्रकाशन में भी ऐसी उदासीनता देखकर मैं दंग रह गया। अपने प्रवचनों की सी.डी के बारे में भी उनका यही रुख मेरा पथ प्रदर्शक बन गया। इन रचनाओं को पढ़ने पर लगा कि पण्डितजी साहब की रचनाओं का उछलता हुआ गंभीर भक्तिभाव, प्रचुर अध्यात्म रस एवं सैद्धान्तिक रहस्यों पर गहन शोध करके ही उनका रहस्य खोला जा सकता है। फिर भी पाठकों का ध्यान आकर्षित करने हेतु सहज ज्ञात हुए कुछ बिन्दु यहाँ प्रस्तुत करना उचित समझता हूँ।

१. भक्ति-पूजन में जिनेन्द्र भगवान के उपकार की मुख्यता होती है। कविवर दौलतरामजी 'चाख्यो स्वातमरस दुख निकन्द' तथा 'शाश्वत आनन्द स्वाद पायो विनस्यो विषाद' जैसी पंक्तियों के माध्यम से पारमार्थिक फल की प्राप्ति रूप उपकार का वर्णन करते हैं। इसीप्रकार पण्डितजी भी 'हे शान्तिनाथ लख शान्तस्वरूप तुम्हारा, चित् शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा' तथा 'अज्ञान नसायो, समसुख पायो, जाननहार जनाय रहो' जैसी पंक्तियों के माध्यम से अनेक स्थलों पर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पारमार्थिक उपकार का वर्णन करते हैं। इससे पाठकों को भी निश्चय भक्ति प्रगट करने की प्रेरणा मिलती है।

२. अनेक स्थलों पर भगवान को चढ़ाई जानेवाली सामग्री का भी निश्चय फल क्या होता है – इस तथ्य का उल्लेख किया गया है। यथा:–

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन के जल एवं फल के छन्द में –

(अ) शाश्वत अस्तित्व स्वयं का लखकर जन्म-मरणभय दूर हुआ।

(ब) निर्वाञ्छक हो गया सहज मैं, निज में ही अब मुक्ति दिखी।

३. भक्ति के सहज प्रवाह में वीतरागी देव के नाम पर भी चिरकालीन मिथ्या मान्यताओं को चुनौती देते हुए पाठक की भाव भूमि से उन्हें नष्ट करने का अनुपम प्रयोग पार्श्वनाथ पूजन में सहज बन गया है।

प्राय: जगत लौकिक सुख संपत्ति की कामना से पार्श्वनाथ भगवान की पूजन करता है।

इस अज्ञान को निम्न पंक्तियों में सहज प्रक्षालित कर दिया गया है :–

तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वाँछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

इसी प्रकार नाग-नागिन प्रकरण पर भी सन्तुलित एवं सटीक विचार निम्न पंक्तियों में व्यक्त हुए हैं :–

जब नाग और नागिन तुम्हारे वचन उर धर सुर भये।
जो आपकी भक्ति करें वे दास उनके भी भये।।
वे पुण्यशाली भक्त जन की सहज बाधा को हरें।
आनन्द से पूजा करें वाँछा न पूजा की करें।।

इसी पूजन में पूज्य, पूजक, पूजा और पूजा-फल का सारगर्भित स्वरूप निम्न पंक्तियों के अलावा और कहाँ मिलेगा?

पूज्य ज्ञान-वैराग्य है पूजक श्रद्धावान।
पूजा गुण अनुराग अरु फल है सुख अम्लान ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. आधुनिक खड़ी बोली के साथ-साथ अनेक स्थलों पर प्राचीन पूजनों की भाषा का प्रयोग भी किया गया है। यथा महावीर पूजन में:-

इन्द्रादि नमन्ता, ध्यावत संता, सुगुण अनन्ता, अविकारी।
श्री वीर जिनन्दा, पाप निकन्दा, पूजों नित मंगलकारी॥

इसप्रकार पण्डितजी साहब द्वारा रचित समग्र रचनाओं पर गहन चिन्तन करके विस्तृत समीक्षा लिखने की आवश्यकता है।

सोलहकारण पूजन में बार-बार एक पंक्ति दोहराई गई है 'पूजूँ ध्याऊँ सुखकारी सोलहकारण दुखहारी।'

यहाँ आस्रव के कारणरूप भावनाओं की पूजा करने की बात कुछ लोगों को खटक सकती है। परन्तु इस सन्दर्भ में "चैतन्य की उपासना" पुस्तक में प्रकाशित बाबू युगलजी के लेख "जिनेन्द्र पूजन स्वरूप एवं समीक्षा" का निम्न अंश विचारणीय है।

"पंचकल्याणक एवं सोलहकारण आदि पूजा – सोलहकारण आदि भावना का भाव शुभभाव माना जाता है और उसे तीर्थंकर प्रकृति के बंध का हेतु भी आगम में कहा गया है और इसी प्रकार भगवान के गर्भ, जन्म आदि कल्याणकों के सम्बन्ध में प्रश्न हो सकता है। प्रश्न यह हो सकता है कि राग तो बंध का कारण है फिर उसकी पूजा कैसे की जाए ?

उत्तर – वास्तव में सोलहकारण आदि अकेला राग नहीं है, उसके साथ सम्यग्दर्शन एवं सम्यक्चारित्र भी विद्यमान रहता है, किन्तु सम्यग्दर्शन एवं सम्यक्चारित्र तो आत्माश्रित एक रूप वृत्तियाँ हैं; अतएव उनके वर्णन का विस्तार उनके साथ अनिवार्य रूप से रहने वाले शुभभाव रूप व्यवहार के बिना नहीं हो सकता।

अतः **सोलहकारण भावना की पूजा सचमुच राग पूजा नहीं वरन् वीतराग पूजा है,** जैसे चौसठ ऋद्धि पूजा में कुछ ही ऋद्धियाँ आत्मा की शुद्ध परिणति हैं, अधिकांश ऋद्धियाँ तो कर्मोदयजन्य हैं, फिर भी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ऋद्धिधारी मुनिराज की पूजा में उन सभी ऋद्धियों के द्वारा मुनिराज का यशोगान एवं पूजा की जाती है।

स्वयं भावलिंगी मुनिराज भी राग एवं वीतरागता के समुदाय होते हैं। अतएव यदि उक्त प्रश्न उठाया जाए तो फिर मुनिराज की पूजा भी कैसे होगी ? इसलिए वास्तविकता यह है कि पूजाओं में पूज्य की अन्तरंग एवं बहिरंग सभी विशेषताओं के द्वारा वीतरागता की पूजा होती है। भगवान अरहंत के छियालीस गुण होते हैं, किन्तु देखा जाए तो भगवान के अपने तो अनन्त चतुष्टय ही हैं शेष तो सब उदयजन्य हैं, फिर भी सभी गुणों के माध्यम से भगवान अरहन्त की पूजा की जाती है।[१]"

वास्तव में यह सम्पूर्ण निबन्ध ही बारम्बार पठनीय, मननीय, विचारणीय एवं प्रचारणीय है। इसका निम्न अंश तो हम सबकी आँखें खोलने में अति ही समर्थ है :–

"कुछ पूजाएँ ऐसी भी लिखी गई हैं जिनमें नित्य नियम की तीन पूजाओं को एक में ही घुसेड़ने का प्रयत्न किया गया है; किन्तु पूजा में ऐसी उतावल की आवश्यकता ही नहीं थी, क्योंकि कभी कदाचित् समय कम होने पर **एक ही पूजा से सारा काम हो जाता है, अनेक पूजाएँ करने का अर्थ अनेक देवों की पूजा करना नहीं होता** और न पूजाओं की गिनती पूरा करना होता है, वरन् पूजा करने के लिए खड़े हुए गृहस्थ श्रावक का मन एक पूजा से भरता ही नहीं है; अतएव अनेक पूजाओं के बहाने सचमुच तो वह भाव विशुद्धि की मानसिक खुराक को ही पूरा करता है।

ऐसी पूजाओं में भी यह देखा जाता है कि न तो उनके शब्दों में भावों की स्फुरणा है और न काव्यत्व है, किन्तु अनेक पूजाओं का अनुकरण मात्र करके लिखने और छपने के लिए ही वे पूजाएँ लिखी गई हैं।[२]

१. चैतन्य की उपासना पृष्ठ ४३-४४, २. चैतन्य की उपासना पृष्ठ ४१

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समाज में अब पूजन-पाठ-भजन आदि के संकलनों की कमी नहीं है। फिर भी अधिकतम उपयोगी संकलन का स्थान रिक्त ही है; जिसमें स्तरीय रचनायें हों और पृष्ठ संख्या भी इतनी अधिक न हो कि उन्हें उठाना-धरना कठिन हो जाए – ऐसे संकलन के प्रकाशन की आवश्यकता सदैव महसूस होती रही। अभी-अभी श्री कुन्दकुन्द कहान स्मृति प्रकाशन ट्रस्ट विदिशा ने अपनी 'अध्यात्म पूजांजलि' में पण्डितजी की अधिकाधिक रचनाओं को प्रकाशित कर समाज को यह अमूल्य निधि उपलब्ध कराई है।

प्रस्तुत संकलन में मात्र पण्डितजी साहब की रचनाओं का ही समावेश किया गया है, ताकि पृष्ठ संख्या सीमित हो सके। अपवाद के रूप में कुछ विशिष्ट उपयोगी और लोकप्रिय रचनायें अन्तिम खण्ड में प्रकाशित की गई हैं। शेष रचनायें अन्य संकलनों में उपलब्ध हैं ही।

पण्डितजी साहब द्वारा रचित चौबीस तीर्थंकर विधान से इस संकलन की उपयोगिता बहुत बढ़ गई है। विधान के माध्यम से ५-६ दिन में ही सभी पूजनों का रसास्वादन किया जा सकेगा। कुछ महत्वपूर्ण दर्शन-स्तुतियाँ तथा आध्यात्मिक पाठ भी इस संकलन की उपयोगिता में वृद्धि करेंगे।

इस संकलन में प्रकाशित रचनायें अध्यात्म रसिक साधर्मीजनों को न केवल भक्ति रस का पान करायेंगी, अपितु आत्मानुभूति सम्पन्न ज्ञानी भक्त की अन्तर्परणति का दर्शन कराते हुए स्वयं को वैसा बनने की प्रेरणा देंगी।

सभी जीव पूज्य का स्वरूप जानकर सच्चे पुजारी बनकर पूजा का पारमार्थिक फल प्राप्त करें– यही मंगल भावना है।

– अभयकुमार जैन, देवलाली

अपने को आत्मा नहीं देखना विश्व की सबसे बड़ी गल्ती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री देव-शास्त्र-गुरु स्तुति (खण्ड-१)

नवदेव-भक्ति

द्रव्य नमन हो भाव नमन, मन वच काया से करूँ नमन।
मन वच काया से करूँ नमन ॥टेक॥

तीर्थ प्रणेता श्री तीर्थंकर, वीतराग सर्वज्ञ हितंकर।
अरहंतों को करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥१॥

सर्व कर्ममल से वर्जित प्रभु, ज्ञानशरीरी अशरीरी विभु।
सिद्ध प्रभु को करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥२॥

पंचाचार परायण ज्ञायक, साधु संघ के सुखमय नायक।
आचार्यों को करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥३॥

शास्त्र पढ़ाने के अधिकारी, तत्त्वज्ञान देते अविकारी।
उपाध्याय को करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥४॥

निज स्वभाव के उत्तम साधक, रत्नत्रय के जो हैं धारक।
निर्ग्रन्थों को करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥५॥

समवशरण-सम श्रीजिनमन्दिर, जिन-सम जिनप्रतिमा है सुन्दर।
भक्ति भाव से करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥६॥

तरण-तारणी श्री जिनवाणी, पढ़ें-पढ़ावें नित ही ज्ञानी।
हर्षित होकर करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥७॥

अनेकांतमय शाश्वत दर्शन, परम अहिंसामयी आचरण।
जैनधर्म को करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥८॥

इनसे सम्बन्धित सुखकारी, धर्म आयतन मंगलकारी।
यथायोग्य मैं करूँ नमन, मन वच काया से करूँ नमन ॥९॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिन-भक्ति

घड़ी जिनराज दर्शन की, हो आनंदमय हो मंगलमय,
घड़ी यह सत्समागम की, हो आनंदमय हो मंगलमय ॥१॥

अहो प्रभु भक्ति जिनपूजा, और स्वाध्याय तत्त्व-निर्णय,
भेद-विज्ञान स्वानुभूति, हो आनंदमय हो मंगलमय॥२॥

असंयम भाव का त्यागन, सहज संयम का हो पालन,
अनूपम शान्त जिन-मुद्रा, हो आनंदमय हो मंगलमय॥३॥

क्षमादिक धर्म स्वाश्रय से, सहज वर्तें सदा वर्तें,
परम निर्ग्रन्थ मुनि जीवन, हो आनंदमय हो मंगलमय॥४॥

हो अविचल ध्यान आतम का, कर्म बंधन सहज छूटें,
अचल ध्रुव सिद्ध पद प्रगटे, हो आनंदमय हो मंगलमय॥५॥

जिन-भक्ति

शुभ काललब्धि जागी भगवन, मैं पास आपके आया हूँ।
जागा है स्वपर विवेक अहो, निज महिमा लखि हर्षाया हूँ॥१॥

जिनवर गुणगान अहो निजगुण, चिन्तन का एक बहाना है।
तुम साक्षी में प्रभुवर मुझको, निज शुद्धातम को ध्याना है॥२॥

मैं नहीं अन्य कुछ तुम-सम प्रभु, चिन्मूरति श्रद्धा आई है।
स्थिर स्वरूप आनन्दमयी, कृतकृत्य दृष्टि प्रगटाई है॥३॥

मैं कालातीत अखण्ड अनादि, अविनाशी ज्ञायक प्रभु हूँ।
प्रतिसमय-समय में पूर्ण अहो, ज्ञाता-दृष्टा ज्ञायक ही हूँ॥४॥

आनन्द प्रवाह अजस्र बहे, मैं सहज स्वयं आनन्दमय हूँ।
आनन्दमयी मेरा जीवन, मैं तो सदैव आनन्दमय हूँ॥५॥

ममज्ञान में ज्ञान ही भासित हो, फिर लोकालोक भले झलके।
पर्यय निज में ही मग्न रहे, वस कालावली अनन्त बहे॥६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिन-भक्ति

धन्य घड़ी मैं दर्शन पाया, आज हृदय में आनन्द छाया।
श्री जिनबिम्ब मनोहर लखकर, जिनवररूप प्रत्यक्ष दिखाया ॥१॥

मुद्रा सौम्य अखण्डित दर्पण, में निजभाव अखण्ड लखाया।
निज महिमा सर्वोत्तम लखकर, फूला उर में नहीं समाया ॥२॥

राग प्रतीक जगत में नारी, शस्त्र द्वेष का चिह्न बताया।
वस्त्र वासना के लक्षण हैं, इन बिन निर्विकार है काया ॥३॥

जग से निस्पृह अन्तर्दृष्टि, लोकालोक तदपि झलकाया।
अद्भुत स्वच्छ ज्ञानदर्पण में, मुझको ज्ञानहि ज्ञान सुहाया ॥४॥

कर पर कर देखे मैं जब से, नहिं कर्तृत्वभाव उपजाया।
आसन की स्थिरता ने प्रभु, दौड़-धूप का भाव भगाया ॥५॥

निष्कलंक अरु पूर्ण विरागी, एकहि रूप मुझे प्रभु भाया।
निश्चय यही स्वरूप सु मेरा, अन्तर में प्रत्यक्ष मिलाया ॥६॥

जिनमुद्रा दृष्टि में वस गई, भव स्वाँगों से चित्त हटाया।
'आत्मन्' यही दशा सुखकारी, होवे भाव हृदय उमगाया ॥७॥

जिन-भक्ति

कैसी सुन्दर जिनप्रतिमा है, कैसा है सुन्दर जिनरूप।
जिसे देखते सहज दीखता, सबसे सुन्दर आत्मस्वरूप ॥ टेक ॥

नग्न दिगम्बर नहीं आडम्बर, स्वाभाविक है शांत स्वरूप।
नहीं आयुध नहीं वस्त्राभूषण, नहीं संग नारी दुखरूप ॥कैसी.॥

बिन शृङ्गार सहज ही सोहे, त्रिभुवन माँहीं अतिशय रूप।
कायोत्सर्ग दशा अविकारी, नासादृष्टि आनन्दरूप ॥कैसी.॥

अर्हत् प्रभु की याद दिलाती, दर्शाती अपना प्रभु रूप।
बिन बोले ही प्रगट कर रही, मुक्तिमार्ग अक्षय सुखरूप ॥कैसी.॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिसे देखते सहज नशावें, भव-भव के दुष्कर्म विरूप।
भावों में निर्मलता आवे, मानो हुये स्वयं जिनरूप।।कैसी.।।

महाभाग्य से दर्शन पाया, पाया भेद-विज्ञान अनूप।
चरणों में हम शीश नवावें, परिणति होवे साम्यस्वरूप।।कैसी.।।

प्रभु-दर्शन

अद्भुत प्रभुता आज निहारी, आनन्द उर न समाया है।
मानों रंक लही चिन्तामणि, त्यों निज वैभव पाया है।।१।।

ध्रुव चैतन्यमयी जीवन लख, जन्म अरु मरण नशाया है।
दर्शन ज्ञान चक्षु दो शाश्वत, लोकालोक दिखाया है।।२।।

सुख शक्ति देखी क्या मानों, सुख सागर लहराया है।
निज सामर्थ्य अनन्त निहारी, ओर-छोर नहिं पाया है।।३।।

अब स्वाधीन अखण्ड प्रतापी, शोभायुत प्रभु भाया है।
निज के सब भावों में व्यापक, विभु प्रत्यक्ष दिखाया है।।४।।

सदा प्रकाशित परम स्वच्छ, मोहान्धकार विनशाया है।
स्वानुभूति से निज अन्तर में, निजानंद रस पाया है।।५।।

अध्यवसान मुक्ति का भी नहिं, मुक्त स्वरूप दिखाया है।
परमतृप्ति उपजी अब मेरे, निज में सर्वस्व पाया है।।६।।

हो निस्पृह उपकारी प्रभुवर, निजपद हमें दिखाया है।
भावसहित वन्दन हे जिनवर, ये रहस्य दरशाया है।।७।।

दर्शाती जयवंत प्रभु नित...

दर्शाती जयवंत प्रभु नित, जिनवाणी जयवंत रहे।।टेक।।

दर्शाती निज अक्षय वैभव, दर्शाती निज शाश्वत प्रभुता।
दर्शाती आनन्दमय ज्ञायक, जिनवाणी जयवंत रहे।।१।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सब संसार असार दिखाती, सारभूत समयसार दिखाती।
साँचा मुक्तिमार्ग द्रिखाती, जिनवाणी जयवंत रहे॥२॥

नव तत्त्वों का स्वांग दिखाती, भिन्न सहज चिद्रूप दिखाती।
ज्ञानमात्र शिवरूप दिखाती, जिनवाणी जयवंत रहे॥३॥

अन्तर द्रव्य दृष्टि प्रकटाती, अनेकांतमय ज्योति जगाती।
परम अहिंसा ध्वज फहराती, जिनवाणी जयवंत रहे॥४॥

सत्य शील सन्तोष जगाती, अविनाशी सुख शांति दिखाती।
भाव नमन हो सहज नमंन हो, जिनवाणी जयवंत रहे॥५॥

माँ जिनवाणी मुझ अन्तर में...

माँ जिनवाणी मुझ अन्तर में, होकर मुझ रूप समा जाओ।
शान्त शुद्ध ध्रुव ज्ञायकं प्रभु की, महिमा प्रतिक्षण दर्शाओ॥टेक॥

चैतन्य नाथ की बात सुने से, अद्भुत शान्ति मिलती है।
मानो निज वैभव प्रकट हुआ, सब आधि-व्याधि टलती है॥१॥

ज्ञायक महिमा सुनते-सुनते, बस ज्ञायकमय जीवन होवे।
निज ज्ञायक में ही रम जाऊँ, सुनने का भाव विलय होवे॥२॥

हे माँ तेरा उपकार यही, प्रभु सम प्रभु रूप दिखाया है।
चैतन्य रूप की बोधक माँ, मैं सविनय शीश नवाया है॥३॥

धन्य-धन्य मुनिवर का जीवन...

धन्य-धन्य मुनिवर का जीवन, होवे प्रचुर आत्म संवेदन।
धन्य-धन्य जग में शुद्धातम, धन्य अहो आतम आराधन॥१॥

होय विरागी सब परिग्रह तज, शुद्धोपयोग धर्म का धारन।
तीन कषाय चौकड़ी विनशी, सकल चरित्र सहज प्रगटावन॥२॥

अप्रमत्त होवें क्षण-क्षण में परिणति निज स्वभाव में पावन।
क्षण में होय प्रमत्तदशा फिर मूल अट्ठाईस गुण का पालन॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पञ्च महाव्रत पञ्च समिति धर, पञ्चेन्द्रिय जय जिनके पावन।
षट् आवश्यक शेष सात गुण, बाहर दीखे जिनका लक्षण ॥४॥

विषय कषायारम्भ रहित हैं, ज्ञान ध्यान तप लीन साधुजन।
करुणा बुद्धि होय भव्यों प्रति, करते मुक्ति मार्ग सम्बोधन ॥५॥

रचना शुभ शास्त्रों की करते,निरभिमान निस्पृह जिनका मन।
आत्मध्यान में सावधान हैं, अद्भुत समतामय है जीवन ॥६॥

घोर परिषह उपसर्गों में, चलित न होवे जिनका आसन।
अल्पकाल में वे पावेंगे, अक्षय, अचल, सिद्ध पद पावन ॥७॥

ऐसी दशा होय कब 'आत्मन्', चरणों में हो शत-शत वंदन।
मैं भी निज में ही रम जाऊँ, गुरुवर समतामय हो जीवन ॥८॥

धन्य मुनिराज की समता...

धन्य मुनिराज की समता, धन्य मुनिराज का जीवन।
धन्य मुनिराज की थिरता, प्रचुर वर्ते स्वसंवेदन ॥टेक॥

शुद्ध चिद्रूप अशरीरी लखें, निज को सदा निज में।
सहज समभाव की धारा, बहे मुनिवर के अंतर में॥
है पावन अन्तरंग जिनका, है बहिरंग भी सहज पावन॥ धन्य...॥१॥

कर्मफल के अवेदक वे, परम आनंद रस वेदें।
कर्म की निर्जरा करते, बढ़े जायें सु शिवमग में॥
मुक्ति पथ भव्य प्रकटावें, अहो करके सहज दर्शन॥ धन्य... ॥२॥

परम ज्ञायक के आश्रय से, तृप्त निर्भय सहज वर्तें।
अवांछक निस्पृही गुरुवर, नवाऊँ शीश चरणन में॥
अन्तरंग हो सहज निर्मल, गुणों का होय जब चिन्तन॥ धन्य...॥३॥

जगत के स्वांग सब देखे, नहीं कुछ चाह है मन में।
सुहावे एक शुद्धातम, आराधूँ होंस है मन में॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होय निर्ग्रन्थ आनन्दमय, आपसा मुक्तिमय जीवन ॥ धन्य... ॥४॥

भावना सहज ही होवे, दर्श प्रत्यक्ष कब पाऊँ।
नशे रागादि की वृत्ति, अहो निज में ही रम जाऊँ॥
मिटे आवागमन होवे, अचल ध्रुव सिद्धगति पावन ॥धन्य...॥५॥

जंगल में मुनिराज अहो...

जंगल में मुनिराज अहो मंगल स्वरूप निज ध्यावें।
बैठ समीप संत चरणों में, पशु भी बैर भुलावें ॥टेक॥

अरे सिंहनी गौ-वत्सों को, स्तनपान कराती।
हो निशंक गौ सिंह-सुतों पर, अपनी प्रीति दिखाती॥
न्योला अहि मयूर सब ही मिल, तहाँ आनन्द मनावें ॥बैठ समीप संत. ॥१॥

नहीं किसी से भय जिनको, जिनसे भी भय न किसी को।
निर्भय ज्ञान गुफा में रह, शिव-पथ दर्शाय सभी को॥
जो विभाव के फल में भी, ज्ञायकस्वभाव निजध्यावें ॥बैठ समीप संत. ॥२॥

वेदन जिन्हें असंग ज्ञान का, नहीं संग में अटकें।
कोलाहल से दूर स्वानुभव, परम सुधारस गटकें॥
भवि दर्शन उपदेश श्रवण कर, जिनसे शिवपद पावें ॥बैठ समीप संत. ॥३॥

ज्ञेयों से निरपेक्ष ज्ञानमय, अनुभव जिनका पावन।
शुद्धातम दर्शाती वाणी, प्रशम मूर्ति मन भावन॥
अहो जितेन्द्रिय गुरू अतीन्द्रिय, ज्ञायक गुरु दरशावें ॥बैठ समीप संत. ॥४॥

निज ज्ञायक ही निश्चय गुरुवर, अहो दृष्टि में आया।
स्वयं सिद्ध ज्ञानानन्द सागर, अन्तर में लहराया॥
नित्य निरंजन रूप सुहाया, जाननहार जनावें॥ बैठ समीप संत. ॥५॥

पर-पदार्थों की चाह होना, पर की प्रतिष्ठा देखकर उससे उसे महान मानना – इसप्रकार की सोच इत्यादि यह मोह को चाहना है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वनवासी सन्तों को नित....

वनवासी सन्तों को नित ही, अगणित बार नमन हो।
द्रव्य-नमन हो भाव-नमन हो, अरु परमार्थ-नमन हो ॥टेक॥
गृहस्थ अवस्था से मुख मोड़ा, सब आरम्भ परिग्रह छोड़ा।
ज्ञान ध्यान तप लीन मुनीश्वर, अगणित बार नमन हो ॥१॥
जग विषयों से रहे उदासी, तोड़ी जिनने आशा पाशी।
ज्ञानानंद विलासी गुरुवर, अगणित बार नमन हो ॥२॥
अहंकार ममकार न लावें, अंतरंग में निज पद ध्यावें।
सहज परम निर्ग्रन्थ दिगम्बर, अगणित बार नमन हो ॥३॥
ख्यातिलाभ की नहिं अभिलाषा, सारभूत शुद्धातम भासा।
आतमलीन विरक्त देह से, अगणित बार नमन हो ॥४॥
उपसर्गों में नहिं अकुलावें, परीषहों से नहीं चिगावें।
सहज शान्त समता के धारक, अगणित बार नमन हो ॥५॥
जिनशासन का मर्म बतावें, शाश्वतसुख का मार्ग दिखावें।
अहो-अहो जिनवर से मुनिवर, अगणित बार नमन हो ॥६॥
ऐसा ही पुरुषार्थ जगावें, धनि निर्ग्रन्थ दशा प्रगटावें।
समय-समय निर्ग्रन्थ रूप का, सहजपने सुमिरन हो ॥७॥

गुरु निर्ग्रन्थ परिग्रह....

गुरु निर्ग्रन्थ परिग्रह त्यागी, भव-तन-भोगों से वैरागी।
आशा पाशी जिनने छेदी, आनंदमय समता रस वेदी ॥१॥
ज्ञान-ध्यान-तप लीन रहावें, ऐसे गुरुवर मोकों भावें।
हरष-हरष उनके गुण गाऊँ, साक्षात् दर्शन मैं पाऊँ ॥२॥
उनके चरणों शीश नवाकर, ज्ञानमयी वैराग्य बढ़ाकर।
उनके ढिंग ही दीक्षा धारूँ, अपना पंचमभाव संभारूँ ॥३॥
सकलप्रपंच रहित हो निर्भय, साधूँ आतमप्रभुता अक्षय।
ध्यान अग्नि में कर्म जलाऊँ, दुखमय आवागमन नशाऊँ ॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री नित्य-नैमित्तिक पूजन (खण्ड-२)

प्रतिमा प्रक्षाल पाठ

(दोहा)

धन्य दिवस है आज का, धन्य घड़ी है आज।
करें प्रभो प्रक्षाल हम, भाव विशुद्धि काज ॥१॥

(तर्ज- तुम्हारे दर्श बिन स्वामी)

परम पावन अहो जिनवर, जगत की कलुषता हरते।
स्वयं रागादि मल हरते, प्रभो ! प्रक्षाल हम करते ॥२ ॥

स्वयं की साधना करके, त्रिजग की पूज्यता पाई।
पूज्यता स्वयं की लखकर, प्रभो पूजा सहज करते ॥३ ॥

निहारें शान्त मुद्रा जब, नेत्र पावन सहज होते।
हाथ होते सहज पावन, चरण-स्पर्श जब करते ॥४ ॥

करें गुणगान भक्ति से, होय रसना तभी पावन।
सहज ही चित्त हो पावन, प्रभु का ध्यान जब धरते ॥५ ॥

जन्म कल्याण में स्वामी, किया अभिषेक इन्द्रों ने।
लगाया माथे गंधोदक, शीश जय-जय ध्वनि करते ॥६ ॥

किन्तु स्नान ही त्यागा, धरी निर्ग्रंथ दीक्षा जब।
ध्यान धारा सहज वर्ते, प्रभु सब कर्म मल हरते ॥७ ॥

पूर्ण निर्दोष निर्मल हो, तीर्थ प्रभु आप प्रगटाया।
बहायी ज्ञानमय गंगा, भव्य स्नान शुभ करते ॥८ ॥

अहो कैसा समय होगा, याद कर हर्ष उमगाता।
महा आनंद से हम भी, अर्चना नाथ की करते ॥९ ॥

धन्य जिनबिम्ब है जग में, अहो चिद्बिम्ब दर्शाते।
नीर प्रासुक ही लेकर हम, प्रभो प्रक्षाल शुभ करते ॥१० ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यत्न से करते परिमार्जन, प्रभो रोमांच तन में हो।
आत्मप्रभुता झलकती है, अर्घ्य चरणों में जब धरते ॥११॥

संजोए भावना स्वामी, होंय हम भी प्रभु के सम।
लगावें शीश गंधोदक, अहो जिन-रूप उर धरते ॥१२॥

(दोहा)

लोकोत्तम मंगलमयी, अनन्य शरण जिननाथ।
प्रभु चरणों में शीश धर, हम भी हुए सनाथ ॥१३॥

विनय पाठ

सफल जन्म मेरा हुआ, प्रभु दर्शन से आज।
भव समुद्र नहिं दीखता, पूर्ण हुए सब काज ॥१॥

दुर्निवार सब कर्म अरु, मोहादिक परिणाम।
स्वयं दूर मुझसे हुए, देखत तुम्हें ललाम ॥२॥

संवर कर्मों का हुआ, शान्त हुए गृह जाल।
हुआ सुखी सम्पन्न मैं, नहिं आये मम काल ॥३॥

भव कारण मिथ्यात्व का, नाशक ज्ञान सुभानु।
उदित हुआ मुझमें प्रभो, दीखे आप समान ॥४॥

मेरा आत्मस्वरूप जो, ज्ञानादिक गुण खान।
आज हुआ प्रत्यक्ष सम, दर्शन से भगवान ॥५॥

दीन भावना मिट गई, चिन्ता मिटी अशेष।
निज प्रभुता पाई प्रभो, रहा न दुख का लेश ॥६॥

शरण रहा था खोजता, इस संसार मँझार।
निज आतम मुझको शरण, तुमसे सीखा आज ॥७॥

निज स्वरूप में मगन हो, पाऊँ शिव अभिराम।
इसी हेतु मैं आपको, करता कोटि प्रणाम ॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैं वन्दौं जिनराज को, धर उर समता भाव।
तन-धन-जन-जगजाल से, धरि विरागता भाव॥९॥

यही भावना है प्रभो, मेरी परिणति माहिं।
राग-द्वेष की कल्पना, किंचित् उपजै नाहिं॥१०॥

पूजा पीठिका (भाषा)

(छन्द-सखी)

अरहन्त सिद्ध सूरि नामा, उवझाय साधु गुणधामा।
परमेष्ठी पद सुखकारी, पूजन करिहों दुःखहारी॥

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

(छन्द-झूलना)

चार मंगल शरण श्रेष्ठ हैं लोक में,
आप्त अविनाशी साधु दयामय धरम।
अन्य में ढूँढना सुख दुःखकार है,
वे स्वयं सुख रहित सुख न उनका मरम॥
हे प्रभो आपको निरख निश्चय हुआ,
शरण अपनी से कटते स्वयं सब करम।
बाह्य दृष्टि तजूँ अब निजातम भजूँ,
लीन निज में हुए से मिले पद परम॥

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

मंगल विधान (भाषा)

हूँ द्रव्यदृष्टि से अति पवित्र, परिणति ही मात्र अपावन है।
चिर से ही पर में भ्रमित रही, शुचिकारी तव आराधन है॥

हे प्रभो ! शान्त नासाग्र दृष्टि, थिर मुद्रा हमें बताती है।
शान्ति शुचिता अन्तर में है, बाहर से कभी न आती है॥

है रूप हमारा मंगलमय, आराध्य हमारे मंगलमय।
रागादि विकारी भाव भगें, परिणति भी होवे मंगलमय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तुम नाम मंत्र है मंगलमय, हे कर्ममुक्त ! तुम मंगलमय।
सम्यक्त्व आदि गुण युक्त सिद्ध मैं नमन करूँ हे मंगलमय॥
हों दुःख सभी तत्क्षण विनष्ट, प्रभु नाम मात्र है मंगलमय।
डाकिनि, भूत पिशाच, नागगद सभी दूर हों हे शिवमय॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि॥

जिनसहस्रनाम अर्घ्य

गुण अनन्त हैं प्रभो आपके, मेरी है सामर्थ्य कहाँ।
सहस्रनाम से अर्चन करके, अर्घ्य चढ़ाऊँ आज यहाँ॥

ॐ ह्रीं भगवज्जिनस्याऽष्टाधिकसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

(तर्ज-इन्साफ की डगर पे...)

जो तीन लोक स्वामी मुक्ति रमापति हैं।
हैं स्याद्वाद नायक, सानन्त चार जो हैं॥
कर वन्दना उन्हीं की, पूजा विधि करूँगा।
जो भव्य प्राणियों को, हैं पुण्य बन्ध हेतु॥
निज आत्मरूप महिमा, जिनने प्रकट दिखाई।
ऐसे त्रिलोक गुरु-पुंगव, नित्य स्वस्ति दायक॥
उन पूर्ण ज्ञान दर्शन आनन्द वीर्य वैभव।
दें प्रेरणा सतत, वे गुरु मुक्ति हेतु मुझको॥
मैं द्रव्यद्रष्टि से हूँ परिपूर्ण शुद्ध सुखमय।
पर्याय शुद्धि हेतु, अवलम्ब मैंने लीना॥
बहु युक्तियों से अब तो, रागादि कर विनष्ट।
भूतार्थ यज्ञ द्वारा, मैं भी प्रभु बनूँगा॥
अर्हत् पुराण पुरुषोत्तम, हे जगत हितंकर।
सब वस्तुयें तजूँगा, निज पूर्ण ज्ञान हेतु॥
नित पुण्य-पाप द्वारा परिणति हुई विकारी।
मैं पाप तो तजा है, अब पुण्य भी तजूँगा॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन सुमति सुमतिप्रदायक हैं।
श्री पद्मप्रभ अरु श्रीसुपार्श्व, चन्द्रप्रभ स्वस्ति दायक हैं॥
श्री पुष्पदंत शीतल श्रेयांस, श्री वासुपूज्य और विमल प्रभु।
श्री अनन्त धर्म और शान्ति कुंथु, मंगलमय मुक्ति विधायक हैं॥
अरनाथ मल्लि मुनिसुव्रतजी, नमिनाथ नेमि अरु पार्श्वप्रभु।
श्री वर्द्धमान जिन सुखवर्द्धक, निज पर विवेक प्रगटायक हैं॥
इन सम ही जड़ वैभव तजकर, सम्यक्त्वी इच्छामुक्त बनें।
निज का पुरुषार्थ मूल कारण, ये ही व्यवहार सहायक हैं॥
हो जिनवाणी अभ्यास सदा, तत्त्वों का सम्यक् निर्णय हो।
रागादि विकारी भाव भगें, जिनवाणी स्वस्ति दायक हो॥
द्रव्यानुयोग चरणानुयोग से, सत् श्रद्धा चारित्र धरें।
प्रथमानुयोग, करणानुयोग, दृग-ज्ञान-वृत्ति दृढ़ स्वच्छ करें॥
हैं बुद्धि ऋद्धियाँ प्रकट जिन्हें, पर लक्ष्य नहीं उन पर जिनका।
तप घोर करें आकाश चलें, है पार नहीं जिनके बल का॥
मन-वाँछित रूप बना सकते, भारी हल्का, लम्बा छोटा।
जो सर्वौषधियों की निधि हैं, ऋद्धि अक्षीण से ना टोटा॥
पर नहीं प्रयोग करें इनका, निजख्याति लाभ पूजा हेतु।
उन सम जड़ वैभव ठुकराऊँ, तब होवें वे मुक्ति सेतु॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि॥

जिनेन्द्र-अभिषेक स्तुति : पं. राजमलजी पवैया

मैंने प्रभु जी के चरण पखारे।
जनम-जनम के संचित पातक तत्क्षण ही निरवारे॥१॥
प्रासुक जल के कलश श्री जिनप्रतिमा ऊपर ढारे।
वीतराग अरिहंत देव के गूंजे जय-जयकारे॥२॥
चरणाम्बुज स्पर्श करत ही छाये हर्ष अपारे!
पावन तन-मन-नयन भये सब दूर भये अंधियारे॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन

(दोहा)

देव-शास्त्र-गुरुवर अहो, मम स्वरूप दर्शाय।
किया परम उपकार मैं, नमन करूँ हर्षाय॥
जब मैं आता आप ढिंग, निज स्मरण सु आय।
निज प्रभुता मुझमें प्रभो, प्रत्यक्ष देय दिखाय॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(वीरछन्द)

जब से स्व-सन्मुख दृष्टि हुई, अविनाशी ज्ञायक रूप लखा।
शाश्वत अस्तित्व स्वयं का लखकर जन्म-मरणभय दूर हुआ॥
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

निज परमतत्त्व जब से देखा, अद्भुत शीतलता पाई है।
आकुलतामय संतप्त परिणति, सहज नहीं उपजाई है॥श्री देव..॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

निज अक्षयप्रभु के दर्शन से ही, अक्षयसुख विकसाया है।
क्षत् भावों में एकत्वपने का, सर्व विमोह पलाया है॥श्री देव..॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम परम ज्ञायक प्रभुवर, जब से दृष्टि में आया है।
विभु ब्रह्मचर्य रस प्रकट हुआ, दुर्दान्त काम विनशाया है॥श्री देव..॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

मैं हुआ निमग्न तृप्ति सागर में, तृष्णा ज्वाल बुझाई है।
क्षुधा आदि सब दोष नशें, वह सहज तृप्ति उपजाई है॥श्री देव..॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निजज्ञान भानु का उदय हुआ, आलोक सहज ही छाया है।
चिरमोह महातम हे स्वामी, इस क्षण ही सहज विलाया है॥
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

निज द्रव्य-भाव-नोकर्म शून्य, चैतन्य प्रभु जब से देखा।
शुद्ध परिणति प्रकट हुई, मिटती परभावों की रेखा॥श्री देव..॥

ॐह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपम् निर्वपामीति स्वाहा।

अहो पूर्ण निज वैभव देखा, नहीं कामना शेष रही।
निर्वाञ्छक हो गया सहज मैं, निज में ही अब मुक्ति दिखी॥श्री देव..॥

ॐह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज से उत्तम दिखे न कुछ भी, पाई निज अनर्घ्य माया।
निज में ही अब हुआ समर्पण, ज्ञानानन्द प्रकट पाया॥श्री देव..॥

ॐह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

ज्ञानमात्र परमात्मा, परम प्रसिद्ध कराय।
धन्य आज मैं हो गया, निज स्वरूप को पाय॥

(हरिगीत-छन्द)

चैतन्य में ही मग्न हो, चैतन्य दरशाते अहो।
निर्दोष श्री सर्वज्ञ प्रभुवर, जगत्साक्षी हो विभो॥
सच्चे प्रणेता धर्म के, शिवमार्ग प्रकटाया प्रभो।
कल्याण वाँछक भविजनों, के आप ही आदर्श हो॥
शिवमार्ग पाया आप से, भवि पा रहे अरु पायेंगे।
स्वाराधना से आप सम ही, हुए हो रहे होयेंगे॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तव दिव्यध्वनि में दिव्य-आत्मिक , भाव उद्घोषित हुए।
गणधर गुरु आम्नाय में, शुभ शास्त्र तब निर्मित हुए॥

निर्ग्रन्थ गुरु के ग्रन्थ ये, नित प्रेरणायें दे रहे।
निजभाव अरु परभाव का, शुभ भेदज्ञान जगा रहे॥

इस दुषम भीषण काल में, जिनदेव का जब हो विरह।
तब मात सम उपकार करते, शास्त्र ही आधार हैं॥

जग से उदास रहें स्वयं में, वास जो नित ही करें।
स्वानुभव मय सहज जीवन, मूल गुण परिपूर्ण हैं॥

नाम लेते ही जिन्हों का, हर्ष मय रोमाँच हो।
संसार-भोगों की व्यथा, मिटती परम आनन्द हो॥

परभाव सब निस्सार दिखते, मात्र दर्शन ही किए।
निजभाव की महिमा जगे, जिनके सहज उपदेश से॥

उन देव-शास्त्र-गुरु प्रति, आता सहज बहुमान है।
आराध्य यद्यपि एक, ज्ञायकभाव निश्चय ज्ञान है॥

प्रभु ! अर्चना के काल में भी, भावना ये ही रहे।
धन्य होगी वह घड़ी, जब परिणति निज में रहे॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

अहो कहाँ तक मैं कहूँ, महिमा अपरम्पार।
निज महिमा में मगन हो, पाऊँ पद अविकार॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि॥

जिंदगी छोटी है और जंजाल लंबा है, इसलिए जंजाल छोटा कर लो तो सुखरूप जिंदगी लम्बी लगेगी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री वीतराग पूजन

(दोहा)

शुद्धातम में मगन हो, परमातम पद पाय।
भविजन को शुद्धात्मा, उपादेय दरशाय॥
जाय बसे शिवलोक में, अहो अहो जिनराज।
वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, आयो पूजन काज॥

ॐ ह्रीं श्री वीतराग देव ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री वीतराग देव ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री वीतराग देव ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

ज्ञानानुभूति ही परमामृत है, ज्ञानमयी मेरी काया।
है परम पारिणामिक निष्क्रिय, जिसमें कुछ स्वाँग न दिखलाया॥
मैं देख स्वयं के वैभव को, प्रभुवर अति ही हर्षाया हूँ।
अपनी स्वाभाविक निर्मलता, अपने अन्तर में पाया हूँ॥
थिर रह न सका उपयोग प्रभो, बहुमान आपका आया है।
समतामय निर्मल जल ही प्रभु, पूजन के योग्य सुहाया है॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय जन्मजरामृत्यु-रोगविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

है सहज अकर्त्ता ज्ञायक प्रभु, ध्रुव रूप सदा ही रहता है।
सागर की लहरों सम जिसमें, परिणमन निरन्तर होता है॥
हे शान्ति सिन्धु ! अवबोधमयी, अद्भुत तृप्ति उपजाई है।
अब चाह दाह प्रभु शमित हुई, शीतलता निज में पाई है॥
विभु अशरण जग में शरण मिले, बहुमान आपका आया है।
चैतन्य सुरभिमय चन्दन ही, पूजन के योग्य सुहाया है॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अब भान हुआ अक्षय पद का, क्षत् का अभिमान पलाया है।
प्रभु निष्कलंक निर्मल ज्ञायक अविचल अखण्ड दिखलाया है।
जहाँ क्षायिकभाव भी भिन्न दिखे, फिर अन्यभाव की कौन कथा।
अक्षुण्ण आनन्द निज में विलसे, नि:शेष हुई अब सर्व व्यथा॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अक्षय स्वरूप दातार नाथ, बहुमान आपका आया है।
निरपेक्ष भावमय अक्षत ही, पूजन के योग्य सुहाया है॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

चैतन्य ब्रह्म की अनुभूतिमय, ब्रह्मचर्य रस प्रगटाया।
भोगों की अब मिटी वासना, दुर्विकल्प भी नहीं आया॥
भोगों के तो नाम मात्र से भी, कम्पित मन हो जाता।
मानों आयुध से लगते हैं, तब त्राण स्वयं में ही पाता॥
हे कामजयी निज में रम जाऊँ, यही भावना मन आनी।
श्रद्धा सुमन समर्पित जिनवर, कामबुद्धि सब विसरानी॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

निज आत्म अतीन्द्रिय रस पीकर, तुम तृप्त हुए त्रिभुवनस्वामी।
निज में ही सम्यक् तृप्ति की, विधि तुम से सीखी जगनामी॥
अब कर्त्ता भोक्ता बुद्धि छोड़, ज्ञाता रह निज रस पान करूँ।
इन्द्रिय विषयों की चाह मिटी, सर्वांग सहज आनन्दित हूँ॥
निज में ही ज्ञानानन्द मिला, बहुमान आपका आया है।
परम तृप्तिमय अकृतबोध ही, पूजन योग्य सुहाया है॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

मोहान्धकार में भटका था, सम्यक् प्रकाश निज में पाया।
प्रतिभासित होता हुआ स्वज्ञायक, सहज स्वानुभव में आया॥
इन्द्रिय बिन सहज निरालम्बी प्रभु, सम्यग्ज्ञान ज्योति प्रगटी।
चिरमोह अंधेरी हे जिनवर, अब तुम समीप क्षण में विघटी॥
अस्थिर परिणति में हे भगवन् ! बहुमान आपका आया है।
अविनाशी केवलज्ञान जगे, प्रभु ज्ञानप्रदीप जलाया है॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

निष्क्रिय निष्कर्म परम ज्ञायक, ध्रुव ध्येय स्वरूप अहो पाया।
तब ध्यान अग्नि प्रज्ज्वलित हुई, विघटी परपरिणति की माया॥
जागी प्रतीति अब स्वयं सिद्ध, भव भ्रमण भ्राँति सब दूर हुई।
असंयुक्त निर्बन्ध सुनिर्मल, धर्म परिणति प्रकट हुई॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अस्थिरताजन्य विकार मिटें, मैं शरण आपकी हूँ आया।
बहुमानभावमय धूप धरूँ, निष्कर्म तत्त्व मैंने पाया॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

है परिपूर्ण सहज ही आतम, कमी नहीं कुछ दिखलावे।
गुण अनन्त सम्पन्न प्रभु, जिसकी दृष्टि में आ जावे॥
होय अयाची लक्ष्मीपति, फिर वाँछा ही नहीं उपजावे।
स्वात्मोपलब्धिमय मुक्तिदशा का सत्पुरुषार्थ सु प्रगटावे॥
अफलदृष्टि प्रगटी प्रभुवर, बहुमान आपका आया है।
निष्काम भावमय पूजन का, विभु परमभाव फल पाया है॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अविचल अनर्घ्य पद पाया, सहज प्रमोद हुआ भारी।
ले भावार्घ्य अर्चना करता, निज अनर्घ्य वैभव धारी॥
चक्री इन्द्रादिक के पद भी, नहिं आकर्षित कर सकते।
अखिल विश्व के रम्य भोग भी, मोह नहीं उपजा सकते॥
निजानन्द में तृप्तिमय ही, होवे काल अनन्त प्रभो!।
ध्रुव अनुपम शिव पदवी प्रगटे, निश्चय ही भगवन्त अहो !॥

ॐ ह्रीं श्री वीतराग देवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(छन्द-चामर तर्ज- मैं हूँ पूर्ण ज्ञायक...)

प्रभो आपने एक ज्ञायक बताया।
तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया॥टेक॥
यही रूप मेरा मुझे आज भाया।
महानन्द मैंने स्वयं में ही पाया॥
भव-भव भटकते बहुत काल बीता।
रहा आज तक मोह-मदिरा ही पीता॥
फिरा ढूँढ़ता सुख विषयों के माहीं।
मिली किन्तु उनमें असह्य वेदना ही॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाभाग्य से आपको देव पाया।
तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया॥१॥
कहाँ तक कहूँ नाथ महिमा तुम्हारी।
निधि आत्मा की सु दिखलाई भारी॥
निधि प्राप्ति की प्रभु सहज विधि बताई।
अनादि की पामरता बुद्धि पलाई॥
परमभाव मुझको सहज ही दिखाया।
तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया॥२॥
विस्मय से प्रभुवर था तुमको निरखता।
महामूढ़ दुखिया स्वयं को समझता॥
स्वयं ही प्रभु हूँ दिखे आज मुझको।
महा हर्ष मानों मिला मोक्ष ही हो॥
मैं चिन्मात्र ज्ञायक हूँ अनुभव में आया।
तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया॥३॥
अस्थिरता जन्य प्रभो दोष भारी।
खटकती है रागादि परिणति विकारी॥
विश्वास है शीघ्र ये भी मिटेगी।
स्वभाव के सन्मुख यह कैसे टिकेगी?॥
नित्य-निरंजन का अवलम्ब पाया।
तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया॥४॥
दृष्टि हुई आप सम ही प्रभो जब।
परिणति भी होगी तुम्हारे ही सम तब॥
नहीं मुझको चिन्ता मैं निर्दोष ज्ञायक।
नहीं पर से सम्बन्ध मैं ही ज्ञेय ज्ञायक॥
हुआ दुर्विकल्पों का जिनवर सफाया।
तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सर्वांग सुखमय स्वयं सिद्ध निर्मल।
शक्ति अनन्तोंमयी एक अविचल॥
बिन्मूर्ति चिन्मूर्ति भगवान आत्मा।
तिहूँ जग में नमनीय शाश्वत चिदात्मा॥
हो अद्वैत वन्दन प्रभो हर्ष छाया।
तिहूँ लोक में नाथ अनुपम जताया॥६॥

ॐ ह्रीं श्री वीतरागदेवाय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा– आपहि ज्ञायक देव है, आप आपका ज्ञेय।
अखिल विश्व में आप ही, ध्येय ज्ञेय श्रद्धेय॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि॥

श्री शांति-कुन्थु-अरनाथ जिनपूजन

(वीर-छन्द)

हो चक्रवर्ति अरु कामदेव, प्रभु तीर्थंकर पदवी धारी।
हे शांति-कुन्थु-अरनाथ ! सदा, मैं करूँ वंदना अविकारी॥
आकर आप समीप जिनेश्वर, आनन्द उर न समाया है।
तव दर्शन पाकर नाथ आज, निजदर्शन मैंने पाया है॥

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्राः ! अत्र अवतरन्तु अवतरन्तु संवौषट् इत्याह्वाननम्। ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्राः ! अत्र तिष्ठन्तु तिष्ठन्तु ठः ठः स्थापनम्। ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्राः! अत्र मम सन्निहिता भवन्तु भवन्तु वषट् सन्निधिकरणम्।

(अवतार छन्द)

मिथ्यामल धोने आज, सम्यक् जल पाया।
प्रभु जन्म-जरा-मृत्यु शून्य, ज्ञायक दिखलाया॥
हे शांति-कुन्थु-अरनाथ, चरणन शिर नाऊँ।
है महामहिम निजभाव, प्रभुता प्रगटाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं..।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संताप रहित निज भाव, निज में दरशाया।
भव ताप नशावन हेतु, चन्दन सम पाया॥
हे शांति-कुन्थु-अरनाथ, चरणन शिर नाऊँ।
है महामहिम निजभाव, प्रभुता प्रगटाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो भवाताप विनाशनाय चन्दनं..।

शाश्वत अक्षत निजभाव, दृष्टि में आया।
क्षत् रागादिक विनशाय, अक्षयपद ध्याया॥ हे शांति.॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्योऽक्षयपद प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

निष्काम रूप लख देव, काम पलाया है।
सम्यक् श्रद्धा का पुष्प, आज चढ़ाया है॥ हे शांति.॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.।

दर्शन कर निज में नाथ, तृप्ति पाई है।
भव-भव की क्षुधा जिनेश, आज नशायी है॥ हे शांति.॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.।

तिहुंजग का जाननहार, आज जनाया है।
आलोकित है निज लोक, मोह भगाया है॥ हे शांति.॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि.।

प्रभु आत्मध्यान की अग्नि, अब सुलगाई है।
पर-परणति की दुर्गन्ध सर्व जलाई है॥ हे शांति.॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्योऽअष्टकर्म दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

फल की अभिलाषा नाहिं, निजपद पाया है।
पूर्णत्व स्वयं में देख, आनन्द छाया है॥ हे शांति.॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

प्रभु वीतराग विज्ञान-मय शुभ अर्घ लिया।
निज में अनर्घ पद नाथ, निज से प्राप्त किया॥ हे शांति.॥

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथ-कुन्थुनाथ-अरनाथ-जिनेन्द्रेभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

दोहा- जग जड़ वैभव त्यागकर, निज वैभव प्रगटाय।
शांति-कुन्थु-अरनाथ की, नित जयमाला गाय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(जोगीरासा)

शांति जिनेश्वर दर्शन कर, निज शान्त स्वरूप लखाया।
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया॥टेक॥

चाह दाह में भटका अब तक, सुख का लेश न पाया।
मंद कषायों द्वारा अंतिम, ग्रीवक तक हो आया॥
काललब्धि जागी प्रभुवर, मैं पास आपके आया॥धन्य.॥

आत्मा तो स्वभाव से सुखमय, दिव्य रहस्य बताया।
दीन दुखी पामर मैं हूँ, ये भ्रम का रोग मिटाया॥
अन्तर में प्रत्यक्ष देख सुख, अब विश्वास जगाया॥धन्य.॥

निज चैतन्य विभूती देखी, शक्ति अनन्त निहारी।
प्रभु सम प्रभुता लखकर, खुद ही भाव हुए अविकारी॥
होना नहीं सदा हूँ सुखमय, सम्यक् ज्ञान उपाया॥धन्य.॥

अब तो यही भावना प्रभुवर, निज में ही रम जाऊँ।
स्वानुभूतिमय परणति में ही, काल अनन्त बिताऊँ॥
निज में ही सन्तुष्ट, कामनाओं का हुआ सफाया॥धन्य.॥

कुन्थुनाथ स्तुति करते, गणधर इन्द्रादिक हारे।
तुम महिमा वर्णन करने में, हम को मंद विचारे॥
निजस्वभाव साधन द्वारा ही, प्रभु मुक्ति पद पाया॥धन्य.॥

कुन्थु आदि सूक्ष्म जीवों के, प्रति भी दया सिखाई।
परम अहिंसामयी धर्म की, ध्वजा प्रभो ! फहराई॥
चलूँ आपके पद चिन्हों पर, आज यही मन भाया॥धन्य.॥

धर्म चक्र के अर स्वरूप, सार्थक प्रभु नाम तुम्हारा।
प्रभो आपका दर्शन पाकर, जागा भाग्य हमारा॥
भव का फेरा मिटा सहज ही, शिवपथ मैंने पाया॥धन्य.॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चक्री का साम्राज्य आपने, तृणवत् क्षण में छोड़ा।
हो निर्ग्रन्थ प्रभो उपयोग सु, निज ज्ञायक में जोड़ा॥
सकलकर्म का नाश किया प्रभु, अविचल शिवपद पाया॥
धन्य परम उपकारी निज सुख, निज में मुझे दिखाया॥
कहूँ कहाँ तक भाव बहुत हैं, अल्प शक्ति पर मेरी।
तुम सम ही प्रभुतामय निस्पृह, परिणति होवे मेरी॥
चाहूँ कुछ नहिं सहजभाव से, सविनय शीश नवाया॥धन्य.॥

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ-कुन्थनाथ-अरनाथ जिनेन्द्रेभ्यो जयमालाऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

मंगलमय मंगलकरण, आत्मस्वरूप महान।
शुद्धातम में मग्न हो, प्रगटे पद निर्वाण॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री पंचबालयति जिनपूजन

(मत्त सवैया)

हे ब्रह्मचर्य के धनी ब्रह्ममय, परमपूज्य त्रिभुवन स्वामी।
हे पंचबालयति तीर्थंकर, तुम-सम परिणति हो जगनामी॥
आनन्दमयी निज परमब्रह्म, मैंने प्रत्यक्ष निहारा है।
उल्लास हृदय में छाया प्रभु, मैंने अब तुम्हें चितारा है॥
ज्यों दर्पण सन्मुख हो जग में, मोही तन-रूप सजाते हैं।
त्यों तुम पूजन कर हे विभुवर, हम अपना भाव बढ़ाते हैं॥

(सोरठा)

वासुपूज्य, मल्लि, नेमि, पार्श्व प्रभु, महावीर जिन।
नमत होय सुख चैन, द्रव्य-दृष्टि धर पूज हूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर-पंचबालयति-तीर्थंकराः अत्र अवतरन्तु अवतरन्तु संवौषट् इत्यह्वाननम्। अत्र तिष्ठन्तु तिष्ठन्तु ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहिता भवन्तु भवन्तु वषट् सन्निधिकरणम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निज में जुड़ती है दृष्टि जभी, समता का सहज प्रवाह बहे।
आनन्द अपूर्व प्रकट होवे, तब जन्म-जरा-मृत नहीं रहे॥
है जन्म-जरा-मृत रहित प्रभू ! मम आज दृष्टि में आया है।
समरस से तृप्त रहूँ विभुवर, मैंने जल यहाँ चढ़ाया है॥
अतिशय है ब्रह्म-भाव मेरा, कामादिक दुर्मति भागी है।
प्रभु ब्रह्मचर्य परमानन्द पा, अतिशय प्रतीति उर जागी है॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति।

निज परमशांति शीतलता से, आपूर्ण सरोवर मम प्रभु है।
भवरहित जहाँ भवताप नहीं, सर्वोत्कृष्ट सुखमय विभु है॥
जब ताप नहीं तब चन्दन का भी, काम नहीं कुछ शेष रहा।
चन्दन प्रभु यहीं चढ़ाया है, निष्पाप-ताप निजरूप गहा॥अतिशय..॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

छिलके से ढका हुआ अक्षत, छिलका हटते ही प्रकट हुआ।
पर्याय दृष्टि हटते ही त्यों, मम अक्षय प्रभु प्रत्यक्ष हुआ॥
निज अक्षय प्रभु के आश्रय से ही, राग-द्वेष का होवे क्षय।
ये अक्षत यहाँ चढ़ाये हैं, मैंने पाया है पद अक्षय॥अतिशय..॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योऽक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम पूर्ण निज वैभव का, मैं तृप्त हो गया दर्शन कर।
संकल्प-विकल्प प्रवेश न हों, रहते सीमा से ही बाहर॥
अद्भुत रहस्य यह पाया है, इच्छाओं की उत्पत्ति नहीं।
बस निजस्वभाव में मग्न रहूँ, ये पुष्प चढ़ाता आज यहीं॥अतिशय..॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यः कामबाण-विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

समरस अमृत का सागर है, क्षुत् पीड़ा का अस्तित्व नहीं।
त्यागोपादान शून्य पर से, कुछ ग्रहण-त्याग कर्तृत्व नहीं॥
प्रभु! निजस्वभाव से च्युत होकर, तन के आश्रय से भूख लगी।
ये नैवेद्य समर्पित यहीं प्रभो ! स्वाश्रय से भव की भूख भगी॥ अतिशय..॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाशत्व शक्ति शाश्वत है, सहज प्रकाशित मम स्वभाव।
सब बाह्य प्रकाश अनावश्यक, उसमें नहिं दिखता निजस्वभाव॥
बाहर की दृष्टि छोड़ अहो ! स्वसन्मुख चिन्मय ज्योति जगे।
ये दीपक यहीं विसर्जित है, अन्तर लौ से तम-मोह भगे॥
अतिशय है ब्रह्म-भाव मेरा, कामादिक दुर्मति भागी है।
प्रभु ब्रह्मचर्य परमानन्द पा, अतिशय प्रतीति उर जागी है॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश-धर्ममयी शाश्वत सुगन्ध चेतन नन्दन में महक रही।
दुर्गन्धित भाव विकारों का, किंचित् भी जहाँ अस्तित्व नहीं॥
यह धूप यहीं प्रभु छोड़ रहा, अब पर से दृष्टि हटाई है।
स्वसन्मुख होकर अब प्रभुसम, स्वधर्म सुरभि शुभ पायी है॥अतिशय..॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योऽष्टकर्म-विध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु मुक्त स्वरूप सहज पाया, आनन्द अपूरव छाया है।
शिवफल की भी वाँछा न रही, अन्तर पुरुषार्थ जगाया है॥
ज्ञानी तो फल वाँछा त्यागे, पर मूढ त्याग का फल चाहे।
फल चढ़ा रहा हूँ हे जिनवर, बस ये विकल्प भी नहिं आये॥अतिशय..॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु सर्वविशुद्ध स्वतत्त्व लखा, अब दृष्टि न पल भी हटती है।
होता उपयोग जभी बाहर, एकाग्र भावना जगती है॥
एकाग्र रहे उपयोग सदा, यह ही निश्चय से अर्घ्य कहा।
जिससे अविचल अनर्घ्यपद हो, प्रभु बाह्य अर्घ्य इसलिए तजा॥ अतिशय.॥

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

वासुपूज्य श्री मल्लिजिन, नेमि पार्श्व महावीर।
बाल ब्रह्मचारी सुजिन, नमत मिटै भवपीर॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(पद्धरि)

जय वासुपूज्य देवाधिदेव, मंगलमय मंगलकरन एव।
जय चिदानन्द चिद्रूप सार, धारी निज महिमा निर्विकार।
पूरवभव में तुमने स्वामी, सुन युगमंधर प्रभु की वाणी।
नित आत्मभावना भाई थी, तीर्थंकर प्रकृति बंधाई थी।
तप कर महाशुक्र विमान गये, चय नृप वसुपूज्य के पुत्र भये।
कल्याणक देव मनाये थे, पर निज में आप समाये थे।
भोगों को नहिं स्वीकार किया, दूरहि से प्रभुवर छोड़ दिया।
हो बालयति दीक्षा धारी, प्रकटाया निजपद सुखकारी।

कर रहा अर्चना मल्लिनाथ, भवि दर्शन कर होते सनाथ।
वट वृक्ष विशाल गिरा लख कर, पूरब भव में दीक्षा धरकर।
तीर्थंकर पद का बन्ध किया, अपराजित स्वर्ग प्रयाण किया।
तँहतैं चयकर अवतार लिया, शादी के समय वैराग लिया।
छह दिन छद्मस्थ रहे स्वामी, नव-केवललब्धि रमा पायी।
भव्यों को शिवपथ दर्शाया, सम्मेदशिखर से शिव पाया।

जय नेमीश्वर महिमा महान, सुन पशु क्रन्दन वैराग्य ठान।
छोड़े पशु अरु राजुल छोड़ी, भवबन्धन की कड़ियाँ तोड़ी।
जग को अनुपम आदर्श दिया, प्रभु धर्म अहिंसा प्रकट किया।
गिरनार शिखर से शिव पाया, प्रभु चरणों में हम सिर नाया।

जय पार्श्वनाथ तव गुण अपार, गणधर भी पावें नहीं पार।
इक दिवस सभा में विराज रहे, साकेत नरेश की भेंट लिए।
इक दूत वहाँ पर आया था, साकेत विभव दरशाया था।
ऋषभादि प्रभु स्मरण हुआ, वैराग्य हृदय में जाग उठा।
दीक्षा ले निज में मग्न हुए, तब कमठ घोर उपसर्ग किए।
अप्रभावित अचल रहे जिनवर, परमात्मदशा प्रगटी सत्वर।
ऐसी स्थिरता प्रभु पाऊँ, बस परमब्रह्म में रम जाऊँ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हे महावीर विभु परम धीर, महिमा सागर से भी गम्भीर।
शादी प्रसंग जब आया था, प्रभुवर तुमने ठुकराया था।
दीक्षा ले द्वादश वर्ष प्रभो, दुर्द्धर तप धारा आप विभो।
निजध्यान अग्नि द्वारा जिनेश, कर्मों को ध्वस्त किया अशेष।
अन्तिम तीर्थंकर अभिरामी, मैं करूँ वन्दना जगनामी।
तव दर्शन करके हे स्वामी, मैंने निज महिमा पहिचानी।
प्रभु प्रबल पराक्रम प्रगटाऊँ, रागादिभाव पर जय पाऊँ।
जो तीर्थ आपने प्रगटाया, वह भी स्वामी मुझको भाया।
कीचड़ लपेट तन धोना क्या, अरु कूद अग्नि में रोना क्या?।
श्रद्धान परम जागा मन में, सुख शांति सदा है अन्तर में।
परमाणु मात्र भी नहीं पर में, मेरा सर्वस्व सदा मुझ में।
उपयेाग नहीं पर में भागे, अतिचार नहीं किञ्चित् लागे।
प्रभुवर ! निज में ही रम जाऊँ, निज परम ब्रह्मचर्य प्रगटाऊँ।

ॐ ह्रीं श्रीपंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परम ब्रह्म आनन्दमय, चित् स्वभाव अविकार।
समयसार में लीन हो, होऊँ भव से पार॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

श्री बाहुबली जिनपूजन

(हरिगीतिका)

हे बाहुबलि ! अद्भुत अलौकिक, ध्यानमुद्रा राजती।
प्रत्यक्ष दिखती आत्मप्रभुता, शीलमहिमा जागती।
तुम भक्तिवश वाचाल हो गुणगान प्रभुवर मैं करूँ।
निरपेक्ष हो पर से सहज पूजूँ स्वपद दृष्टि धरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(चामर छन्द, तर्ज-पार्श्वनाथ देव सेव...)

स्वयंसिद्ध सुख निधान आत्मदृष्टि लायके,
जन्म-मरण नाशि हों मोह को नशायिके।
बाहुबलि जिनेन्द्र भक्ति से करूँ सु अर्चना,
तृप्त स्वयं में ही रहूँ अन्य हो विकल्प ना॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पना, अनिष्ट-इष्ट की तजूँ अज्ञानमय,
परिणति प्रवाहरूप होय शान्त ज्ञानमय॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पराभिमान त्याग के, सु भेदज्ञान भायके,
लहूँ विभव सु अक्षयं, निजात्म में रमाय के॥बाहुबलि...॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

छोड़ भोग रोग सम सु ब्रह्मरूप ध्याऊँगा,
काम हो समूल नष्ट सुख-अनंत पाऊँगा॥बाहुबलि...॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तोषसुधा पान करूँ आशा तृष्णा त्याग के,
मग्न स्वयं में ही रहूँ चित्स्वरूप भाय के॥बाहुबलि...॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतना प्रकाश में चित् स्वरूप अनुभवूँ,
पाऊँगा कैवल्यज्योति कर्म घातिया दलूँ॥बाहुबलि...॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म ध्यान अग्नि में विभाव सर्व जारिहों,
देव आपके समान सिद्ध रूप धारि हों॥बाहुबलि...॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्र चक्रवर्ति के भी पद अपद नहीं चहूँ,
त्रिकाल मुक्त पद अराध मुक्तपद लहूँ लहूँ॥बाहुबलि...॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अनर्घ्य प्रभुता आपकी सु आप में निहारिके,
नाथ भाव माँहिं मैं, अनर्घ्य अर्घ्य धारिके॥
बाहुबलि जिनेन्द्र भक्ति से करूँ सु अर्चना,
तृप्त स्वयं में ही रहूँ अन्य हो विकल्प ना॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- मोहजयी इन्द्रियजयी, कर्मजयी जिनराज।
भावसहित गुण गावहुँ, भाव विशुद्धि काज॥

(जोगीरासा)

अहो बाहुबलि स्वामी पाऊँ, सहज आत्मबल ऐसा।
निर्मम होकर साधूँ निजपद, नाथ आप ही जैसा॥

धन्य सुनन्दा के नन्दन प्रभु, स्वाभिमान उर धारा।
चक्री को नहिं शीस झुकाया, यद्यपि अग्रज प्यारा॥

कर्मोदय की अद्भुत लीला, युद्ध प्रसंग पसारा।
युद्ध क्षेत्र में ही विरक्त हो, तुम वैराग्य विचारा॥

कामदेव होकर भी प्रभु , निष्काम तत्त्व आराधा।
प्रचुर विभव, रमणीय भोग भी, कर न सके कुछ बाधा॥

विस्मय से सब रहे देखते, क्षमा भाव उर धारे।
जिनदीक्षा ले शिवपद पाने, वन में आप पधारे॥

वस्त्राभूषण त्यागे लख निस्सार, हुए अविकारी।
केशलौंच कर आत्म-मग्न हो, सहज साधुव्रत धारी॥

हुए आत्म-योगीश्वर अद्भुत, आसन अचल लगाया।
नहिं आहार-विहार सम्बन्धी, कुछ विकल्प उपजाया॥

चरणों में बन गई वाँमि, चढ़ गई सु तन पर बेलें।
तदपि मुनीश्वर आनन्दित हो, मुक्तिमार्ग में खेलें॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नित्यमुक्त निर्ग्रन्थ ज्ञान-आनन्दमयी शुद्धातम।
अखिल विश्व में ध्येय एक ही, निज शाश्वत परमातम॥

निजानन्द ही भोग नित्य, अविनाशी वैभव अपना।
सारभूत है, व्यर्थ ही मोही, देखे झूठा सपना॥

यों ही चिन्तन चले हृदय में, आप वर्तते ज्ञाता।
क्षण-क्षण बढ़ती भाव-विशुद्धि, उपशमरस छलकाता॥

एक वर्ष छद्मस्थ रहे प्रभु, हुआ न श्रेणी रोहण।
चक्री शीश नवाया तत्क्षण, हुआ सहज आरोहण॥

नष्ट हुआ अवशेष राग भी, केवल-लक्ष्मी पाई।
अहो अलौकिक प्रभुता निज, की सब जग को दरशाई॥

हुए अयोगी अल्प समय में, शेष कर्म विनशाए।
ऋषभदेव से पहले ही प्रभु, सिद्ध शिला तिष्ठाए॥

आप समान आत्मदृष्टि धर, हम अपना पद पावें।
भाव नमन कर प्रभु चरणों में, आवागमन मिटावें॥

ॐ ह्रीं श्री बाहुबलिजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

बाहुबली भगवान, दर्शाया जग स्वार्थमय।
जागे आतमज्ञान, शिवानन्द मैं भी लहूँ॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

जिस महान कार्य के लिए तू जन्मा है, उस महान कार्य का अनुप्रेक्षण कर और कार्य सिद्धि करके चला जा।

जिस जीवन में क्षणिकता है, उस जीवन में ज्ञानियों ने नित्यता प्राप्त की है, यह आश्चर्यमिश्रित आनन्द की बात है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजन

(अडिल्ल)

ढाई द्वीप में पाँच विदेह हैं शाश्वते।
तीर्थंकर जहँ बीस सदा ही राजते॥
भक्ति भाव से करूँ सहज आराधना।
निज पद पाऊँ नाथ यही है भावना॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा: ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा: ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करा: ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(चौपाई)

स्वयं सिद्ध शुद्धातम ध्याय, जन्म जरा मृत दोष नशाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधर-युगमन्धर-बाहु-सुबाहु-संजातक-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य-सूरिप्रभ-विशालकीर्ति-वज्रधर-चंद्रानन-भद्रबाहु भुजंगम्-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरषेण-महाभद्र देवयशो-ऽजितवीर्येतिविद्यमान विंशतितीर्थङ्करेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधादिक दुर्भाव नशाय, क्षमाधार भव ताप मिटाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्य: भवातापविनाशनाय चन्दनम् निर्व. स्वाहा।

इन्द्रिय सुख क्षत् विक्षत् रूप, त्याग लहूँ आनन्द अनूप।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽक्षय पद प्राप्तये अक्षतम् नि. स्वाहा।

त्यागूँ प्रभु अब्रह्म दुखदाय, निश्चय परम शील प्रगटाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्य: कामबाण विध्वंशनाय पुष्पम् नि. स्वाहा।

क्षुधा वेदनीय उपशम होय, पाऊँ निजानन्द रस सोय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्य: क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यम् निर्व. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोह महातम तुरत नशाय, आत्मज्ञान की ज्योति जगाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यः मोहांधकार विनाशनाय दीपम् निर्व.स्वाहा।

जलें कर्म भव दुख विनशाय, निर्मल आत्मध्यान प्रगटाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽष्टकर्म विनाशनाय धूपम् नि.स्वाहा।

सुखमय सम्यक्चारित्र धार, महा मोक्षफल पाऊँ सार।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि.स्वाहा।

सहज भावमय अर्घ्य चढ़ाय, निज अविचल अनर्घ्यपद पाय।
सीमंधर आदिक जिन बीस, चरणों में नित नाऊँ शीश॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमानविंशतितीर्थङ्करेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

अहो विदेहीनाथ के, गुण गाऊँ सुखकार।
देह रहित शुद्धात्मा, ध्याऊँ नित अविकार॥

(वीरछन्द)

श्री सीमंधर युगमंधर श्री, बाहु सुबाहु सु संजातक।
स्वयंप्रभ ऋषभानन वन्दूँ, अनन्तवीर्य नाशें पातक॥

श्री सूर्यप्रभ विशालकीर्ति जी, जजूँ वज्रधर चन्द्रानन।
भद्रबाहु अरु श्री भुजंगम, ईश्वर जिन भव दुख भानन॥

नेमिप्रभ श्री वीरसेन जिन, महाभद्र प्रभु मंगलकार।
श्री देवयश अजितवीर्य को, नमूँ नित्य त्रय योग संभार॥

बीस तीर्थंकर सदा विदेहों, में शोभें आनन्दकारी।
धनुष पाँच सौ काय विराजे, समवशरण महिमा न्यारी॥

सिंहासन पर अन्तरीक्ष प्रभु, तिष्ठे अपने ही आधार।
चौंसठ चमर छत्र त्रय शोभित, भामण्डल द्युति लसे अपार॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोह विजय को सूचित करती, दुंदुभि धुनि संदेश सुनाय।
आओ आओ अहो जगत जन, सुनो दिव्यध्वनि शिव सुखदाय॥
धर्मतीर्थ तहँ शाश्वत वर्ते, महिमा मुझसे कही न जाय।
धन्य-धन्य जो प्रत्यक्ष देखें, सनें दिव्यध्वनि बोधि लहाय॥
हो निर्ग्रंथ रमें निज माँहीं, परमातम पद पावें सार।
भाव सहित तिनको यश गाऊँ, सहज नमन होवे अविकार॥

(घत्ता)

जय जिन गुण सारं मंगलकारं, गाऊँ अति ही हर्षाऊँ।
निज में रम जाऊँ, कर्म नशाऊँ, ऐसे ही गुण प्रगटाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री विद्यमान विंशतितीर्थंकरेभ्यः जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

जो जिन पूजे भाव से, धरें नित्य ही ध्यान।
अल्पकाल में वे लहें, अविनाशी निर्वान॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

श्री सीमन्धर जिनपूजन

(सोरठा)

सीमन्धर जिन नाथ, पूर्व विदेह विराजते।
हृदय विराजो नाथ, भाव सहित पूजा रचों॥

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(वीरछन्द)

जन्म जरा मृत चक्र नाशने, जिन चरणों में आया हूँ।
तुम हो अक्षय अविनाशी प्रभु, यह लख अति हर्षाया हूँ॥
यह जल लख निस्सार जिनेश्वर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ॥
विद्यमान सीमंधर स्वामी ! आत्म भावना भाता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु रोग विनाशनाय जलं नि.स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निजानन्द का वेदन करते, भवाताप उत्पन्न न हो।
वर्ते निज में तृप्त परिणति, कर्मोदय से खिन्न न हो॥
चन्दन लख निस्सार जिनेश्वर सन्मुख आज चढ़ाता हूँ।
विद्यमान सीमंधर स्वामी ! आत्म भावना भाता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनम् नि.स्वाहा।

अक्षय तो अपना ही वैभव, अक्षय तो अपना पद है।
अक्षय तो अपनी ही प्रभुता, पर का तो झूठा मद है॥
क्षत् भावों को त्याग जिनेश्वर अक्षत आज चढ़ाता हूँ॥विद्यमान॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधर जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम् नि. स्वाहा।

काम वेदना का उपाय तो, ब्रह्मचर्य का धारण है।
परम ब्रह्म की सहज साधना, ब्रह्मचर्य का साधन है॥
पुष्पों को निस्सार जान प्रभु सन्मुख आज चढ़ाता हूँ॥विद्यमान॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पम् नि. स्वाहा।

क्षुधा वेदना नहिं उपजावे, ज्ञानामृत से तृप्त रहे।
भोजन बिन ही अहो जिनेश्वर, सुखमय आप विराज रहे॥
ये नैवेद्य असार जानकर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ॥विद्यमान॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यम् नि. स्वाहा।

ज्ञानोद्योत रहे अन्तर में, वस्तु स्वरूप झलकता है।
सहज प्रवर्ते भेदज्ञान प्रभु, महामोहतम नशता है॥
जड़ दीपक निस्सार जानकर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ॥विद्यमान॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपम् नि. स्वाहा।

अहो ! अगन्ध आत्मा जाना, धर्म सुगन्धि प्रगट हुई।
घ्राणेन्द्रिय का विषय दुःखमय, बाह्य गन्ध से विरति हुई॥
धूप जान निस्सार जिनेश्वर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ॥विद्यमान॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपम् नि. स्वाहा।

कर्म फलों से हुई उदासी, मोक्ष महाफल पाऊँगा।
हे जिन स्वामी ! अन्तर्मुख हो निज पुरुषार्थ बढ़ाऊँगा॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जड़ फल लख निस्सार जिनेश्वर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ॥विद्यमान॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हे अनर्घ्य पद दाता ! ज्ञाता-दृष्टा रह निजपद ध्याऊँ।
निश्चय ही तुम सम हे स्वामी, ध्रुव अनर्घ्य जिनपद पाऊँ॥
द्रव्य-भावमय अर्घ्य जिनेश्वर, सन्मुख आज चढ़ाता हूँ॥विद्यमान॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

गुण अनन्त मंगलमयी, कैसे करूँ बखान।
भक्तिवश बाचाल हो, करूँ अल्प गुणगान॥

(वीरछन्द)

समवशरण में नाथ विराजे, चतुर्मुखी अन्तर्मुख हो।
भक्ति उर में सहज उमड़ती, जब परिणति प्रभु सन्मुख हो॥

आगम से प्रभु महिमा सुन, प्रत्यक्ष लखूँ ऐसा मन हो।
जिनवर तुम ही प्राण हमारे, तुम ही तो जीवनधन हो॥

धर्म-तीर्थ के परम प्रणेता, धर्म-पिता सर्वज्ञ महान।
अष्टादश दोषों से न्यारे, तिहुँ जग भूषण हे भगवान॥

दिव्यध्वनि से वर्षाते प्रभु, धर्मामृत परमानन्ददाय।
जिसको पीते-पीते स्वामी, जन्म-जरा-मृत रोग नशाय॥

अहो अलौकिक वस्तुस्वरूप, दिखाया प्रभुवर नित अविकार।
हेय-रूप पर-भाव बताये, उपादेय शुद्धातम सार॥

अन्य न कोई दुख का कारण, भूल स्वयं को है हैरान।
इसीलिए प्रभु कहा आपने, श्रेय मूल है सम्यग्ज्ञान॥

निज अक्षय प्रभुता दर्शायी, किया अनन्त परम उपकार।
हो निर्ग्रन्थ आत्मपद साधूँ निश्चय होऊँ भव से पार॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रहे देह में फिर भी न्यारा, अन्तर माँहिं विदेही नाथ।
सहज स्मरण हो आता है, तुम्हें पूजते हे जिननाथ॥

यद्यपि आप दूरवर्ती हैं, किन्तु भाव में सदा समीप।
ज्ञान माँहिं प्रत्यक्ष वत् निरखूँ, जले स्वयं अन्तर का दीप॥

निर्मम हुआ शान्त् चित प्रभुवर, परम प्रभू का ध्यान रहे।
निर्मल साम्यभाव की धारा, सहजपने सुखकार बहे॥

हो निर्ग्रंथ निमग्न रहूँ नित, सर्व विभाव नशाऊँगा।
हुआ सहज विश्वास शीघ्र ही, तुम सम ही हो जाऊँगा॥

(त्रिभंगी)

जय-जय सीमंधर, तिहुँजग सुखकर, नृप श्रेयांससुत अविकारी।
सत्यदेवी नन्दन, करते वन्दन, वृषभ चिन्ह मंगलकारी॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

सीमंधर भगवान को, जो पूजें चित धार।
निज सीमा पहिचानकर, सहज लहे भवपार॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

श्री सिद्ध पूजन

(दोहा)

सर्व कर्म बन्धन रहित, नित्य निरामय जान।
परम सूक्ष्म सिद्धात्मा, चित्स्वरूप पहिचान॥
पूजूँ भक्ति भाव से, धरूँ भेद विज्ञान।
निश्चय से मैं भी अहो, शाश्वत सिद्ध समान॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् !अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(बसन्ततिलका)

भववास दु:खमय तज निज में बसे जो।
निर्मल गुणाकर हुए शिव में बसे जो॥
जल सम पवित्र होकर मैं सिद्ध ध्याऊँ।
जन्मादि दोष क्षण में प्रभु सम नशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्म-मरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं नि.।

सम्यक्त्व आदि गुण युत जगपूज्य हैं जो।
निरखेद तृप्त निज में अविचल रहें जो।
चन्दन समान शीतल हो सिद्ध ध्याऊँ।
संताप रूप भव में फिर ना भ्रमाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने भवातापविनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

अन्तिम शरीर से जो कुछ न्यून राजें।
अशरीर ज्ञानमय जो अक्षय विराजें॥
ले भाव अक्षत सहज मैं सिद्ध ध्याऊँ।
क्षत् रूप जग विभव अब किञ्चित् न चाहूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

स्वाधीन मग्न निज में निश्चल हुए जो।
कामादि दोष नाशे सुखमय हुए जो॥
निष्काम भावमय हो मैं सिद्ध ध्याऊँ।
हो ब्रह्मरूप शाश्वत आनन्द पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

हे आत्मनिष्ठ योगीश्वर ध्यान गम्य।
प्रभुवर करूँ सुभक्ति वाणी अगम्य॥
निज में ही तृप्त हो प्रभु पूजा रचाऊँ।
दुखमय क्षुधादि नाशें प्रभुता सु पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

हे चित्प्रकाशमय परमेश्वर अलौकिक।
निज में निमग्न रहते तिहुँ जग के ज्ञायक॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्मोह ज्ञानमय हो मैं सिद्ध ध्याऊँ।
ज्ञायक स्वरूप सहजहिं ज्ञायक रहाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

ध्रुव ध्येय रूप शुद्धातम सुखकारी।
दर्शाय देव कीना उपकार भारी॥
हो मग्न ध्येय माँहीं पूजा रचाऊँ।
दुष्टाष्ट कर्म बन्धन सहजहिं नशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्म-दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

अक्षय अनंत अविकारी मुक्तिनाथ।
वाँछा न शेष पाया चैतन्य नाथ॥
आनन्द विभोर हो प्रभु पूजा रचाऊँ।
अनुपम अचल सु शाश्वत गति शीघ्र पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफल-प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

त्रैलोक्य चूड़ामणि प्रभुवर हुए हैं।
साक्षात् शुद्ध आत्मा विभु आप ही हैं॥
भावार्घ्य लेय सुखमय पूजा रचाऊँ।
अविचल अनर्घ अविनाशी प्रभुता सु पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

अविकल परमानन्दमय, अविनाशी गुणखान।
भक्ति भाव पूरित हृदय, सहज करूँ गुणगान॥

(चौपाई)

स्वयं सिद्ध परमातम ध्याया, कर्म कलंक समूल नशाया।
प्रगटे गुण अनन्त अविकारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

जय जय क्षायिक सम्यक्दर्शन, केवलज्ञान सु केवलदर्शन।
हुए अनन्त सु वीरजधारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अगुरुलघु सूक्ष्मत्व अवगाहन, अव्याबाध प्रगट भयो पावन।
बिन्मूरति चिन्मूरति धारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

गुणस्थान चौदह के पार, नित्य निरामय ध्रुव अविकार।
परमानन्द दशा विस्तारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

तीर्थंकर जब दीक्षा धारें, सिद्ध प्रभु का नाम उचारें।
अचल अनूपम पदवी धारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

आत्माराधन का फल पाया, पंचम भाव प्रत्यक्ष दिखाया।
महिमावंत ध्येय सुखकारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

एक क्षेत्र में प्रभु अनन्ते, सत्ता भिन्न-भिन्न विलसन्ते।
अहो सु अद्भुत प्रभुता धारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

सिद्धालय ज्यों सिद्ध विराजे, देह माँहिं त्यों आतम राजे।
ज्ञायक रूप परम अविकारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

भेदज्ञान करके पहिचाना, द्रव्यदृष्टि धरि सहज प्रमाना।
होऊँ निश्चय शिवमगचारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

सहज रहूँ प्रभु जाननहार, परभावों का हो परिहार।
कटे कर्मबन्धन दुःखकारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

अपने में संतुष्ट रहाऊँ, अपने में ही तृप्त रहाऊँ।
हुई निःशेष कामना सारी, जजूँ सिद्ध नित मंगलकारी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

(सोरठा)

निश्चल सिद्धस्वरूप, ज्ञानस्वभावी आत्मा।
सहज शुद्ध चिद्रूप, अनुभव करि आनन्द भयो॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

धर्म की प्रभावना वचनों से नहीं जीवन से होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सोलहकारण पूजन

(वीरछन्द)

भवदु:ख निवारण सोलहकारण, सहजभाव से नित भाऊँ।
आनन्दित हो उत्साहित हो, रत्नत्रय पथ पर मैं धाऊँ॥
जिन भायीं भावना मंगलमय, उनने तीर्थंकर पद पाया।
मैं पूजूँ धरि बहुमान हृदय में, धर्म तीर्थ शुभ प्रगटाया॥

(दोहा)

मैं भी भाऊँ चाव सों, निज अन्तर लौ लाय।
होवे धर्म प्रभावना, तिहुँ जग में सुखदाय॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ:।
ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणानि ! अत्र मम सन्निहितानि भव भव वषट्।

(मानव)

धरि दर्शविशुद्धि सुखमय, निर्मल जल ले समतामय।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दु:खहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि-विनयसंपन्नता-शीलव्रतेष्वनतिचाराभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग-संवेग-शक्तितस्त्याग-तप: साधुसमाधि-वैयावृत्यकरण-अर्हद्भक्ति-आचार्यभक्ति-बहुश्रुत भक्ति-प्रवचनभक्ति-आवश्यकापरिहाणि मार्गप्रभावना-प्रवचनवात्सल्येतितीर्थंकरत्व कारणेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ धैर्यमयी ले चन्दन, जिन चरणों में कर वन्दन।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दु:खहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्य: संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

निस्तुष ज्ञानाक्षत धारूँ, क्षत् विभव चाह परिहारूँ।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दु:खहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम शील प्रगटाकर, भावों के पुष्प चढ़ाकर।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दु:खहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्य: कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निज रसमय चरु ले आऊँ, दुर्दोष क्षुधादि नशाऊँ।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुःखहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

अज्ञान तिमिर क्षयकारी, ले ज्ञानदीप अविकारी।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुःखहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्व. स्वाहा।

ध्याऊँ पद पाप निकन्दन, नाशें सब ही विधि बन्धन।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुःखहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल भक्तिमयी सु चढ़ाऊँ, निर्वाण महाफल पाऊँ।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुःखहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले अर्घ्य अनूपम सुखमय, लहूँ भावलीनता अक्षय।
पूजूँ भाऊँ सुखकारी, सोलहकारण दुःखहारी॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

इह विधि मंगलकार, पूजा करि आनन्द सौं।
सहज स्वरूप विचार, गाऊँ जयमाला सुखद॥

(त्रोटक)

सम्यक् दर्शन निर्दोष होय, शंकादि दोष लागे न कोय।
रत्नत्रय प्रति नित विनय रहे, कब पूर्ण होय यह भाव रहे॥

निर्दोष शील वर्ते अखण्ड, परमार्थ लहूँ हो मोह खण्ड।
भाऊँ सु निरन्तर भेदज्ञान, जासों पाऊँ निजपद महान॥

हो धर्म धर्मफल में उछाह, उपजे न कदाचित् विषय दाह।
निजशक्ति संभारि करूँ सुदान, त्यागूँ विभाव दुखकारि जान॥

शक्ति अनुसार धरूँ विचित्र, इच्छा निरोध जिनतप पवित्र।
साधू-समाधि में करि सहाय, मैं भी समाधि लहुँ सुक्खदाय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हो तत्पर वैयावृत्ति माँहिं, विचरूँ मैं भी शिवमार्ग माँहिं।
अरहंत भक्ति धरि विषय टार, आराधूँ साधूँ स्वपद सार॥

आचार्य भक्ति होवे पवित्र, धारूँ निर्मल सम्यक् चरित्र।
वंदूँ बहु श्रुतधर उपाध्याय, लहूँ ज्ञान महान सु मुक्तिदाय॥

जिनप्रवचन की भक्ति अनूप, धरि ध्याऊँ अविकल चित्स्वरूप।
आवश्यक निश्चय अरु व्यवहार, हो सहजभाव से सुखकार॥

होवे प्रभावना मंगलमय, जिनधर्म धरें सब हों निर्भय।
धर्मी प्रति अति ही वात्सल्य, होवे सुखकारी अरु निःशल्य॥

सोलहकारण आनन्दकार, तीर्थंकर पद की देनहार।
निर्वांछक हो भाऊँ सु सार, ध्रुव तीर्थरूप निजपद निहार॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्ध्यादिषोडकारणेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

सोलह कारण भावना, सब ही को सुखदाय।
पूजूँ भाऊँ भक्ति धरि, श्री जिनधर्म सहाय॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

श्री दशलक्षणधर्म पूजन

(हरिगीतिका)

उत्तम क्षमादिक धर्म आतम का सहज निजभाव है।
सुख शान्ति का है हेतु जग में, मुक्ति का सु उपाव है॥
है मूल सम्यग्दर्श, निज में लीनतामय ये धरम।
पूजूँ सु भाऊँ भावना हो पूर्ण दशलक्षण धरम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(रेखता)

सहज प्रासुक सु निर्मल जल, करो प्रक्षाल मिथ्यामल।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्येति दशलक्षणधर्माय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शान्त भावों का ले चन्दन, सहज भवताप निकंदन।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अखय पद कारणे अक्षय, आत्म पद का करो आश्रय।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुमन श्रद्धा सजाओ सब काम दुःखमय नशाओ अब।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परम सन्तोषमय नैवेद्य, क्षुधादिक का न हो कुछ खेद।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उजारो ज्ञान का दीपक, महातम मोह का नाशक।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोहान्धकारविनाशाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि शोधक जले तप की, भस्म हो कर्म की प्रकृति।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नहीं फल पुण्य के चाहो, मोक्षफल भी सहज पाओ।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

समर्पित अर्घ्य अविकारी, होओ साक्षात् शिवचारी।
धर्म दशलक्षणी सुखकर, जजों निज माँहिं दृष्टि धर॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दश अंगों के अर्घ्य

(चौपाई)

निज अन्तर्मुख दृष्टि होवे, परमानन्दमय वृत्ति होवे।
तहँ अनिष्ट भासे नहीं कोई, क्रोध बैर उत्पन्न न होई॥
उत्तम क्षमा सहज अविकारी, वर्ते निज पर को हितकारी।
तत्त्वाभ्यास करो मनमाँहीं, पर का दोष लखो कछु नाहीं॥
जैसा कर्म उदय में आवे, वैसे ही संयोग सु पावे।
तातैं कर्म बंध के कारण, क्रोधादिक का करो निवारण॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमाधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भेदज्ञान करि देखो भाई ! मिथ्यामान महादुखदाई।
मानी के सब बैरी होवें, मानी को सब नीचा जोवें॥
जल ज्यों पत्थर में न समावे, त्यों मानी निजबोध न पावे।
स्वाभाविक निज प्रभुता देखो, ज्ञानी के जीवन को देखो॥
अध्रुव वस्तु का मान सुत्यागो, विनयवंत हो निज में पागो।
उत्तम मार्दव आनन्द दाता, पूजो धरो सहज हो ज्ञाता॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज सरल निज भाव पिछानो, गुप्त पाप को माया जानो।
नहीं छिपावो ताहि मिटावो, उत्तम आर्जव चित में लावो॥
क्यों समझे ठगता औरों को, पापबंध कर ठगता निज को।
उत्तम जिनशासन को भजकर, दुखमय छल-प्रपंच को तजकर।।
कोई बहाना नहीं बनाओ, रत्नत्रय पथ पर बढ़ जाओ।
सरल स्वभावी होकर भ्राता, उत्तम आर्जव पूजो ज्ञाता॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमार्जवधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभ लाभ का कारण नाहीं, व्यर्थ क्लेश करता मन माहीं।
लोभी विषयी महामलीना, दर-दर ठोकर खावे दीना॥
ज्ञेय लुब्ध अज्ञानी प्राणी, स्वानुभूति बिन दुःखी अज्ञानी।
जिन उपदेश भाग्य तें पाय, अनुभव रस में तृप्त रहाय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यावो आतम परम पवित्रा, नाशे आस्रव अति अपवित्रा।
निर्लोभी हो पाप नशाय, उत्तम शौच जजों सुखदाय॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम सत्यधर्म परधाना, सत्य समझ बिन नहिं कल्याणा।
तीर्थ प्रवर्ते सत्य वचन से, होय प्रतिष्ठा सत्य धर्म से॥
सत्य धर्म सबको सुखदाई, झूठ दुःखमय दुर्गति दाई।
बोलो हित-मित-प्रिय-सत्वयना, अथवा शान्त-मौन ही रहना॥
वस्तु स्वरूप यथार्थ पिछानो, करके स्वानुभूति श्रद्धानो।
तज परभाव रमो निज ही में, प्रगटे सत्यधर्म जीवन में॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसत्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो अतीन्द्रिय आनन्द आवे, विषयों में नहिं चित्त भ्रमावे।
तज प्रमाद सब हिंसा टारी, होओ उत्तमसंयम धारी॥
करि विचार देखो मन माँहीं, भोगों में सुख किंचित् नाहीं।
हस्ति मीन अलि पतंग हिरन सम, विषयों में दुख लहें मूढ़जन॥
हो विरक्त सब पाप नशावें, धरि संयम ज्ञानी सुख पावें।
उत्तम संयम शिवपद दाता, पूजो भावो धारो ज्ञाता॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमसंयमधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तप निज में ही हो विश्रान्त, इच्छाएँ हो जावें शान्त।
सब ही सुख की इच्छा करें, आत्मबोध बिन सुख नहिं लहें॥
ज्यों-ज्यों भोग संयोग लहाय, आशा-तृष्णा बढ़ती जाय।
इच्छा पूरी कबहुँ न होय, करो निरोध सहज तप होय॥
बारह भेद व्यवहार कहाय, निश्चय तप सब कर्म नशाय।
अपनी-अपनी शक्ति प्रमान, उत्तम तप धारो बुधिवान॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपोधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दुखदायक विभाव सब त्याग, आत्मधर्म में धरि अनुराग।
चार प्रकार दान शुभ देय, त्रिविधि पात्र को दे यश लेय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

औषधि अभय अहार सु जान, ज्ञानदान सब में परधान।
ज्ञान बिना भ्रमता तिहुँ लोक, आत्मज्ञान से पावे मोक्ष॥
निज को निज पर को पर जान, ज्ञानमयी कर प्रत्याख्यान।
सर्वदान दे हो निर्ग्रंथ, उत्तम त्याग धरे सो सन्त॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हूँ मैं एक शुद्ध चिन्मात्र, अन्य न मम परमाणु मात्र।
मोहादिक औपाधिक भाव, मेरे नहिं मैं ज्ञानस्वभाव॥
मैं स्वभाव से आनन्द रूप, द्विविध परिग्रह दुःख स्वरूप।
परिग्रह त्याग आकिंचन्य धर्म, धारि मुनीश्वर नाशें कर्म॥
श्रावक भी परिमाण कराहिं, परिग्रह में किंचित् रुचि नाहिं।
यों उत्तम आकिंचन सार, पूजो धारो भव्य संभार॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम ब्रह्मचर्य अविकार, पूजों धर्म शिरोमणि सार।
कामभाव दुर्गति को मूल, भव-भव में उपजावे शूल॥
लहे न चैन करे कृत निंद्य, कामासक्त बढ़ावे बंध।
तातैं शील बाढ़ नौ धार, अपनो ब्रह्म स्वरूप निहार।
त्यागो दुखमय इन्द्रिय भोग, पावो ज्ञानानन्द मनोग।
जयवन्तो ब्रह्मचर्य अनूप, धारे सो होवे शिवभूप॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

मोह क्षोभ बिन परिणति, ही दशलक्षण धर्म।
भेदज्ञान करि धारिये, तजि क्रोधादि अधर्म॥

(तर्ज-हे दीन बन्धु श्रीपति...)

दशलाक्षणीक धर्म सहज सुःखकार है।
आनन्दमयी यह धर्म अहो मुक्तिद्वार है॥
दशलाक्षणीक धर्म ही नाशे विकार है।
जिनवर प्रणीत धर्म करे भव से पार है॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दशलाक्षणीक धर्म कल्पवृक्ष से अधिक।
समतामयी यह धर्म चिन्तामणि से अधिक॥
दशलाक्षणीक धर्म धरे सहज ही ज्ञाता।
बिन याचना बिन कामना सब सुःख प्रदाता॥
दशलाक्षणीक धर्म क्रोध मान से रहित।
मंगलमयी यह धर्म माया लोभ से रहित॥
ये ही सनातन धर्म सत्य रूप है पवित्र।
संयम स्वरूप अभय रूप भोगों से विरक्त॥
तप त्याग रूप धर्म ये आनन्द स्वरूप है।
परिग्रह प्रपंच शून्य, ब्रह्मचर्य रूप है॥
दशलाक्षणीक धर्म ज्ञानमय स्वभाव है।
वर्ते निजाश्रय से सहज मेंटे विभाव है॥
दशलाक्षणीक धर्म मैत्री भाव का सेतु।
अहिंसामयी यह धर्म विश्व शान्ति का हेतु॥
आओ भजो यह धर्म तत्त्वज्ञान पूर्वक।
सब द्वन्द फन्द छोड़कर स्वलक्ष्य पूर्वक॥
यह धर्म है वस्तु स्वभाव सम्प्रदाय ना।
यह धर्म है अनादि-निधन भेदभाव ना॥
निष्काम भाव से सहज यह भावना वर्ते।
दशलाक्षणीक धर्म नित जयवन्त प्रवर्ते॥

(घत्ता)

दश लक्षण रूपं धर्म अनूपं, धरे परम आनन्द से।
दुर्भाव नशावे सब सुख पावे, छूटे भव दुख द्वन्द से॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमादि दशलक्षणधर्मांगाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दशलक्षण हैं धर्म के, धर्म नहीं दशरूप।
मोह क्षोभ बिन धर्म है, सहजहिं साम्य स्वरूप॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री रत्नत्रय पूजन

(गीतिका)

दुखहरण मंगलकरण जग में, रत्नत्रय पहिचानिये।
परमार्थ अरु व्यवहार से, दो विधि निरूपण जानिये॥
शुद्धात्म रुचि अनुभूति अरु, आचरण निश्चय रत्नत्रय।
व्यवहार है बस निमित्त सहचर, नियत से हो कर्म क्षय॥
पूजूँ परम उल्लास से मैं, दृष्टि अन्तर धारिके।
भाऊँ स्वपद की भावना, जग द्वन्द-फंद निवारिके॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्
ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्म ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(दोहा)

निर्मल सम्यक् नीर ले, मिथ्यामैल विडार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

चन्दन ले अनुभूति मय, भव आताप निवार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय भवातापविनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

अक्षय पद के कारणे, अक्षय प्रभु उर धार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि. स्वाहा।

परम ब्रह्म की भावना, निर्विकल्प उर धार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय कामबाणविनाशनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

निज रस से ही तृप्त हो, दोष क्षुधादि विडार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय क्षुधारोगविनाशनाय नैवद्यं नि. स्वाहा।

परम ज्योति चैतन्यमय, हो जगमग सुखकार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शुद्धातम का ध्यान धरि, नाशूँ सर्व विकार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

सिंचन कर चारित्र तरू, पाऊँ शिवफल सार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

अर्घ्य अभेद सुभक्तिमय, परमानन्द दातार।
पूजूँ धारूँ भक्ति से, रत्नत्रय अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यक्रत्नत्रयधर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री सम्यग्दर्शन

(वीरछन्द)

आतम दर्शन सम्यग्दर्शन, अहो धर्म का मूल है।
हो नि:शंक धारूँ निज में ही, नाशे भव का शूल है॥
निर्वांछिक हो ग्लानि त्यागूँ, रहूँ अमूढ़ सु सत्पथ में।
उपगूहन कर करूँ स्थितिकरण, स्व-पर का शिवपथ में॥
करूँ सहज वात्सल्य धर्म की, मंगलमयी प्रभावना।
ये ही अष्ट अंग युत समकित, हो न कदापि विराधना॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टाङ्ग सम्यग्दर्शनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री सम्यग्ज्ञान

निज में निज का अनुभव होवे, निश्चय सम्यग्ज्ञान हो।
है निमित्त व्यवहार जिनागम, से हो तत्त्वज्ञान जो॥
शुद्ध उच्चारण सदा करूँ अरु, शुद्ध अर्थ अवधारूँ मैं।
उभय शुद्धि धरि योग्य काल में, ही स्वाध्याय सम्हारूँ मैं॥
सदा बढ़ाऊँ गुरु का गौरव, यथा योग्य बहुमान करूँ।
विनय पूर्वक संशयादि तजि, विकसित सम्यग्ज्ञान वरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अष्टविध सम्यग्ज्ञानाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री सम्यक्चारित्र

विषयचाह की दाह शमित हो, सम्यक्चारित्र धारूँ मैं।
रत्न अमोलक दुर्लभ पाया, करि पुरुषार्थ सम्हारूँ मैं॥
स्व-पर दयामय तेरह भेद सु, निश्चय निज में लीनता।
त्यागूँ भोग परिग्रह दुखमय, जिनमें प्रतिक्षण दीनता॥
हो स्वाधीन करूँ शिव साधन, जासों निज पद पावना।
लोक शिखर पर सहज विराजूँ, फेरि न भव में आवना॥

ॐ ह्रीं श्री त्रयोदशविध सम्यक्चारित्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(सोरठा)

सम्यग्दर्शन ज्ञान, अरु चारित्र की एकता।
ये ही पथ निर्वान, निश्चय आत्मस्वरूप है॥
महिमा अपरम्पार, वचन अगोचर ज्ञानमय।
वन्दूँ बारम्बार, गाऊँ जयमाला सुखद॥

(छन्द-पद्धरि)

सम्यक् रत्नत्रय आत्मरूप, सम्यक् रत्नत्रय शिव स्वरूप।
सम्यक् रत्नत्रय त्रिजगसार, इस ही से हो भव सिन्धु पार॥

सम्यक् रत्नत्रय ज्योति रूप, नहिं रहे लेश तम मोह रूप।
निज रत्नत्रयमय शुद्ध भाव, प्रगटे विघटे दुखमय विभाव॥

सम्यक्रत्नत्रय हित उपाय, चिर विधि बन्धन सहजहिं नशाय।
ये ही भविजन को परम श्रेय, प्रगटाने योग्य सु उपादेय॥

धनि धनि रत्नत्रय धरूँ सार, त्रैलोक्य पूज्य निजपद निहार।
अशरण जग में है शरण भूत, जिनवचन कहा सत्यार्थ रूप॥

ताको सुयत्न है भेदज्ञान, श्री देव-शास्त्र-गुरु निमित्त जान।
जिनकथित तत्त्व का हो अभ्यास, हो स्वानुभूति लीला विलास॥

हो उदित सहज सम्यक्त्व सूर्य, रागादि विजय को बजे तूर्य।
वर्ते निर्मल उत्तम विचार, वैराग्य भावना बढ़े सार॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आरम्भ परिग्रह पाप मूल, निर्ग्रंथ होय छोड़े समूल।
आनन्द वीर रस रह्यो छाय, तड़ तड़ तड़ विधि बंधन नशाय॥
ध्याऊँ स्वरूप श्रेणी चढ़ाय, निर्मुक्त परम पद सहज पाय।
ऐसी महिमा मन में सुभाय, पूजूँ रत्नत्रय मुक्तिदाय॥

(घत्ता)

रत्नत्रय रूपं आत्मस्वरूपं मंगलमय मंगलकारी।
साक्षात् सु पाऊँ थिर हो जाऊँ, निजपद पाऊँ अविकारी॥

ॐ ह्रीं श्री सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्र धर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये समुच्चय जयमाला महाअर्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

पढ़ें सुनें चिन्तें अहो, पूजें धरि उर चाव।
निश्चय शिवपद वे लहें, नाशें सर्व विभाव॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

श्री पंचमेरु पूजन

(सोरठा)

पंचमेरु अभिराम, शोभे ढ़ाई द्वीप में।
अस्सी श्री जिनधाम, अकृत्रिम अविकार हैं॥
जिनप्रतिमा सुखकार, इक इक में शत आठ हैं।
होवे जय जयकार, भाव सहित पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(छन्द १२ मात्रा)

लेऊँ प्रभु समकित जल, धुल जावे मिथ्यामल।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जन्मजरामृत्यु - विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले क्षमा भाव चन्दन, कर जिनवर का सुमिरन।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षत् का अभिमान तजूँ, अक्षत निज भाव भजूँ।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यः अक्षयपद प्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

ले पुष्प शील के शुभ, नाशूँ प्रभु काम अशुभ।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

समता रस स्वादी बनूँ, दुर्दोष क्षुधादि हनूँ।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ज्ञान सु परकाशे, अज्ञान तिमिर नाशे।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ध्येय रूप ध्याऊँ, दश धर्म सु महकाऊँ।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

विषमय विधि फल त्यागा, शिवफल में चित पागा।
पंचमेरु असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ले भाव अर्घ्य सुन्दर, निज विभव लहूँ जिनवर।
पंचमेरू असी मंदिर, जिनबिम्ब जजूँ सुखकर॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

पंचमेरु के जिन भवन, पूजत हो आनन्द।
गाऊँ जयमाला सुखद, नशें कर्म के फन्द॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(पद्धरि)

जय पंचमेरु जग में महान, शाश्वत अकृत्रिम तीर्थ जान।
तीर्थंकर का जन्माभिषेक, इन्द्रादि करें उत्सव विशेष॥

जय प्रथम सुदर्शन मेरु सार, स्थित सु द्वीप जम्बू मंझार।
लख योजन उन्नत अति विशाल, शोभे भूपर वन भद्रशाल॥

ऊपर चढ़ पाँच शतक योजन, नंदन वन दीखे मनमोहन।
ऊँचा साढ़े बासठ सहस्र, योजन सोहे वन सोमनस॥

तहँ तैं छत्तीस सहस योजन, गिरशीस लसे शुभ पांडुक वन।
चारों दिशि के वन में सुन्दर, शोभें चैत्यालय श्री जिनवर॥

इक-इक में इकशत आठ लसे, जिनबिम्ब लखत दुर्मोह नशे।
ज्यों दर्पण में तनरूप लखे, त्यों आत्मस्वरूप प्रत्यक्ष दिखे॥

फिर विजय-अचल धातकीखण्ड, पूरव-पश्चिम दिशि अतिउतंग।
मंदर विद्युन्माली सु-नाम, पुष्कर में राजे अति ललाम॥

योजन चौरासी सहस उतंग, चारों मेरु सोहे अभंग।
तहँ सोलह-सोलह चैत्यालय, मनहर सुखकर श्रीजिन आलय॥

इन्द्रादिक सुर अरु विद्याधर, चारण ऋद्धिधारी मुनिवर।
प्रभु भाव वंदना करूँ सार, निज भाव माँहिं मैं भी निहार॥

पूजूँ वंदूँ आनन्दित हो, तासों विधि बंधन खंडित हो।
भोगों की चित में दाह नहीं, इन्द्रादिक पद की चाह नहीं॥

अकृत्रिम शुद्धातम साधूँ, अविनाशी शिवपद आराधूँ।
अपना पद अपने में पाऊँ, चरणों में बलिहारी जाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुसम्बन्धि अशीतिजिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यः जयमालाअर्घ्यं ।

(दोहा)

मंगलकर होवे सदा, जिनपूजा जग माँहिं।
अपनो भाव सुधारि के भवि निश्चय शिव पाँहिं।

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नन्दीश्वर द्वीप (अष्टाह्निका) पूजन

(वीरछन्द)

नंदीश्वर के अकृत्रिम जिनमंदिर अरु जिनबिम्ब अहा।
ज्ञान माँहिं स्थापन करते उछले ज्ञानानन्द महा॥
ज्ञानमयी ही हो आराधन, सहजपने निष्काम प्रभो।
तृप्त सदैव रहूँ निज में ही, और चाह नहिं शेष विभो॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनप्रतिमासमूह ! अत्रावतरावतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अडिल्ल)

स्वाभाविक निर्मल जल से अविकार हैं।
दुखमय जन्म जरा मृत नाशनहार हैं॥
नंदीश्वर के बावन मंदिर अकृत्रिम।
पूजूँ श्री जिनबिम्ब अनूपम जिन समं॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ चन्दन नहीं अन्तर्ताप विनाशकं।
सहज भाव चन्दन भवताप विनाशकं॥नंदीश्वर...॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल भाव अक्षत ले मंगलकार हैं।
स्वाभाविक अक्षय पद के दातार हैं॥नंदीश्वर..॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं..।

आत्मीक गुण पुष्प जगत में सार हैं।
विषय चाह दव दाह शमन कर्तार हैं॥नंदीश्वर..॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भोजन व्यंजन नहीं क्षुधा को नाशते।
तातें पूजूँ अकृत बोध नैवेद्य ले॥नंदीश्वर..॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जड़ दीपक नहिं मोह विनाशनहार है।
मोह नशे जब जाने जाननहार है॥
नंदीश्वर के बावन मंदिर अकृत्रिम।
पूजूँ श्री जिनबिम्ब अनूपम जिन समं॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपम् निर्वपामीति स्वाहा।

प्रगटे अग्नी निर्मल आतम धर्म की।
जिससे होवे हानि सर्व ही कर्म की॥नंदीश्वर..॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं..।

पाऊँ परम भावफल प्रभु मंगलमयी।
और कामना शेष नहीं मन में रही॥नंदीश्वर..॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं ..।

शुद्धभावमय अर्घ्य करूँ आनन्द सों।
पद अनर्घ्य पाऊँ छूटूँ भवफन्द सों॥नंदीश्वर..॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं..।

जयमाला

सोरठा- धर्म पर्व सुखकार, हे जिन ! पाया भाग्य से।
ध्याऊँ प्रभुपद सार, विषय कषायारम्भ तजि॥

(चौपाई)

अष्टम द्वीप नंदीश्वर सार, पूजूँ वन्दूँ भाव संभार।
इक-इक अंजनगिरि अविकार, चार-चार दधिमुख सुखकार॥
आठ-आठ रतिकर मनुहार, दिशि-दिशि तेरह मंदिर सार।
बावन मंदिर यों पहिचान, निरखत होवे हर्ष महान॥
रत्नमयी मनहर जिनबिम्ब, सन्मुख भासे निज चिद्बिम्ब।
वर्णन है जिन-आगम माँहिं, भाव सहित पूजत मन लाहिं॥
कार्तिक फाल्गुनऽषाढ़ मंझार, अन्त आठ दिन आनन्दधार।
जहँ सुरगण वन्दन को जाँहि, पुरुषार्थी सम्यक्त्व लहाहिं॥
यद्यपि शक्ति गमन की नाँहिं, तदपि ज्ञान में सहज लखाहिं।
भाव वन्दना कर सुखकार, निज अकृत्रिम भाव निहार॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुआ सहज संतुष्ट जिनेश, अब वांछा प्रभु रही न लेश।
निज प्रभुता निज में विलसाय, काल अनन्त सु मग्न रहाय॥
धर्म पर्व मंगलमय सार, जिस निमित्त हो तत्त्व विचार।
कर उद्यम पाऊँ पद सार, जय जय समयसार अविकार॥
पर्व अठाई मंगलरूप, ध्याऊँ निज अनुपम चिद्रूप।
नित्य पवित्र परम अभिराम, शाश्वत परमातम सुखधाम॥
स्वयं सिद्ध अकृत्रिम जान, अजर अमर अव्यय पहिचान।
देखन योग्य स्वयं में देख, विलसे उर आनन्द विशेष॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपे द्विपंचाशज्जिनालयस्थजिनबिम्बेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा - धन्य हुआ कृतकृत्य हुआ, पाया श्री जिनधर्म।
मर्म तत्त्व का प्राप्त कर, लहूँ सहज शिवशर्म॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

श्री वीरशासन जयन्ती पूजन

(छन्द-रोला)

वीरनाथ का दर्शन, सबको मंगलकारी।
वीरनाथ का शासन, सबको आनन्दकारी॥
सहज वस्तु स्वातन्त्र्य, वीर ने हमें बताया।
स्वयं मुक्त हो, हमें मुक्ति का मार्ग दिखाया॥

दोहा - श्रावण वदी सुप्रतिपदा, खिरी दिव्यध्वनि वीर।
भाव सहित पूजा करें, पहुँचें भव के तीर॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मति-वीर जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् इति सन्निधिकरणम्।

(तर्ज-आज अद्भुत छवि निज निहारी...)

भाव सम्यक्त्वमय नीर लावें, जन्म मरणादि का दुःख नशावें।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लेके चन्दन क्षमाभावमय प्रभु, ईर्ष्या द्वेष मिटावे अहो विभु।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

भाव अक्षत सहज अविकारी, भक्ति प्रभु की सदा सुक्खकारी।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

बालयति हो प्रभो योगधारा, देव ऐसा ही भाव हमारा।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृप्ति निज में प्रभो निज से पाई, ऐसी तृप्ति हमें भी सुहाई।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानमय दीप प्रभु ने जलाया, ज्ञानमय भाव हमको दिखाया।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्यानमुद्रा जिनेश्वर सुहावे, देख पुरुषार्थ अन्तर जगावे।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

देख आराधना का महाफल, लगते निस्सार सब ही करमफल।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म वैभव अनर्घ्य दिखाया, अर्घ्य हमने भी जिनवर चढ़ाया।
वीर शासन जयन्ती मनावें, वीर को पूज निजपद को ध्यावें॥

ॐ ह्रीं श्री सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

विपुलाचल पर जब प्रथम, खिरी दिव्यध्वनि सार।
भविजन अति हर्षित हुए, गूँजा जय-जयकार॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(छन्द-त्रोटक)

जय महावीर जय वर्धमान, अतिवीर वीर सन्मति महान।
प्रभुवर को केवलज्ञान हुए, छियासठ दिन अरे व्यतीत हुए॥

नित समवशरण भर जाता था, पर योग नहीं बन पाता था।
कुछ नहीं समझ में आता था, भव्यों का मन अकुलाता था॥

जब काल दिव्यध्वनि खिरने का, गौतम आदिक के तिरने का।
आया मंगलकारी जिनवर, तब इन्द्र अवधि जोड़ा सत्वर॥

सब समझ शिष्य का वेश लिया, गौतम समीप तब गमन किया।
बोले मेरे गुरु महावीर, हैं मौन 'काव्य' अति ही गंभीर॥

भावार्थ बताओ सुखकारी, 'त्रैकाल्यं' काव्य पढ़ा भारी।
कुछ अर्थ समझ में नहीं आया, गौतम का माथा चकराया॥

शिष्यों संग वीर समीप चला, कुछ होनहार था परम भला।
जब समवशरण दिखलाया था, विस्मित हो अति हर्षाया था॥

देखत मानस्तम्भ मान गला, प्रभु दर्शन कर सम्यक्त्व मिला।
कहकर नमोस्तु दीक्षा धारी, हुए चार ज्ञान अति सुखकारी॥

गणधर का सहज निमित्त मिला, भव्यों का भी शुभ भाग्य खिला।
प्रभु दिव्यध्वनि मंगलकारी, सब जग की अति ही हितकारी॥

सुनकर भविजन प्रतिबुद्ध हुए, दीक्षा ले बहुजन शिष्य हुए।
वीर शासन तब से वर्ताया, है महाभाग्य हम भी पाया॥

है स्वानुभूतिमय स्वयं सिद्ध, जिनशासन चिर से ही प्रसिद्ध।
जिसमें सब जीव समान कहे, स्वभाव से ही भगवान कहे॥

देहादिक पुद्गल बतलाये, रागादिक दुख हेतु गाये।
शिवकारण सम्यक् रत्नत्रय, परिणति निज में ही होय विलय॥

अपना सुख-ज्ञान सु अपने में, अपनी प्रभुता है अपने में।
पहिचाने बिन भव भ्रमते हैं, आराधन कर प्रभु बनते हैं॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भोगों की नहीं कामना है, हे भगवन यही भावना है।
प्रगटावें पावन जिनशासन, फैलावें जग में प्रभु शासन॥

ॐ ह्रीं श्रीं सन्मतिवीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

शासन वीर महान, जयवन्तो जग में सदा।
पाकर आतम ज्ञान, आनंदित हों जीव सब॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि॥

श्री श्रुतपंचमी पूजन

(दोहा)

जिनश्रुत की पूजा करूँ, भक्तिभाव उर धार।
धन्य-धन्य श्रुतपंचमी, हुआ सुश्रुत अवतार॥
पुष्पदंत अरु भूतबलि, किया परम उपकार।
श्री षट्खण्डागम रचा, लिखा तत्त्व अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागम ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागम ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागम ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(रोला)

जिनवाणी गुण गाऊँ, प्रासुक जल ले आऊँ।
जन्म जरा मृत दोष नशाने, ध्रुवपद ध्याऊँ॥
षट्खण्डागम आदि श्रुतों की पूजा करता।
निज-पर भेद विज्ञान धार निज दृष्टि धरता॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

चन्दन से पूजूँ अरु जिनश्रुत पढ़ूँ पढ़ाऊँ।
चन्दन सम शीतल परिणति निज में प्रगटाऊँ॥षट्...॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी के सन्मुख अक्षत शुद्ध चढ़ाऊँ।
अक्षय आत्मस्वभाव सभी समझूँ समझाऊँ॥षट...॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रासुक पुष्पों से जिनश्रुत की पूज रचाऊँ।
कामवासना मेटूँ, निर्मल शील सु पाऊँ॥
षट्खण्डागम आदि श्रुतों की पूजा करता।
निज-पर भेद विज्ञान धार निज दृष्टि धरता॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनश्रुत पाकर अनुभव रस में तृप्त रहूँ मैं।
कर अर्पण नैवेद्य, क्षुधादिक दोष नशूँ मैं॥षट्...॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवाणी उपकार हृदय से नहीं भुलाऊँ।
दीपक सम्यग्ज्ञान जलाकर मोह नशाऊँ॥षट्...॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मबन्ध से भिन्न आत्मा, नित ही ध्याऊँ।
तप की शोधक अग्नि जलाकर कर्म नशाऊँ॥
षट्खण्डागम आदि श्रुतों की पूजा करता।
निज-पर भेद विज्ञान धार निज दृष्टि धरता॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

जिनवाणी से सहज मुक्त आतम पहचानूँ।
निज में हो संतुष्ट कर्म फल वांछा त्यागूँ॥षट्...॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि.स्वाहा।

द्रव्य-भावमय अर्घ्य चढ़ाकर श्रुतगुण गाऊँ।
जिनवाणी की कर प्रभावना अति हर्षाऊँ॥षट्...॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

भ्रमतम नाशनहार, स्याद्वादमय जैनश्रुत।
अभ्यासो अविकार, गुण गाऊँ आनन्द से॥

(मत्त सवैया)

श्रुत परम्परा का ह्रास देख गुरुवर को सहज विकल्प हुआ।
जिनवाणी को लिपिबद्ध कराने का उनको शुभ भाव हुआ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तब श्री धरसेनाचार्य ऋषीश्वर दो मुनिवर बुलवाये थे।
अरु उनकी बुद्धि परखने को दो मंत्र सिद्ध करवाये थे॥

मंत्रों को देख अशुद्ध सहज ही संशोधन कर लीना था।
निष्कामभाव से सिद्ध किये फिर भी अभिमान न कीना था॥

प्रतिभा सम्पन्न विनय संयुत मुनि देख ऋषीश्वर मुदित हुए।
शिक्षा देकर परिपक्व किया, आचार्य बना निश्चिंत हुए॥

वे तो समाधिकर स्वर्ग गये, श्री पुष्पदन्त प्रारम्भ किया।
रच एक खण्ड श्री भूतबली स्वामी समीप था भेज दिया॥

श्री भूतबली ने शेष लिखा, यों षट्खण्डागम पूर्ण हुआ।
जेठ शुक्ल पंचमी दिवस जिनश्रुत का जय जयकार हुआ॥

आचार्य श्री ने संघ सहित जिनश्रुत की पूजा करवाई।
जिन के समान ही जिनवाणी भी पूज्य तिहूँ जग में गाई॥

धवल जयधवल महाधवल टीकाएँ फिर तो लिखी गईं।
गोम्मटसार आदिक ग्रन्थों की फिर रचनाएँ सरल हुईं॥

यों परम्परा आगम की चलती रही आज भी हमें मिली।
श्री गुणधर कुन्दकुन्द आदिक से परम्परा अध्यात्म चली॥

दोनों धारायें अविकारी सुखमय, शिवमारग दरशातीं।
चारों अनुयोगमयी जिनवाणी, वीतरागता सिखलाती॥

है अनेकान्तमय वस्तु प्ररूपित, स्याद्वाद से सुखकारी।
निर्मल दृष्टि से देखो तो अनुयोग सभी हैं हितकारी॥

आदर्श बताता है हमको, प्रथमानुयोग आनन्दकारी।
उज्ज्वल आचरण सिखाता है, चरणानुयोग मंगलकारी॥

करणानुयोग परिणामों को, अरु लोक स्वरूप बताता है।
द्रव्यानुयोग सम्यक्त्व मूल, निज पर का भेद सिखाता है॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतएव करो अभ्यास भव्य, नित आगम अरु अध्यातम का।
हो हेयादेय विवेक सहज, श्रद्धान जगे शुद्धातम का॥

शुद्धातम का आराधन ही, अविनाशी शिवपद दाता है।
जिनवाणी तो है निमित्त भूत, फल परिणामों का आता है॥

ॐ ह्रीं श्री परमश्रुत षट्खण्डागमाय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमार्लार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(अडिल्ल)

माता सम उपकारी श्री जिनवाणी है।
तरण तारिणी नौका सम जिनवाणी है॥
जो पूजें अभ्यासें, अन्तर प्रीति से।
अल्पकाल में छूटें, भव की रीति से॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

श्री शास्त्र (सरस्वती) पूजन

(वीरछन्द)

अनेकान्तमय तत्त्व बताती, स्याद्वादमय जिनवाणी।
मंगलमय शुद्धात्म दिखाती, नय प्रमाण से जिनवाणी॥
भक्ति भाव से पूजा करते, मन में अति हर्षाता हूँ।
अन्तर्लीन परिणति होवे, यही भावना भाता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतिवाग्वादिनि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(छन्द-रोला)

भेदज्ञानमय जल लेकर में पूजा करता।
शाश्वत ज्ञानानन्दमय आतम दृष्टि धरता॥
जन्म-जरा-मृत दोष सहज विनशावनहारी।
जिनवाणी भव्यों की माता सम उपकारी॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षमाभावमय चन्दन लेकर जजूँ सदा ही।
क्रोधादिक मम चित्त माँहिं उपजें न कदा ही।।
असहनीय भव ताप सहज विनशावन हारी।।
जिनवाणी भव्यों की माता सम उपकारी।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल सरल भाव अक्षत से पूजा करता।
क्षत्-विक्षत् संयोगी भाव सहज ही तजता।।
अक्षय पद पाऊँ होकर चैतन्य विहारी।।जिनवाणी...।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि.स्वाहा।

परम शीलमय सुमनों से पूजूँ हर्षाऊँ।
महाक्लेशमय कामादिक दुर्भाव नशाऊँ।।
ब्रह्म भावना सदा सभी को मंगलकारी।।जिनवाणी...।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

ज्ञान शरीरी जड़ शरीर से भिन्न निजातम।
आराधन से अहो धन्य होते परमातम।।
चरू से पूजूँ भाऊँ आतम तृप्तिकारी।
जिनवाणी भव्यों की माता सम उपकारी।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि.स्वाहा।

ज्ञानमयी निज शुद्धातम सबको दर्शाती।
जो अनादि का मोह महातम सहज नशाती।।
पूजूँ ज्ञान प्रदीप जलाऊँ मंगलकारी।।जिनवाणी...।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

कर्मादिक का दोष ज्ञान में नहीं दिखावें।
ध्याते ज्ञान स्वरूप, सहज ही कर्म नशावें।।
पूजूँ जिनवाणी ध्याऊँ, आतम अविकारी।।जिनवाणी...।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अष्टकर्म-विध्वंसनाय धूपं नि.स्वाहा।

अहो ज्ञानघन सहजमुक्त आतम दर्शाया।
जिनवाणी माँ के प्रसाद से शिवपथ पाया।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

फल से पूजूँ त्यागूँ फल वाँछा दुखकारी ॥
जिनवाणी भव्यों की माता सम उपकारी ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै मोक्षफलप्राप्तये फलं नि.स्वाहा।

द्रव्य-भावमय अर्घ्य सजा पूजूँ जिनवाणी।
नित्य-बोधनी तरण-तारिणी शिव सुखदानी ॥
हो अनर्घ्य निज आतम प्रभुता मंगलकारी ।।जिनवाणी... ॥

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै दिव्यज्ञानप्राप्तये अर्घ्यं नि.स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

गाऊँ जयमाला अहो, तत्त्व प्रकाशनहार।
जिनवाणी अभ्यास से, जानूँ जाननहार ॥

(चौपाई)

जिनवाणी शिवमार्ग बतावे, जिनवाणी निज तत्त्व दिखावे।
जिनवाणी दुर्मोह नशावे, जिनवाणी भवफन्द छुड़ावे ॥

क्रोध अग्नि को सहज बुझावे, मान महाविष तुरत नशावे।
मृदुता ऋजुता माँ सिखलावे, तोष सुधारस पान करावे ॥

जिनवाणी अभ्यास करें जे, निर्भय और निशंक रहें वे।
दोष नशावें गुण प्रगटावें, सहज परम वात्सल्य बढ़ावें ॥

निज से अस्ति पर से नास्ति, समझे सो ही पावे स्वस्ति।
हो निष्काम निजातम भावे, हो निर्ग्रंथ परमपद ध्यावे ॥

असत् विभावों की नहिं चिन्ता, निजस्वभाव में सतत रमन्ता।
कर्म कलंक समूल नशावें, ध्रुव अविचल शिवपदवी पावें ॥

आदर्शों का ज्ञान कराती, नैमित्तिक व्यवहार सिखाती।
बन्ध-मुक्ति प्रक्रिया बताती, स्वानुभूति की कला सुझाती ॥

चार अनुयोगमयी जिनवाणी, माता सम सबको सुखदानी।
भक्ति भाव से करूँ अर्चना, आतमहित की जगी भावना ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दिव्यतत्त्व दर्शावनहारी, दिव्यज्ञान प्रगटावन हारी।
जयवन्ते जग में जिनवाणी, तत्त्वज्ञान पावें सब प्राणी।।

(दोहा)

जिनवाणी है द्रव्यश्रुत, ज्ञानभाव श्रुतज्ञान।
अभ्यासो नित द्रव्यश्रुत, प्रगटे ज्ञान महान।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनमुखोद्भवसरस्वतीदेव्यै अनर्घ्यपद-प्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(सोरठा)

परम प्रीति उरधार, जिनवाणी पूजा रची।
आतम रूप निहार, मोह मिटा आनन्द हुआ।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।।

श्री निर्वाणक्षेत्र पूजन

(गीतिका)

है तीर्थ शाश्वत आत्मा उसका आराधन जो करें।
वे आत्म आराधक जगत में चरण पावन जहँ धरें।।
वे तीर्थक्षेत्र कहाय सुखकर भाव से पूजन करूँ।
हो आत्म साधक रत्नत्रय, परिपूर्ण कर भव से तिरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्राणि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(अवतार)

मलहारी जल कहलाय, अन्तर्मल ः हरे।
अन्तर्मल सहज नशाय, सो सम्यक् जल ले।।
सम्मेद शिखर गिरनार, चम्पा पावापुर।
कैलाश आदि सुखकार, पूजत हर्षे उर।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि.।

क्रोधादिक अनल समान, दाह करें दुखकर।
करने उनका अवसान, अनुपम चन्दन धर।।सम्मेद.।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि.स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षत् रूप विभव जगमाँहिं, प्रभु सम ठुकराऊँ।
अक्षय आतम पद ध्याय, अक्षय पद पाऊँ॥
सम्मेद शिखर गिरनार, चम्पा पावापुर।
कैलाश आदि सुखकार, पूजत हर्षे उर॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि.स्वाहा।

इन्द्रिय सुख दुख के मूल, विष सम जान तजूँ।
अमृतमय ब्रह्म स्वरूप, हो निष्काम भजूँ॥सम्मेद.॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि.स्वाहा।

नहिं मिटे भोग की भूख, सचमुच भोगों से।
होऊँ निजरस में तृप्त, बस हो भोगों से॥सम्मेद.॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि.स्वाहा।

मोहान्धकार में व्यर्थ, भटका दुःख पाया।
महिमामय जिनवृष पाय, अनुभव प्रगटाया॥सम्मेद.॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि.स्वाहा।

चिनगारी सम्यक्ज्ञान अन्तर में डारी।
प्रजलित हो आतमध्यान, शोधक सुखकारी॥सम्मेद.॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं नि.स्वाहा।

फल पुण्य पाप के माँहिं, भव-भव भटकाया।
शिवफल की प्राप्ति हेतु, अब मन हुलसाया॥सम्मेद.॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो मोक्षफल प्राप्तये फलं नि.स्वाहा।

ले भाव अर्घ्य सुखकार निज में पागत हों।
प्रभु सर्व विभाव असार, दुःखमय त्यागत हों॥सम्मेद.॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि.स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

तीर्थ वास की भावना, सहज होय दिन-रात।
गाऊँ जयमाला सुखद, ज्ञानमयी विख्यात॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(पद्धरि)

जयवन्तो जग में धर्म तीर्थ, मंगलमय मंगलकरण तीर्थ।
सब पाप नशावें धर्म तीर्थ, शिवपथ दर्शावें धर्म तीर्थ॥

निज शुद्धातम परमार्थ तीर्थ, रत्नत्रय है व्यवहार तीर्थ।
अध्यात्म कथन यह सारभूत, भविजन हित हेतु निमित्त भूत॥

धर्मी से सम्बन्धित जु होय, हो धर्म क्षेत्र जगपूज्य सोय।
निर्वाण भूमि तिनमें महान, पूजों विशेष धरि भेदज्ञान॥

कैलाशशिखर प्रभु आदिनाथ, गिरनारशिखर प्रभु नेमिनाथ।
चम्पापुर वासुपूज्य प्रभुवर, पावापुर महावीर जिनवर॥

तीर्थंकर बीस सम्मेद शिखर, पायो निर्वाण अचल सुखकर।
है सर्वक्षेत्र मंगल स्वरूप, जहँ तें भये प्रभुवर सिद्ध रूप॥

पूजत उपजे आनन्द महान, निज सिद्धरूप का होय ध्यान।
तब देहादिक अतिभिन्न लगे, शिवसाधन में पुरुषार्थ जगे॥

कर्मादि शून्य ज्ञायक स्वरूप, निर्मम अखण्ड आनंद रूप।
मैं सहज मुक्त मैं नित्यमुक्त, निर्दोष निजातम सुगुण युक्त॥

यों हुई प्रतीती सुक्खरूप, भावें न स्वाँग जड़ के विरूप।
निर्ग्रंथ भावना सुक्खकार, वर्ते शिवदाता दुःखहार॥

साधक हो साधूँ पूर्ण भाव, नाशूँ भव कारण सब विभाव।
यों भाव धार करता प्रणाम, उर बसे परम तीरथ ललाम॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थङ्कर निर्वाणक्षेत्रेभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं नि.स्वाहा।

(दोहा)

सिद्धक्षेत्र पूजन करें, सिद्ध रूप को ध्यान।
धरें परम आनन्दमय, होवें सिद्ध समान॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री अक्षयतृतीया पर्व पूजन

(दोहा)

कर्मभूमि की आदि में ऋषभ मुनि अविकार।
नृप श्रेयांस दिया प्रथम इक्षु रस आहार।।
दानतीर्थ का प्रवर्तन, हुआ सु मंगलकार।
अक्षय तृतीया का दिवस, पूजें प्रभु सुखकार।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(छन्द-अवतार)

मिथ्यामल नाशक नीर, सम्यक् सुखकारी।
ले तुम समीप हे देव, नित मंगलकारी।।
पूजें हम ऋषभ मुनीश, हो युक्ताहारी।
साक्षात् अनाहारी हो, शिवमगचारी।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामिति स्वाहा।

क्रोधानल नाशक नाथ, चन्दन क्षमामयी।
पाया तुम सम सुखकार, ज्ञायक ज्ञानमयी।।पूजें.।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामिति स्वाहा।

अक्षत वैभव सुखकार, अन्तर माँहिं लखा।
क्षत् विक्षत् विभव असार, भासा मोह नसा।।पूजें.।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामिति स्वाहा।

निष्काम भावना देव, जागी हितकारी।
परमार्थ भक्ति से काम, नाशे दुखकारी।।पूजें.।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामिति स्वाहा।

हो निज से निज में तृप्त, वह विधि सिखलाई।
कैसे गावें उपकार, शाश्वत निधि पाई।।पूजें.।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामिति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्यक् प्रकाश में नाथ, शिवपथ दिखलाया।
हम रहें आपके साथ, ये ही मन भाया।।पूजें.।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामिति स्वाहा।

निष्कर्म निरामय देव, अन्तर में पाया।
ध्यावें नाशें सब कर्म, ये ही मन भाया।।पूजें.।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामिति स्वाहा।

फल पुण्य-पाप के नाथ, भोगे दुःखकारी।
अब मुक्ति महाफल देव, पावें अविकारी।।पूजें.।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामिति स्वाहा।

ले उत्तम अर्घ्य मुनीश, अति ही हर्षावें।
चरणों में नावें शीश, ध्रुव प्रभुता पावें।।पूजें.।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

जयमाला गावें सुखद, मन में धरि उल्लास।
यही भावना है प्रभो ! रहें आपके पास।।

(वीरछन्द)

दीक्षा लेकर ऋषभ मुनीश्वर, छह महीने उपवास किया।
फिर आहार निमित्त ऋषीश्वर, जगह-जगह परिभ्रमण किया।।

कोई हाथी-घोड़े-वस्त्राभूषण, रत्नों के भर थाल।
ले सन्मुख आदर से आवें, देख साधु लौटें तत्काल।।

नहिं जानें आहार-विधि, इससे सब ही लाचार हुए।
अन्तराय का उदय रहा, तेरह महीने नौ दिवस हुए।।

धन्य मुनीश्वर, धन्य आत्मबल, आकुलता का लेश नहीं।
तृप्त स्वयं में मग्न स्वयं में, किंचित् भी संक्लेश नहीं।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उदय नहीं हो दुःख का कारण, यदि स्वभाव का आश्रय हो।
निज से च्युत हो दुखी रहे, तो फिर उपचार उदय पर हो॥

दोष देखना किन्तु उदय का, कही अनीति जिनागम में।
उदय उदय में ही रहता है, नहीं प्रविष्ट हो आतम में॥

भेदज्ञान कर द्रव्यदृष्टि धर, स्वयं स्वयं में मग्न रहो।
स्वाश्रय से ही शान्ति मिलेगी, आकुलता नहिं व्यर्थ करो॥

अशरण जग में अरे आत्मन्! नहीं कोई हो अवलम्बन।
तजकर झूठी आस पराई, अपने प्रभु का करो भजन॥

इन्द्रादिक से सेवक चक्री, कामदेव से सुत जिनके।
देखो एक समय पहले भी, नहीं आहार मिले उनके॥

हुई योग्यता सहजपने ही, सर्व निमित्त मिले तत्क्षण।
मंगल सपनों का फल सुनकर, नृप श्रेयांस थे हर्ष मगन॥

देखा आते ऋषभ मुनि को, जातिस्मरण हुआ सुखकार।
नवधा भक्ति पूर्वक नृप ने, दिया इक्षुरस का आहार॥

पंचाश्चर्य किये देवों ने, रत्न पुष्प थे बरसाए॥
पवन सुगन्धित शीतल चलती, जय जय से नभ गुंजाए॥

धन्य पात्र है धन्य है दाता, धन्य दिवस धनि है आहार।
दानतीर्थ का हुआ प्रवर्तन, घर-घर होवें मंगलाचार॥

तिथि वैशाख सुदी तृतीया थी, अक्षय तृतीया पर्व चला।
आदीश्वर की स्तुति करते, सहजहिं मुक्तिमार्ग मिला॥

ऋषभदेव सम रहे धीरता, आराधन निर्विघ्न खिले।
नहीं मिले भोजन तक फिर भी, आराधन से नहीं चले॥

थकित हुआ हूँ भव भोगों से, लेश मात्र नहिं सुख पाया।
हो निराश सब जग से स्वामिन्, चरण शरण में हूँ आया॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यही भावना स्वयं स्वयं में, तृप्त रहूँ प्रभु तुष्ट रहूँ।
ध्येय रूप निज पद को ध्याते, ध्याते शिवपद प्रगट करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जयमाला महाऽर्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।

(दोहा)

ज्ञाता हो दाता बनें, रंच न हो अभिमान।
धर्म तीर्थ जयवन्त हो, उत्तम त्याग महान॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि॥

श्री मुनिराज पूजन

(वीरछन्द)

विषयाशा आरम्भ रहित जो, ज्ञान ध्यान तप लीन रहें।
सकल परिग्रह शून्य मुनीश्वर, सहज सदा स्वाधीन रहें॥
प्रचुर स्व-संवेदनमय परिणति, रत्नत्रय अविकारी है।
महा हर्ष से उनको पूजें, नित प्रति धोक हमारी है॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिश्वराः ! अत्र अवतर अवतर। ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिश्वराः ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिश्वराः! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

(अवतार)

मुनिमन सम समता नीर, निज में ही पाया।
नाशें जन्मादिक दोष, शाश्वत पद भाया॥
गुण मूल अठाइस युक्त, मुनिवर को ध्यावें।
अपना निर्ग्रंथ स्वरूप, हम भी प्रगटावें॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो जन्ममरामृत्यु-विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

चन्दन सम धर्म सुगन्ध, जग में फैलावें।
बैरी भी बैर विसारि, चरणन सिर नावें॥गुण मूल.॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्व मुनिवरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लख तुष समान तन भिन्न, अक्षय शुद्धातम।
आराधें निर्मम होय, कारण परमातम ।।गुण मूल. ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

निष्कम्प मेरु सम चित्त, काम विकार न हो।
लहुँ परम शील निर्दोष, गुरु आदर्श रहो।।गुण मूल. ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

निर्दोष सरस आहार, माँहिं उदास रहें।
हैं निजानन्द में तृप्त, हम यह वृत्ति लहें।।
गुण मूल अठाइस युक्त, मुनिवर को ध्यावें।
अपना निर्ग्रंथ स्वरूप, हम भी प्रगटावें।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

निर्मल निज ज्ञायक भाव, दृष्टि माँहिं रहे।
कैसे उपजावे मोह, ज्ञान प्रकाश जगे।।गुण मूल. ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

तज आर्त रौद्र दुर्ध्यान, आतम ध्यान धरें।
उनको पूजें हर्षाय, कर्म, कलंक हरें।।गुण मूल. ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

निश्चल निजपद में लीन, मुनि नहिं भरमावें।
निस्पृह निर्वांछक होय, मुक्ति फल पावें।।गुण मूल. ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

चक्री चरणन शिर नाय, महिमा प्रगट करें।
लेकर बहुमूल्य सु अर्घ्य, हम भी भक्ति करें ।।गुण मूल. ।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

(दोहा)

कामादिक रिपु जीतकर, रहें सदा निर्द्वन्द।
तिनके गुण चिन्तत कटें, सहज कर्म के फन्द॥

(चौपाई)

मुनिगुण गावत चित हुलसाय, जनम-जनम के क्लेश नशाय।
शुद्ध उपयोग धर्म अवधार, होय विरागी परिग्रह डार॥

तीन कषाय चौकड़ी नाश, निर्ग्रंथ रूप सु कियो प्रकाश।
अन्तर आतम अनुभव लीन, पाप परिणति हुई प्रक्षीण॥

पंच महाव्रत सोहें सार, पंच समिति निज-पर हितकार।
त्रय गुप्ति हैं मंगलकार, संयम पालें बिन अतिचार॥

पंचेन्द्रिय अरु मन वश करे, षट् आवश्यक पालें खरे।
नग्नरूप स्नान सु त्याग, केशलौंच करते तज राग॥

एकबार लें खड़े अहार, तजें दन्त धोवन अघकार।
भूमि माँहिं कछु शयन सु करें, निद्रा में भी जाग्रत रहें॥

द्वादश तप दश धर्म सम्हार, निज स्वरूप साधें अविकार।
नहीं भ्रमावें निज उपयोग, धारें निश्चल आतम योग॥

क्रोध नहीं उपसर्गों माँहिं, मान न चक्री शीश नवाहिं ।
माया शून्य सरल परिणाम, निर्लोभी वृत्ति निष्काम॥

सबके उपकारी वर वीर, आपद माँहिं बंधावें धीर।
आत्मधर्म का दें उपदेश, नाशें सर्व जगत के क्लेश॥

जग की नश्वरता दर्शाय, भेदज्ञान की कला बताय।
ज्ञायक की महिमा दिखलाय, भव बन्धन से लेंय छुड़ाय॥

परम जितेन्द्रिय मंगल रूप, लोकोत्तम है साधु स्वरूप।
अनन्य शरण भव्यों को आप, मेटें चाह दाह भव ताप॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धन्य-धन्य वनवासी सन्त, सहज दिखावें भव का अन्त।
अनियतवासी सहज विहार, चन्द्र चाँदनी सम अविकार॥
रखें नहीं जग से सम्बन्ध, करें नहीं कोई अनुबन्ध॥
आतम रूप लखें निर्बन्ध, नशें सहज कर्मों के बन्ध।
मुनिवर सम मुनिवर ही जान, वचनातीत स्वरूप महान।
ज्ञान माँहिं मुनिरूप निहार, करें वन्दना मंगलकार॥
पाऊँ उनका ही सत्संग, ध्याऊँ अपना रूप असंग।
यही भावना उर में धार, निश्चय ही होवें भवपार॥

ॐ ह्रीं श्रीत्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

अहो! सदा हृदय बसें, परम गुरू निर्ग्रंथ।
जिनके चरण प्रसाद से, भव्य लहें शिवपंथ॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि॥

शान्ति पाठ

हूँ शान्तिमय ध्रुव ज्ञानमय, ऐसी प्रतीति जब जगे।
अनुभूति हो आनन्दमय, सारी विकलता तब भगे॥१॥
निजभाव ही है एक आश्रय, शान्ति दाता सुखमयी।
भूल स्व दर-दर भटकते, शान्ति कब किसने लही॥२॥
निज घर बिना विश्राम नाहीं, आज यह निश्चय हुआ।
मोह की चट्टान टूटी, शान्ति निर्झर बह रहा॥३॥
यह शान्तिधारा हो अखण्डित, चिरकाल तक बहती रहे।
होवें निमग्न सुभव्यजन, सुखशान्ति सब पाते रहें॥४॥
पूजोपरान्त प्रभो यही, इक भावना है हो रही।
लीन निज में ही रहूँ, प्रभु और कुछ वाँछा नहीं॥५॥
सहज परम आनन्दमय निज ज्ञायक अविकार।
स्व में लीन परिणति विषैं, बहती समरस धार॥६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विसर्जन पाठ

थी धन्य घड़ी जब निज ज्ञायक की, महिमा मैंने पहिचानी।
हे वीतराग सर्वज्ञ महा-उपकारी, तव पूजन ठानी॥१॥

सुख हेतु जगत में भ्रमता था, अन्तर में सुख सागर पाया।
प्रभु निजानन्द में लीन देख, मोय यही भाव अब उमगाया॥२॥

पूजा का भाव विसर्जन कर, तुमसम ही निज में थिर होऊँ।
उपयेाग नहीं बाहर जावे, भव क्लेश बीज अब नहिं बोऊँ॥३॥

पूजा का किया विसर्जन प्रभु, और पाप भाव में पहुँच गया।
अब तक की मूरखता भारी, तज नीम हलाहल हाय पिया॥४॥

ये तो भारी कमजोरी है, उपयोग नहीं टिक पाता है।
तत्त्वादिक चिन्तन भक्ति से भी दूर पाप में जाता है॥५॥

हे बल-अनन्त के धनी विभो ! भावों में तबतक बस जाना।
निज से बाहर भटकी परिणति, निज ज्ञायक में ही पहुँचाना॥६॥

पावन पुरुषार्थ प्रकट होवे, बस निजानन्द में मग्न रहूँ।
तुम आवागमन विमुक्त हुए, मैं पास आपके जा तिष्ठूँ॥७॥

स्वयं में प्रवाहित चैतन्यधारा,
झलकते हैं जिसमें विचित्र ज्ञेयाकारा।
रहे भिन्न ज्ञेयों से चित् निराकार,
त्रिकाली निजातम जिसमें निहारा॥
स्वयं ध्यान ध्याता स्वयं ध्येय रूपं,
चिदानन्द चैतन्य चिन्मय अनूपं।
हुआ धन्य पाकर तुम्हें जिनराजं,
शरण ली अहो आज चैतन्यराजं॥

-इन्द्रध्वज विधान, पृष्ठ ६९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री चौबीस तीर्थंकर विधान (खण्ड-३)

विधान-पीठिका

(गीतिका)

श्री आदिनाथ भगवान

लीन हो निज ध्येय में, सर्वज्ञ पद पाया प्रभो।
आदि तीर्थंकर नमन अविकार हो, सुखकार हो॥
अखिल जग में, एक शुद्धातम ही भासे सार है।
पाया स्वयं में ही अहो, आनंद अपरम्पार है॥

श्री अजितनाथ भगवान

मोह ही हुआ पराजित, अजित प्रभु अविजित रहे।
चिद्रूप को आराधकर, शिवभूप जिनवर हो गये॥
ऐसा पराक्रम प्रगट होवे, निर्विकल्प रहूँ सदा।
संतुष्ट प्रभु निर्मुक्त निज में, सहज तृप्त रहूँ सदा॥

श्री सम्भवनाथ भगवान

अहो संभवनाथ दर्शन कर, परम आनन्द हुआ।
परभाव विरहित एक ज्ञायक भाव का दर्शन हुआ॥
भावना जागी सहज, निर्ग्रंथ पद अविकार हो।
तृप्त निज में ही सदा, पर की न चाह लगार हो॥

श्री अभिनन्दननाथ भगवान

अहो अभिनन्दन प्रभो, स्वीकार अभिनन्दन करो।
आत्म आराधन करूँ मैं, आप प्रभु साक्षी रहो॥
क्रूरता से शून्य होवे, सिंहवृत्ति ज्ञानमय।
रहूँ निज में मग्न सहजहिं, कर्म नाशें क्लेशमय॥

श्री सुमतिनाथ भगवान

कुमति वश धर निमित्त दृष्टि, सहा दुःख अपार है।
चिदानन्दमय आत्मा ही, अमित गुण भंडार है॥
आत्म आश्रय से जिनेश्वर, ध्रुव अचल शिवपद लहा।
धनि सुमति जिन, सुमतिदाता जगत त्राता हो अहा॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री पद्मप्रभ भगवान

स्वर्ण विरचित पंकजों की, पंक्ति प्रभो चरणों तले।
शोभती सु विहार काले, और बहु अतिशय धरे।
पद्मवत् निर्लिप्त मुद्रा, मुक्तिपथ दरशावती।
पद्मप्रभ तुमको निरखते, याद अपनी आवती।।

श्री सुपार्श्वनाथ भगवान

हे सुपार्श्व जिनेन्द्र तेरा, स्तवन कैसे करूँ।
गुण अनन्त अहो अलौकिक, आदि अन्त नहीं लखूँ।।
वचन में आवे नहीं, चिन्तन न पावे पार है।
स्वानुभवमय भक्ति वर्ते, वंदना अविकार है।।

श्री चन्द्रप्रभ भगवान

सुधा झरती शांत मूरति, चन्द्रप्रभ अति सोहनी।
मोहनाशक दिव्यध्वनि, स्वामी परम मनमोहिनी।।
चन्द्र किरणों के परस से, सिन्धु ज्यों उछले प्रभो।
उछले परम आनन्द सागर, सहज दरशन से विभो।।

श्री पुष्पदंत भगवान

हे प्रभो! अध्यात्म विद्या, दिव्यध्वनि से तुम कही।
पुष्पदन्त जिनेन्द्र मुक्ति, की सुविधि भविजन लही।।
नाम सार्थक सुविधिनाथ, स्वपद भजूँ अतिचाव से।
निश्चिंत हूँ निर्द्वन्द्व हूँ रुचि लगी सहज स्वभाव से।।

श्री शीतलनाथ भगवान

आधि-व्याधि-उपाधिमय, भवताप से तपता रहा।
अहो! शीतलनाथ मम उर, दर्श से शीतल भया।।
परम शीतल तत्त्व, निज शुद्धात्मा पाया अहा।
तृप्त निज में ही रहूँ, संताप नहिं उपजे कदा।।

श्री श्रेयांसनाथ भगवान

निरपेक्ष होते भी अहो, जग दुख हरो श्रेयांस जिन।
सहज जीते कर्म शत्रु, क्रोध बिन शस्त्रादि बिन।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

शृंगार बिन स्वामी स्वयं ही, जगत के शृंगार हो।
ध्रुव श्रेय पाया नाथ, मेरी वंदना अविकार हो।।

श्री वासुपूज्य भगवान

चक्र से या वज्र से भी, मोह जो नशता नहीं।
जिननाथ तव उपदेश से, दुर्मोह नाशे सहज ही।।
इन्द्रादि से भी पूज्य स्वामिन्, वासुपूज्य सु नाम है।
सहज पूज्य स्वभाव पाया, नाथ सहज प्रणाम है।।

श्री विमलनाथ भगवान

स्नान बिन निर्मल हुए, प्रभु आप सहज स्वभाव से।
स्वयं छूटे कर्ममल, विभु आत्मध्यान प्रभाव से।।
विमल जिनवर दर्श करते, भेदज्ञान हृदय जगा।
भ्रान्ति विघटी शान्ति प्रगटी, भाव अति निर्मल भया।।

श्री अनन्तनाथ भगवान

बसे सादि अनंत शिव में, परम आनन्द रूप हो।
प्रगटे अनन्त सुगुण जिनेश्वर, रहो ज्ञाता रूप हो।।
प्रभुता अनन्त सुज्ञान में भी, अनंत ही प्रतिभासती।
प्रभु अनन्त सुदर्श से, महिमा अनन्त प्रकाशती।।

श्री धर्मनाथ भगवान

जिन धर्म पाया भाग्य से, आनंद अपरम्पार है।
दीखे स्वयं में ही अहो, अक्षय विभव भंडार है।।
निन्दा करें या त्रास दें जन, धर्म नहीं छोड़ूँ प्रभो।
हे धर्मनाथ जिनेन्द्र दुःखमय, बन्ध सब तोड़ूँ विभो।।

श्री शान्तिनाथ भगवान

जन्म क्षण में ही जगत में, सहज ही साता हुई।
सहस्र नेत्रों देखते, नहीं इन्द्र को तृप्ति हुई।।
विभव चक्री का प्रभो निस्सार जाना आपने।
हे शान्तिजिन! सुखशान्तिमय, निजपद प्रकाशा आपने।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री कुन्थुनाथ भगवान

प्रभु अहिंसा धर्म जग में, आपने विस्तृत किया।
मैत्री-प्रमोद, दया तथा माध्यस्थ भाव सिखा दिया।।
अनुभूत मुक्तिमार्ग का, उपदेश दे प्रभु शिव बसे।
हे कुन्थुनाथ जिनेन्द्र ! सहज सु, भक्ति उर में उल्लसे।।

श्री अरनाथ भगवान

षट्खण्ड पर पाकर विजय, चक्री कहाए हे प्रभो।
फिर विजय पाकर मोह पर, तीर्थेश कहलाए विभो।।
भव रहित भगवान आत्मा, आप दर्शाया हमें।
अरनाथजिन ! उपकारवश, नितभाव से वन्दन तुम्हें।।

श्री मल्लिनाथ भगवान

हे बाल ब्रह्मचारी प्रभो, चिद्ब्रह्म रस में रम रहे।
यौवन समय निर्ग्रन्थ दीक्षा, धार शिवचारी भये।।
त्रैलोक्य जेता काम जीता, होय निर्मोही सहज।
हे मल्लिजिन! प्रभुरूप लखते, शीश झुक जाता सहज।।

श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान

हे नाथ मुनिसुव्रत तुम्हें, पाकर सनाथ हुआ जगत।
दिव्य ध्वनि सुनकर सु जाना, भविजनों ने सत् असत्।।
असत् रूप विभाव तज, सत् भाव की आराधना।
भव्यजीव तिरें भवोदधि, हो सहज प्रभु वन्दना।।

श्री नमिनाथ भगवान

अणुमात्र का स्वामित्व तज, त्रयलोक के स्वामी हुए।
आत्मा में मग्न हो, सर्वज्ञ जगनामी हुए।।
शुद्धात्मा ही मंगलोत्तम, शरण रूप अनन्य है।
हो नमन् नमि जिन ! आपको, नमनीय रूप अनन्य है।।

श्री नेमिनाथ भगवान

हे नेमि प्रभु ! आदर्श है, वैराग्य जग में आपका।
चढ़ गये गिरनार स्वामी, तोड़ बन्धन पाप का।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्ग्रंथ हो, निर्द्वन्द हो, प्रभु मग्न निज में ही हुए।
प्रभुता सहज प्रगटी, अलौकिक तृप्त निज में ही हुए।।

श्री पार्श्वनाथ भगवान

नाग-नागिन दग्ध लखकर, करुण हो संबोधिया।
धरणेन्द्र पद्मावती हुए, वैराग्य प्रभु तुम भी लिया।।
निर्ग्रंथ हो आत्मार्थ साधा, हो गये परमात्मा।
जग को बताया पार्श्वप्रभु, परमात्मा सब आत्मा।।

श्री महावीर भगवान

जीता सुभट दुर्मोह सा प्रभु, मदन को निर्मद किया।
जग से विरत हो आत्मरत, परमात्म पद को पा लिया।।
तत्त्वोपदेश दिया प्रभो ! आदेय शुद्धात्मा कहा।
हे वीर जिनवर तुम प्रसाद सु, सहज निजपद हम लहा।।

मंगलाचरण

(दोहा)

नेता मुक्तिमार्ग के, साँचे तारणहार।
कर्म कलंक विनष्ट कर, हुए विश्व ज्ञातार।।

तीर्थंकर चौबीस वर, मंगलमय अविकार।
भक्तिभाव से पूजते, मन में हर्ष अपार।।

पूजों समुच्चय रूप से, अरु प्रत्येक-प्रत्येक।
अन्तर माँहिं निहारता, मैं अनेक में एक।।

निजानन्द निज में लहूँ, भोगों की नहिं चाह।
पाऊँ मैं भी आप सम, रत्नत्रय की राह।।

जब तक नहीं निर्ग्रंथ पद, प्रगटे मंगलरूप।
जिनवर पूजन के निमित्त, भाऊँ शुद्ध चिद्रूप।।

मुक्तिमार्ग की सुविधि ही, जान प्रशस्त विधान।
भक्ति भाव से पूजते, करूँ भेद-विज्ञान।।

।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री चौबीसी समुच्चय पूजन

(गीतिका)

पंचकल्याणक सुपूजित, ऋषभ आदि जिनेश्वरा।
वर्तमान में इस क्षेत्र में, विभु धर्म-तीर्थ प्रगट करा॥
पूजन करूँ अति भक्ति से, उपकार परम विचारि के।
बोधि समाधि प्राप्त हो, यह भाव उर में धारि के॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिनसमूह अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिनसमूह अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति जिनसमूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(रोला)

भव-भव में प्रभु जन्म मरण करि बहु दुख पाया।
दर्शन पाकर आज देव! अमरत्व लखाया॥
समता जल ले पूजूँ ध्याऊँ हे अविकारी।
ऋषभादिक चौबीस जिनेश्वर मंगलकारी॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व...।

क्षमा भाव धरि क्रोधादिक पर प्रभु जय पाई।
आत्म शान्ति की युक्ति दिव्यध्वनि से दरशाई॥
क्षमा भाव चन्दन ले पूजूँ हे अविकारी॥ऋषभादिक.॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्व. स्वाहा।

क्षत् भावों में फँसकर नहिं संसृत बढ़ाना।
नाथ इष्ट है तुम सम ही अक्षय पद पाना॥
आत्म भावना अक्षत ले पूजूँ अविकारी॥ऋषभादिक.॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु प्रसाद से काम सुभट क्षण में विनशाऊँ।
भाऊँ ब्रह्म स्वरूप सहज आनन्द प्रगटाऊँ॥
जजूँ पुष्प निष्काम भावमय ले अविकारी॥ऋषभादिक.॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चपल इन्द्रियों पर जय पाकर तृप्ति पाऊँ।
निजानन्द रस आस्वादी हो क्षुधा मिटाऊँ॥
सहज तृप्त निर्वांछक हो पूजूँ अविकारी॥ऋषभादिक.॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवैद्यं निर्व. स्वाहा।

जिनवाणी सुन भेदज्ञान कर मोह तजूँ मैं।
अन्तर्मुख हो परमभाव निज सहज लखूँ मैं॥
निर्मोही हो पूजूँ ध्याऊँ हे अविकारी॥ऋषभादिक.॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।

द्रव्य भाव नो कर्मों से शुद्धातम न्यारा।
अहो आपकी साक्षी में प्रत्यक्ष निहारा॥
कर्म कलंक नशाऊँ पूजूँ हे अविकारी॥ऋषभादिक.॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हो निरीह निज से ही निज में शिवफल पाया।
नित्य मुक्त आतम परमातम सम दर्शाया॥
ध्याऊँ आत्म स्वरूप सहज पूजूँ अविकारी॥ऋषभादिक.॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अरे! धूल सम जग वैभव क्षण में ठुकराया।
अन्तर्मग्न हुए अनर्घ्य निज वैभव पाया॥
जजूँ अर्घ्य ले शुद्ध भावमय हे अविकारी॥ऋषभादिक.॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

सहज भाव से पूजकर, गाऊँ शुभ जयमाल।
ध्याऊँ ध्येय स्वरूप निज, कटे कर्म जंजाल॥

(भुजंगप्रयात, तर्ज-मैं हूँ पूर्ण ज्ञायक...)

ऋषभनाथ पूजूँ महासुक्खकारी, अजितनाथ वन्दूँ करम रिपु संहारी।
सम्भव जिनेश्वर जजूँ शम प्रदाता, नमूँ नाथ अभिनन्दनं शिव विधाता॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सुमति पद्मप्रभ अरु सुपारस को वंदन, अहो चन्द्रप्रभ जिन भजूँ दुख निकन्दन।
श्री पुष्पदंत सु शीतल जिनेश्वर, नमूँ भक्ति से पूज्य श्रेयांस जिनवर॥
प्रथम बालयति वासुपूज्य सुस्वामी, करममल विघातक विमल जिन नमामी।
अनन्त जिनेश्वर सुगुणऽनन्त धारी, नमूँ धर्मनाथं धरम पथ प्रचारी॥
जजूँ शान्तिनाथं परम शान्तिदायक, जयतु कुन्थु जिनवर अहिंसा विधायक।
श्री अर जिनेन्द्रं धरम नीति धारी, नमूँ मल्लि जिनवर परम ब्रह्मचारी॥
मुनिसुव्रतं नमि तथा नेमिनाथं, नमूँ पार्श्वनाथं श्री वीरनाथं।
महाभक्ति से नाथ गुणगान करके, धरम तीर्थ पाऊँ स्वपद दृष्टि धरिके॥
न लौकिक फलों की प्रभो कामना है, न विषसम कुभोगों की कुछ वासना है।
रहो आप आदर्श निजपद को ध्याऊँ, कि साधन ही क्या? साध्य भी निज में पाऊँ॥

(घत्ता)

जय जय अविकारी, शिवसुखकारी, तीर्थेश्वर चौबीस भला।
जो प्रभु गुण गावें, मोह नशावें, पावें केवलज्ञान कला॥

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादि चतुर्विंशतिजिनेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं नि.

(सोरठा)

पूजें जिनपद सार, ध्यावें निज शुद्धात्मा।
सो पावें भव पार, त्रिविध कर्ममल नाशिके॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

सर्व दुःख से मुक्त होने का सर्वोत्कृष्ट उपाय आत्मज्ञान को कहा है, यह ज्ञानी पुरुषों का वचन सांचा है, अत्यन्त सांचा है।

देह की जितनी चिन्ता रखता है उतनी नहीं, पर उससे अनंतगुनी चिन्ता आत्मा की रख;
क्योंकि अनंतभवों को एक भव में दूर करना है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री आदिनाथ जिनपूजन

(दोहा)

नमूँ जिनेश्वर देव मैं, परम सुखी भगवान।
आराधूँ शुद्धात्मा, पाऊँ पद निर्वाण॥

हे धर्म-पिता सर्वज्ञ जिनेश्वर, चेतन मूर्ति आदि जिनम्।
मेरा ज्ञायक रूप दिखाने दर्पण सम, प्रभु आदि जिनम्॥
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण पा सहज सुधारस आप पिया।
मुक्तिमार्ग दर्शा कर स्वामी, भव्यों प्रति उपकार किया॥
साधक शिवपद का अहो, आया प्रभु के द्वार।
सहज निजातम भावना, जिन पूजा का सार॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चेतनमय है सुख सरोवर, श्रद्धा पुष्प सुशोभित हैं।
आनन्द मोती चरते हंस सुकेलि करैं सुख पाते हैं॥
स्वानुभूति के कलश कनकमय, भरि-भरि प्रभु को पूजैं हैं।
ऐसे धर्मी निर्मल जल से, मोह मैल को धोते हैं॥
अथाह सरवर आत्मा, आनन्द रस छलकाय।
शान्त आत्म रसपान से, जन्म-मरण मिट जाय॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मग्न प्रभु चेतन सागर में शान्ति जल से न्हाय रहे।
मोह मैल को दूर हटाकर, भवाताप से रहित भये॥
तप्त हो रहा मोह ताप से सम्यक् रस में स्नान करूँ।
समरस चन्दन से पूजूँ अरु तेरा पथ अनुसरण करूँ॥
चेतन रस को घोलकर, चारित्र सुगन्ध मिलाय।
भाव सहित पूजा करूँ, शीतलता प्रगटाय॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अक्ष अगोचर प्रभो आप, पर अक्षत से पूजा करता।
अक्षातीत ज्ञान प्रगटा कर, शाश्वत अक्षय पद भजता॥
अन्तर्मुख परिणति के द्वारा, प्रभुवर का सम्मान करूँ।
पूजूँ जिनवर परमभाव से, निज सुख का आस्वाद करूँ॥
अक्षय सुख का स्वाद लूँ, इन्द्रिय मन के पार।
सिद्ध प्रभु सुख मगन ज्यों, तिष्ठे मोक्ष मंझार॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम अतीन्द्रिय देव अहो ! पूजूँ मैं श्रद्धा सुमन चढ़ा।
कृतकृत्य हुआ निष्काम हुआ, तब मुक्ति मार्ग में कदम बढ़ा॥
गुण अनन्तमय पुष्प सुगन्धित, विकसित हैं आतम में।
कभी नहीं मुरझावें परमानन्द पाया शुद्धातम में॥
रत्नत्रय के पुष्प शुभ, खिले आत्म उद्यान।
सहजभाव से पूजते हर्षित हूँ भगवान॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृप्त क्षुधा से रहित जिनेश्वर चरु लेकर मैं पूज करूँ।
अनुभव रसमय नैवेद्य सम्यक्, तुम चरणों में प्राप्त करूँ॥
चाह नहीं किंचित् भी स्वामी, स्वयं स्वयं में तृप्त रहूँ।
सादि-अनन्त मुक्तिपद जिनवर, आत्मध्यान से प्रकट लहूँ॥
जग का झूँठा स्वाद तो, चाख्यो बार अनन्त।
वीतराग निज स्वाद लूँ, होवे भव का अन्त॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अगणित दीपों का प्रकाश भी, दूर नहीं अज्ञान करे।
आत्मज्ञान की एक किरण, ही मोह तिमिर को तुरत हरे॥
अहो ज्ञान की अद्भुत महिमा, मोही नहिं पहिचान सकें।
आत्मज्ञान का दीप जलाकर, साधक स्व-पर प्रकाश करें॥
स्वानुभूति प्रकाश में, भासे आत्मस्वरूप।
राग पवन लागे नहीं, केवलज्योति अनूप॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वेष भाव तो नहीं रहा, रागांश मात्र अवशेष हुआ।
ध्यान अग्नि प्रगटी ऐसी, तहाँ कर्मेन्धन सब भस्म हुआ॥
अहो ! आत्मशुद्धि अद्भुत है, धर्म सुगन्धी फैल रही।
दशलक्षण की प्राप्ति करने, प्रभु चरणों की शरण गही॥
स्व-सन्मुख हो अनुभवूँ, ज्ञानानन्द स्वभाव।
निज में ही हो लीनता, विनसैं सर्व विभाव॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यग्दर्शन मूल अहो ! चारित्र वृक्ष पल्लवित हुआ।
स्वानुभूतिमय अमृत फल, आस्वादूँ अति ही तृप्त हुआ॥
मोक्ष महाफल भी आवेगा, निश्चय ही विश्वास अहो।
निर्विकल्प हो पूर्ण लीनता, फल पूजा का प्रभु फल हो॥
निर्वांछक आनन्दमय, चाह न रही लगार।
भेद न पूजक पूज्य का, फल पूजा का सार॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् तत्त्व स्वरूप न जाना, नहिं यथार्थत: पूज सका।
रागभाव को रहा पोषता, वीतरागता से चूका॥
काललब्धि जागी अन्तर में, भास रहा है सत्य स्वरूप।
पाऊँगा निज सम्यक् प्रभुता, भास रही निज माँहिं अनूप॥
सेवा सत्य स्वरूप की, ये ही प्रभु की सेव।
जिन सेवा व्यवहार से, निश्चय आतम देव॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(सोरठा)

कलि असाढ़ द्वय जान , सर्वार्थसिद्धि विमान से।
आय बसे भगवान, मरुदेवी के गर्भ में॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गर्भवास नहिं इष्ट, तहाँ भी प्रभु आनन्दमय।
माँ को भी नहिं कष्ट, रत्न पिटारे ज्यों रहे॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयां गर्भकल्याणकमंडिताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.

पृथ्वी हुई सनाथ नवमी कृष्णा चैत को।
नरकों में भी नाथ, जन्म समय साता हुई॥
इन्द्रादिक सिर टेक, कियो महोत्सव जन्म का।
मेरु पर अभिषेक, क्षीरोदधि तें प्रभु भयो॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

भासा जगत असार, देख निधन नीलांजना।
नवमी कृष्णा चैत्र परम दिगम्बर पद धरो॥
चिदानन्द पद सार, ध्याने को मुनि पद लिया।
परम हर्ष उर-धार लौकान्तिक, धनि-धनि कहा॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

प्रगट्यो केवलज्ञान, फाल्गुन कृष्ण एकादशी।
धर्मतीर्थ अम्लान, हुआ प्रवर्तित आप से॥
समझा तत्त्व स्वरूप, दिव्य देशना श्रवण कर।
पाई मुक्ति अनूप, भव्यन निज पुरुषार्थ से॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.

पायो अविचल थान, चौदश कृष्णा माघ दिन।
गिरि कैलाश महान, तीर्थ प्रगट जग में हुआ॥
सहज मुक्ति दातार, शुद्धातम की भावना।
वर्ते प्रभु सुखकार, मैं भी तिष्ठूँ मोक्ष में॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

आदीश्वर वन्दूँ सदा, चिदानन्द छलकाय।
चरण-शरण में आपकी, मुक्ति सहज दिखाय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धन्य ध्यान में आप विराजे, देख रहे प्रभु आतमराम।
ज्ञाता-दृष्टा अहो जिनेश्वर, परमज्योतिमय आनन्दधाम॥

रत्नत्रय आभूषण साँचे, जड़ आभूषण का क्या काम?
राग-द्वेष निःशेष हुए हैं, वस्त्र-शस्त्र का लेश न नाम॥

तीन लोक के स्वयं मुकुट हो, स्वर्ण मुकुट का है क्या काम?
प्रभु त्रिलोक के नाथ कहाओ, फिर भी निज में ही विश्राम॥

भव्य निहारें अहो आपको, आप निहारें अपनी ओर।
धन्य आपकी वीतरागता, प्रभुता का प्रभु ओर न छोर॥

आप नहीं देते कुछ भी पर, भक्त आप से ले लेते।
दर्शन कर उपदेश श्रवण कर, तत्त्वज्ञान को पा लेते॥

भेदज्ञान अरु स्वानुभूति कर, शिवपथ में लग जाते हैं।
अहो! आप सम स्वाश्रय द्वारा, निज प्रभुता प्रगटाते हैं॥

जब तक मुक्ति नहीं होती, प्रभु पुण्य सातिशय होने से।
चक्री इन्द्रादिक के वैभव, मिलें अन्न-संग के तुष-से॥

पर उनको चाहे नहिं ज्ञानी, मिलें किन्तु आसक्त न हों।
निजानन्द अमृत रस पीते, विष-फल चाहे कौन अहो?

भाते नित वैराग्य भावना, क्षण में छोड़ चले जाते।
मुनि दीक्षा ले परम तपस्वी, निज में ही रमते जाते॥

घोर परीषह उपसर्गों में मन सुमेरु नहिं कम्पित हो।
क्षण-क्षण आनन्द रस वृद्धिंगत, क्षपकश्रेणि आरोहण हो॥

शुक्लध्यान बल घाति विनष्टे, अर्हत् दशा प्रगट होती।
अल्पकाल में सर्व कर्ममल-वर्जित मुक्ति सहज होती॥

परमानन्दमय दर्श आपका, मंगल उत्तम शरण ललाम।
निरावरण निर्लेप परम प्रभु, सम्यक् भावे सहज प्रणाम॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञान माँहिं स्थापन कीना, स्व-सन्मुख होकर अभिराम।
स्वयं सिद्ध सर्वज्ञ स्वभावी, प्रत्यक्ष निहारूँ आतमराम॥

दोहा- प्रभु नन्दन मैं आपका, हूँ प्रभुता सम्पन्न।
अल्पकाल में आपके, तिष्ठूँगा आसन्न॥

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं नि. स्वाहा।

दोहा- दर्शन-ज्ञानस्वभावमय, सुख अनन्त की खान।
जाके आश्रय प्रगटता, अविचल पद निर्वान॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि॥

श्री अजितनाथ जिनपूजन

(दोहा)

मोह महारिपु जीतकर, कामादिक रिपु जीत।
सर्व कर्ममल धोय के, मेटी भव की रीति॥
भावसहित पूजा करूँ, प्रभु चित माँहिं वसाय।
तृप्त रहूँ आनन्द में, जाननहार जनाय॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(रोला)

शाश्वत प्रभु अवलोक, परम आनन्द उपजाया।
प्रभु प्रसाद से जन्म जरान्तक, भय विनशाया॥
अजित जिनेश्वर भक्ति भाव से पूजन तेरा।
करूँ सहज हो, वृद्धिंगत रत्नत्रय मेरा॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

सहज ज्ञान में भासित, ज्ञायक अनुभव आये।
शान्त ज्ञेय निष्ठा हो, भव आताप नशाये॥अजित...॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षत् विभाव से भिन्न, स्वयं को अक्षय ध्याऊँ।
प्रभु का यह उपकार, सहज अक्षय पद पाऊँ॥
अजित जिनेश्वर भक्ति भाव से पूजन तेरा।
करूँ सहज हो, वृद्धिंगत रत्नत्रय मेरा॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

रहूँ परम निष्काम आत्म आश्रय के बल से।
सर्व वासना मिटे ब्रह्मचर्य के ही बल से॥अजित...॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

क्षुधा वेदना की पीड़ा कैसे उपजावे?
वेदक वेद्य अभेद, ज्ञान वेदन में आवे॥अजित...॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

चित्प्रकाशमय सदा सहज, निर्मोह निजातम।
आराधूँ हे नाथ, प्रगट हो पद परमातम॥अजित...॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

जलें ध्यान की अग्निमाँहिं, सब कर्म विकारी।
अहो विभो! निष्कर्म, अवस्था हो अविकारी॥अजित...॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

जगा हृदय बहुमान, देव तुम पूज रचाई।
हुआ परम फल, फल की अभिलाषा विनशाई॥अजित...॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हो अनर्घ्य हे नाथ! अर्घ्य क्या तुम्हें चढ़ाऊँ।
अन्तर्मुख हो पूजक-पूज्य, सु-भेद मिटाऊँ॥अजित...॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(सोरठा)

गर्भ वास निष्ताप, जेठ अमावस के दिना।
कीना प्रभुवर आप, भावसहित पूजूँ चरण॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णअमावस्यां गर्भमंगलमंडिताय श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जन्म भयो सुखकार, माघ सुदी दशमी दिवस।
आनन्द अपरम्पार, भयो सहज त्रयलोक में॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशम्यां जन्ममंगलमंडिताय श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.स्वाहा।

मुनिपद दीक्षा धार, माघ सुदी दशमी दिना।
हो निशल्य अविकार, सहज निजातम साधिया॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

घातिकर्म निरवार, पौष सुदी एकादशी।
पूर्ण ज्ञान सुखकार, पाया प्रभु अरिहंत पद॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लएकादश्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

पाया प्रभु निर्वाण, चैत्र सुदी तिथि पंचमी।
शिखर सम्मेद महान, मैं पूजों अति चाव सौं॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपंचम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

ज्ञान शरीरी नाथ को, ज्ञान माँहिं अवलोक।
ज्ञानमयी आनन्द हो, मिटें उपद्रव शोक॥

(गीतिका)

जित-शत्रु नन्दन, भवनिकन्दन, ज्ञानमय परमात्मा।
जयमाल गाऊँ भक्ति से, ध्याऊँ सहज शुद्धात्मा॥

पूर्व भव में विमलवाहन, भूप नीतिवान थे।
श्रुतकेवली मुनिराज देखे, जो गुणों की खान थे॥

उपदेश सुन अन्तर्मुखी, परिणमन प्रभु तुमने किया।
संसार में अब नहिं रहूँ, संकल्प तत्क्षण कर लिया॥

निर्ग्रन्थ हो निर्द्वन्द हो, भायीं सु सोलह भावना।
प्रकृति तीर्थंकर बंधी, शुभरूप मंगल कारना॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संन्यास पूर्वक देह तजकर, हुए प्रभु अहमिन्द्र थे।
थी शुक्ल-लेश्या भाव निर्मल, वासना से शून्य थे॥

छह माह आयु शेष थी, तब रत्न धारा वरसती।
सुन्दर हुई सम्पन्न अति, साकेत नगरी हरषती॥

सोलह सु सपने मात देखे, गर्भ में आये प्रभो।
कल्याण देवों ने मनाया, सभी हर्षाये अहो॥

फिर जन्मते अभिषेक इन्द्रों ने, सुमेरू पर किया।
थे सहज वैरागी, नहीं राज्यादि करते रस लिया॥

नक्षत्र टूटा देखते, वैराग्यमय चिन्तन किया।
अनुमोदना लौकान्तिकों की पाय हर्षाया हिया॥

आनन्दमय निर्ग्रन्थ दीक्षा धरी प्रभु आनन्द से।
आराधना करते प्रभो, छूटे करम के फन्द से॥

होकर स्वयंभू देव, मुक्ति-मार्ग दर्शाया सहज।
पुनि घाति शेष अघातिया, ध्रुव सिद्धपद पाया सहज॥

पूजा करूँ प्रभु आपकी, निष्काम हो निष्पाप हो।
परिणति स्वयं में लीन हो, आदर्श जग में आप हो॥

उच्छिष्ट सम छोड़े हुए, भव भोग इष्ट नहीं मुझे।
मम नित्य ज्ञानानन्दमय प्रभु, परम इष्ट मिला मुझे॥

सन्तुष्ट हूँ अति तृप्त हूँ, रतिवन्त हूँ निज भाव में।
जयवन्त हो श्री जैनशासन, नमन सहजस्वभाव में॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

प्रभुवर चरण प्रसाद से, विजित होंय सब कर्म।
स्वाभाविक प्रभुता खिले, रहूँ सदा निष्कर्म॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री सम्भवनाथ जिनपूजन

(दोहा)

नमूँ जिनेश्वर देव मैं, अनन्त चतुष्टयवान।
आवागमन रहित प्रभो ! करता भावाह्वान।।
दृष्टि-ज्ञान-सुध्यान में, सदा विराजो आप।
आओ प्रभु ! सन्निकट हो, मेटो मम भवताप।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(अवतार)

प्रभो ! जन्म-मरण से पार, आतमतत्त्व लखा।
जीवन का सहज प्रवाह, अनादि-अनन्त दिखा।।
हे सम्भवनाथ जिनेश ! पूँजों सुखदायी।
हे प्रभु तुम चरण प्रसाद, आतम निधि पाई।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

प्रभु भव-भव का संताप, सहज विनष्ट हुआ।
लोकोत्तर चन्दन आप, मैं कृत-कृत्य हुआ।।हे सम्भव...।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

विभु अक्षयपद अभिराम, आप दिखाया है।
अक्षत से पूजत स्वामि, चित हरषाया है।।हे सम्भव...।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

शोभे जिन सौम्य स्वरूप, अनुपम अविकारी।।
ध्रुव ब्रह्मरूप चिद्रूप, ध्याऊँ सुखकारी।।हे सम्भव...।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

हो सहज तृप्त जिनराज, अपने माँहिं सही।
संतुष्ट हुआ चित आज, वांछा शेष नहीं।।हे सम्भव...।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्मोही आत्म स्वभाव, तुम सम पहिचाना।
नाशूँ दुर्मोह विभाव, प्रभु निजपद जाना॥
हे सम्भवनाथ जिनेश ! पूँजों सुखदायी।
हे प्रभु तुम चरण प्रसाद, आतम निधि पाई॥

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

धूपायन काया माँहिं, अग्नि ध्यानमयी।
हो ज्वलित कर्म विनशाहिं, वर्तूं ज्ञानमयी॥हे सम्भव...॥

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

प्रभु प्रभुता पूर्ण निहार, परमानन्द हुआ।
प्रभु पूजक भेद विडार, जाननहार हुआ॥हे सम्भव...॥

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्रादिक पद निस्सार, भासे दुखकारी।
पाऊँ अनर्घ पद सार, अविचल अविकारी॥हे सम्भव...॥

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(तर्ज - घड़ी जिनराज दर्शन की..., तुम्हारे दर्श बिन...)

अहो ! फागुन सुदी आठें, खोलते कर्म की गाँठें।
नाथ जब गर्भ में आये, जजत इन्द्रादि हर्षाये॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्ल अष्टम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

पूर्णिमा कार्तिकी सुखमय, जन्मकल्याण मंगलमय।
भव्य बहुमान से पूजें, पूजते कर्म रिपु धूजें॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लपूर्णिमायां जन्ममंगलमंडिताय श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

पूर्णिमा मगसिरी आई, धरी दीक्षा सु सुखदाई।
किया कचलौंच प्रभु ऐसे, कर्म लौंचे हों जिन जैसे॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लपूर्णिमायां तपोमंगलमंडिताय श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

चतुर्थी कृष्ण कार्तिक को, प्रभु नाशा घातिया को।
हुआ केवल सु मंगलमय, पूजते नष्ट हो भव भय॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णचर्तुथ्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चैत सुदी षष्टि सुखदाई, प्रभो पंचम गति पाई।
अहो जिनराज को जजते, मुक्ति मिलती सहज भजते॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लषष्ठ्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

दुर्गम भवसागर विषैं, तारण-तरण जिहाज।
भक्ति भाव उर में धरूँ, गुण गाऊँ जिनराज॥

(वीर छन्द)

पूजन करते नाथ आपकी, आनन्द अपरम्पार रे।
भवविरहित हे सम्भव जिनवर, सहज लहूँ भवपार रे॥टेक॥

द्रव्येन्द्रिय,भावेन्द्रिय अरु, इन्द्रिय विषयों से भिन्न हो।
सहज अतीन्द्रिय ज्ञानानन्दमय, अनुभव करूँ अखिन्न हो॥
करूँ देव परमार्थ स्तुति, रहूँ सहज अविकार रे॥पूजन॥

एक शुद्ध निर्मम निर्मोही, स्वयं स्वयं को जान मैं।
होय क्षीण मोहादि कर्म रिपु, ऐसा धारूँ ध्यान मैं॥
रहे प्रतिष्ठित ज्ञान, ज्ञान में, चाह न रही लगार रे॥पूजन॥

उड़ते पक्षी की छाया सम, विषयों से सुख की आशा।
महाक्लेशकारी प्रभु जानी, पुद्गल का क्या विश्वासा?
हो निराश जग से हे स्वामिन्! साधूँ निज पद सार रे॥पूजन॥

रचना मेघ विघटते लखकर, जिनदीक्षा ली अविकारी।
आत्मध्यान धरि कर्म नशाये, अक्षय प्रभुता विस्तारी॥
धर्म-तीर्थ का किया प्रवर्तन, तिहुँ जग तारण हार रे॥पूजन॥

तीर्थ स्वरूप आपको पाकर, भेदज्ञान की ज्योति जगी।
दुखकारी परलक्षी परिणति, नाथ सहज ही दूर भगी॥
करूँ देव अनुकरण आपका, शिवस्वरूप शिवकार॥पूजन॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहीजन को लगे असम्भव, रागादि का मिट जाना।
आज सहज सम्भव भासे प्रभु, वीतराग पद पा जाना॥
प्रभु प्रसाद मिट जावे पूजक-पूज्य भेद दुखकार रे॥पूजन॥

(छन्द बसंततिलका)

इन्द्रादि शीश नावें, आनन्द बढ़ावें,
अति भक्ति भाव लावें, पूजा रचावें।
मैं अर्चना करूँ क्या? है शक्ति थोरी,
पूजन निमित्त परिणति, निज माँहिं जोरी॥

ॐ ह्रीं श्री सम्भवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(सोरठा)

जो पूजें मन लाय, सम्भवनाथ जिनेश को।
पावें इष्ट अघाय, अविनाशी शिवपद लहें॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री अभिनन्दननाथ जिनपूजन

(छन्द)

चन्द्र कान्ति की सूर्य तेज की, इन्द्र विभव की चाह करें।
ऐसी कान्ति तेज अरु वैभव, अभिनन्दन प्रभु सहज धरें॥
गुण अनुपम अक्षय हैं जिनवर, क्या महिमा का गान करूँ।
हृदय विराजो अभिनन्दन प्रभु, निजानन्द रस पान करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(गीतिका)

आया शरण जिननाथ की जब, सहज ही अतिशय हुआ।
दिखा शाश्वत आत्मा, मरणादि से निर्भय हुआ॥
नाथ अभिनन्दन प्रभू की, करूँ पूजा भक्ति से।
पाऊँ विशुद्धि परम जिनवर सम, स्वयं की शक्ति से॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनरूप लख मैंने लखा, शीतल स्वभाव सु आपका।
चन्दन चढ़ा निजपद भजूँ कारण नशे भवताप का॥
नाथ अभिनन्दन प्रभू की, करूँ पूजा भक्ति से।
पाऊँ विशुद्धि परम जिनवर सम, स्वयं की शक्ति से॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षय जिनेश्वर पद निरख, इन्द्रादि पद दुखमय लगे।
निज-भावमय अक्षत चढ़ाऊँ, भाग्य मेरे हैं जगे॥नाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

जिनराज गुणमय सुमन माला, कंठ में धारण करूँ।
निष्काम परम सुशील पाऊँ, भाव अब्रह्म परिहरूँ॥नाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

स्वानुभवमय सरस चरू यह, आप ढिंग पाया प्रभो।
तृप्ति हुई ऐसी कि काल अनन्त तृप्त रहूँ विभो॥नाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

निज ज्ञान-दीप प्रकाश से, आलोकमय मेरा सदन।
झलके सु लोकालोक ऐसा, ज्ञान-केवल लहूँ जिन॥नाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

यह देह धूपायन बनाकर, ध्यान की अग्नि जला।
भस्म कर्मों को करूँ, जिनधर्म है मुझको मिला॥नाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

नहीं शेष कुछ वाँछा रही, पूजा सफल मेरी हुई।
निश्चय मिले मुक्ति सुफल, जब दृष्टि है सम्यक् हुई॥नाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्या मूल्य है जड़ अर्घ्य का, पाया अनर्घ्य निजात्मा।
अर्घ्य उत्तम प्रभु चढ़ाऊँ, मुदित हो परमात्मा॥नाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचकल्याणक अर्घ्य

(सोरठा)

आये गर्भ मँझार, माँ सिद्धार्था धनि हुई।
देव किया जयकार, षष्ठी सुदि वैशाख दिन॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

हुआ जन्म सुखकार, माघ सुदी बारस तिथि।
हर्षित इन्द्र अपार, उत्सव नाना विधि किए॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

नश्वर मेघ निहार, हो विरक्त जिननाथ जी।
दीक्षा ली सुखकार, माघ सुदी बारस दिना॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

रही सहज हो नाथ, वर्ष अठारह मुनिदशा।
आप हुए जिननाथ, पौष सुदी चौदश दिना॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लचतुर्दश्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

आनन्द कूट प्रसिद्ध, शिखर सम्मेद महान है।
तहँ ते भये सुसिद्ध, षष्ठी सुदी वैशाख प्रभु॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठ्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

जयमाला जिनराज की, गाऊँ मंगलकार।
जिनकी शुभ परिणति लखे, हो वैराग्य उदार॥

(छन्द-पद्धरी)

वन्दन अभिनन्दन स्वामी को, चौथे तीर्थंकर नामी को।
विदेहक्षेत्र में नृपति महाबल, न्यायवन्त शोभें बहु दल बल॥

इक दिन सहज रूप वैरागे, यों मन माँहिं विचारन लागे।
ओस बिन्दु सम वैभव सारा, दुख कारण सब ही परिवारा॥

ज्यों-ज्यों भोग मनोहर पावे, तृष्णा त्यों-त्यों बढ़ती जावे।
जब तक श्वांसा तब तक आशा, आशावान जगत के दासा॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब मन की आशा मर जावे, परम सुखी जगनाथ कहावे।
सुख सिद्धि का एकहि साधन, निज ज्ञायक प्रभु का आराधन॥

अब मैं समय नहीं खोऊँगा, जग प्रपंच तज मुनि होऊँगा।
यों विचार त्यागा संसारा, आनन्दमय निर्ग्रन्थ पद धारा॥

तज परिग्रह प्रभु हुए विरागी, हर्ष सहित मुनिदीक्षा धारी।
उत्तम तीर्थंकर पददायी, सोलहकारण भावना भायी॥

देह समाधि पूर्वक छोड़ी, निज परिणति निज में ही जोड़ी।
विजय विमान माँहिं उपजाये, हो अहमिन्द्र दिव्य सुख पाये॥

छह महीना आयुष्य रह गई, नगरि अयोध्या शोभित भई।
रत्न धनपति ने वर्षाये, माँ को सोलह स्वप्न दिखाये॥

अन्तिम गर्भ माहिं प्रभु आए, कल्याणक इन्द्रादि मनाए।
जन्मादिक के उत्सव भारी, जग प्रसिद्ध सबको सुखकारी॥

भोगों की कुछ कमी नहीं थी, परिणति फिर भी रंगी नहीं थी।
तप धर केवलज्ञान सु पाया, मंगल धर्म तीर्थ प्रगटाया॥

समवशरण की शोभा प्यारी, बारह सभा लगी सुखकारी।
गणधर इक सौ तीन विराजे, सोलह सहस्र केवली राजे॥

लाखों साधु आर्यिका सोहें, संघ चतुर्विध मन को मोहें।
महातत्त्व दर्शाया स्वामी, पाऊँ मैं भी अन्तर्यामी॥

सकल विभव तज मोक्ष पधारे, आऊँ नाथ समीप तुम्हारे।
भावसहित अभिनन्दन करते, शाश्वत प्रभु को नित्य सुमरते॥

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(सोरठा)

पूजा हो सुखकार, अभिनन्दन जिनराज की।
पावें शिवपद सार, आकुलता का नाश हो॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री सुमतिनाथ जिनपूजन

(गीतिका)

देवेन्द्र और नरेन्द्र चरणों में सदा सिर नावते।
हर्षावते गुण गावते निज भव भ्रमण विनशावते॥
उन सुमति जिन की अर्चना को मम हृदय उमगावता।
असमर्थ हूँ अल्पज्ञ हूँ फिर भी प्रभो! गुण गावता॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

सुमति जिन पूजों हरषाई।
कुमति विनाशक, सुमति प्रकाशक पूजों हरषाई॥टेक॥
भूल स्वयं को भव-भव भटक्यो, महाक्लेश पाई।
जन्म मरण नाशन को पूजों, जल से सुखदाई॥सुमति.॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भव आताप निवारण को, चन्दन से अधिकाई।
प्रभु के चरण जजों अविनाशी शीतलता दाई॥सुमति.॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

ध्रुव के आश्रय से हे जिनवर ! ध्रुवगति प्रगटाई।
भक्तिभाव अक्षत सों पूजों, अक्षय पद दाई॥सुमति.॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

पुण्योदय के सकल भोग, बिन भोगे खिर जाई।
कामवासना ब्रह्मचर्य के बल से विनशाई॥सुमति.॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

भोजन सकल असार दिखे हे परम तृप्ति दाई।
अमृत झरे अहो अन्तर में, क्षुधा न उपजाई॥समुति.॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

सूर्य-चन्द्र भी हर न सकें, जिस तम को जिनराई।
ज्ञानज्योति ताके नाशन को, प्रभुवर प्रगटाई॥सुमति.॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्म-ध्यान की अग्नि, कर्म नाशन को प्रज्वलाई।
स्वाभाविक दशधर्म सुगन्धी, जग में फैलाई॥
सुमति जिन पूजों हरषाई।
कुमति विनाशक, सुमति प्रकाशक पूजों हरषाई॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

भौतिक फल अब नहीं चाहिए, भव-भव दुखदाई।
महामोक्ष फल प्रगटाने को परम शरण पाई॥सुमति.॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अन्तर में विलसाई स्वामी, अद्भुत प्रभुताई।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भक्ति जिनेश्वर, उर में उमगाई॥सुमति.॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(छन्द-जोगीरासा)

सोलह सपने माँ देखे, वर्ते उर हर्ष विशेषे।
सावन सित दूज सुहाई, गरभागम मंगलदाई॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लद्वितीयायां गर्भमंगलमंडिताय श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

सित चैत एकादशि आई, जन्मे त्रिभुवन सुखदाई।
कल्याणक इन्द्र मनावें, भवि पूजत बहु सुख पावें॥

ॐ ह्रीं वैत्रशुक्लैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

ग्यारसि सित चैत महाना, तप धारा श्री भगवाना।
पूजत पद भावना भाऊँ, निर्ग्रंथ दशा कब पाऊँ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

सित चैत एकादशि आई, प्रभु केवल लक्ष्मी पाई।
सुर समवशरण रचवाया, धर्मामृत प्रभु बरसाया॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

एकादशि चैत सुदी की, पाई पंचम गति नीकी।
प्रभु सविनय अर्घ्य चढ़ाऊँ, निर्मुक्त महापद ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लैकादश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

(दोहा)

इन्द्रादिक पूजित चरण, धन्य-धन्य जिनराज।
भक्तिसहित गुण गाँय हम, पावें सुगुण समाज॥

(छन्द-पद्धरि)

जय सुमति जिनेश्वर गुण गरिष्ट, दर्शायो निजपद परम इष्ट।
प्रभु स्वयंसिद्ध मंगलस्वरूप, बिन्मूरति चिन्मूरति अनूप॥

निरपेक्ष निरामय निर्विकार, जयवन्तो शाश्वत समयसार।
निज साधन से ही साध्य हुए, आराधन कर आराध्य हुए॥

अक्षय अनंत गुण प्रगटाये, कर्मों के बादल विघटाये।
जय दर्शन-ज्ञान अनंत देव, सुख-वीर्य अनंत हुए स्वयमेव॥

अद्भुत प्रभुता जिनराज अहो, महिमा है अपरम्पार प्रभो।
निष्काम स्वयं में रहे पाग, जग से निस्पृह हे वीतराग॥

निर्भूषण जग-भूषण जिनेश, नाशे प्रभु जग के सब क्लेश।
जब शान्तमूर्ति का अवलोकन, अनुपमस्वरूप का हो चिन्तन॥

रागादि स्वयं ही होंय मंद, हों शिथिल सहज ही कर्म बन्ध।
स्वाभाविक आनन्द स्वाद पाय, फिर परिणति निज में ही रमाय॥

नाशे पर की झूठी ममता, सब में समता निज में रमता।
परिणाम सहज अविकारी हो, मंगलमय मंगलकारी हो॥

लक्ष्मी चरणों की दासी हो, फिर भी प्रभु सहज उदासी हो।
इन्द्रादिक पद की चाह न हो, उपसर्गों की परवाह न हो॥

अन्तर्पुरुषार्थ बढ़े स्वामी, हो साधु दशा त्रिभुवननामी।
वृद्धिंगत होवे रत्नत्रय, कर्मों का होता जावे क्षय॥

रागादि दोष निःशेष होंय, प्रभु आत्मीक गुण प्रगट होंय।
यों मोक्षमार्ग का निमित्त देख, जागी उर में भक्ति विशेष॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भक्तिवश ही गुणगान किया, पूजन करते हरषाय हिया।
तुम शासन पा परमार्थ ध्याय, पाऊँ पद अक्षय सौख्यदाय॥

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

कुमति विनाशक सुमति जिन, पायो सुखद सहाय।
निश्चय निज प्रभुता लहूँ, आवागमन नशाय॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री पद्मप्रभ जिनपूजन

(छन्द-अडिल्ल)

जय जय पद्म जिनेश, परम सुख रूप हो,
स्वानुभूति के निमित्त शुद्ध चिद्रूप हो।
दर्शन पाकर हुआ सहज आनन्दमय,
करूँ अर्चना रागादिक पर हो विजय॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(गीतिका)

इन्द्रादि से पूजित दरश कर, परम ज्ञान प्रकाशिया।
पानकर समता सुधा, जन्मादि का भय नाशिया॥
भव भोग तन वैराग्य धार, सु शुद्ध परिणति विस्तरूँ।
श्री पद्मप्रभ जिनराज की पूजा करूँ भव से तिरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्यु-विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जिनवचन सुन निजभाव लखि, परिणाम अति शीतल भया।
चन्दन नहीं भवताप नाशक, जान तुम आगे तज्या॥भव.॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षय अखण्ड सुगुण करण्ड, चिदात्म देव महान है।
सो प्रभु प्रसादहिं पाइयो, जागा सहज बहुमान है॥भव.॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभु ज्ञानमय ब्रह्मचर्य ही है परम औषधि काम की।
तातैं जिनेश्वर शरण आया, कामना तजि वाम की॥भव.॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

निज हेतु निज में ही निरन्तर, झरे अमृत ज्ञानमय।
ताके आस्वादत तृप्ति हो, नाशें क्षुधादिक दुःखमय॥भव.॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

अज्ञानतम में भटकते जो, दुख सहे कैसे कहूँ?
प्रभु भेदज्ञान प्रकाश करि, निर्मोह निज आतम लहूँ॥भव.॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

ध्यानाग्नि में नाशे करम मल, आत्म शुद्ध कहाय है।
निष्कर्म अविनाशी स्वपद हो, भव भ्रमण नशि जाय है॥भव.॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्म विनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

सम्यक्त्व जिसका मूल है, चारित्र धर्म धरूँ सही।
ताके प्रभाव लहूँ सहज, ध्रुव अचल अनुपम शिव मही॥भव.॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

धरि आत्मधर्म अनर्घ्य स्वामी, अर्घ्य से पूजूँ अहो।
इन्द्रादि पद के विभव भी, निस्सार भिन्न लगें प्रभो॥भव.॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(छन्द-होली)

श्री पद्मप्रभ जिनराजजी, जयवन्तो सुखकार।
माघ कृष्ण षष्ठी दिन आये, स्वामी गर्भ मंझार।
करें देवियाँ सेवा माँ की, वर्षे रत्न अपार॥श्री.॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को, जन्मे जग दुखहार।
जन्म महोत्सव सुरगण कीनो, घर-घर मंगलाचार॥श्री.॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णात्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जातिस्मरण निमित्त हुआ प्रभु लख संसार असार।
कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी को दीक्षा ली अविकार॥
श्री पद्मप्रभ जिनराजजी, जयवन्तो सुखकार।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां तपोमंगलमंडिताय श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

कौशाम्बीवन शुक्लध्यान धर, केवललक्ष्मी सार।
पाई चैत सुदी पूनम को, त्रेसठ प्रकृति निवार॥श्री.॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपूर्णिमायां ज्ञानमंगलमंडिताय श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

मोहन कूट शिखर से प्रभुवर, सर्व कर्म मल टार।
फाल्गुन कृष्ण चतुर्थी के दिन पायो शिवपद सार॥श्री.॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचर्तुथ्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

जयमाला जिनराज की, गाऊँ भवि सुखदाय।
पाऊँ ज्ञान-विरागता, सकल उपाधि नशाय॥

(छन्द-नाराच, तर्ज : वन्दे जिनवर.....)

पद्म के समान कान्तिमान पद्मप्रभ जिनेन्द्र,
वन्दते सु भक्ति से तीन लोक के शतेन्द्र।
दिखावते असार पुण्य का विभव मनो प्रभो,
सारभूत आत्मीक ज्ञान सुख अहो अहो॥१॥

द्रव्यदृष्टि धारिके, मिथ्यात्व भाव नाशिके,
विषय कषाय त्यागि के निर्ग्रन्थ पद सु धारिके।
सार्थक किया प्रभो ! सुनाम अपराजितं,
भावना हृदय जगी सहज सोलहकारणं॥२॥

तीर्थंकर प्रकृति बंधी आप ग्रैवेयिक गये,
गर्भ समय मात को सोल स्वपने भये।
जन्म समय इन्द्र ने सुमेरु पर नह्वन किया,
पद्म चिन्ह पद्मप्रभ नाम को प्रसिद्ध किया॥३॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राज्यकाल में भी प्रभु अंतरंग उदास था,
चित्त में स्व-चित्स्वरूप का ही मात्र वास था।
एक दिवस देख द्वार पर बंधे सु हस्ति को,
हुआ सु जाति स्मरण सहज प्रभो विरक्त हो॥४॥
त्याग सर्व परिग्रह साधु दीक्षा धरी,
ध्यान ऐसा किया कर्म प्रकृति हरी।
छठवें तीर्थनाथ वर्तमान के हुए,
वज्र चामर आदि शतक गणधर हुए॥५॥
समवशरण माँहिं अंतरीक्ष मन मोहते,
अष्ट प्रातिहार्य सह अनेक विभव सोहते।
ओंकार ध्वनि खिरी तत्त्व दर्शित हुए,
आत्मबोध प्राप्त कर भव्य हर्षित हुए॥६॥
सिद्ध सम शुद्ध बुद्ध आत्मा दिखा दिया,
गुणस्थान आदि से भिन्न दर्शा दिया।
मोह आदि दुःखरूप बंध हेतू कहे,
ज्ञानमय संवरादि मुक्ति हेतू कहे॥७॥
मुक्तिदशा साध्य ध्येय शुद्ध आत्मा कहा,
आत्मदृष्टि धारि पूजते प्रभो ! तुम्हें अहा।
साधु-संग होय प्रभु ! असंग रूप ध्याऊँ मैं,
आपके प्रसाद सहज सिद्ध स्वपद पाऊँ मैं॥८॥

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(सोरठा)

पद्मप्रभ भगवान, लोक शिखर पर राजते।
पाऊँ आतमज्ञान, भाव सहित पूजूँ नमूँ॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

दोषों को छिपाने का नहीं, मिटाने का उपाय करो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री सुपार्श्वनाथ जिनपूजन

(रोला)

जिनवर पूजा भविजन को मंगलकारी है,
भाव विशुद्धि का निमित्त सब दुःखहारी है।
पार्श्ववर्ति लख देह शुद्ध चेतन पद ध्यावें,
श्री सुपार्श्व भगवान भाव से पूज रचावें॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(छन्द-दिग्पाल)

मुनिमन समान जल ले, जिनराज चरण पूजें।
आवागमन मिटे मम, जन्मादि दोष धूजें॥
पूजा सुपार्श्व स्वामी, ऐसी करूँ तुम्हारी।
हो तुम समान जिनवर, भावी दशा हमारी॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भवताप रहित प्रभु क्या? चन्दन तुम्हें चढ़ायें।
सुनकर वचन जिनेश्वर, नाशें सभी कषायें॥पूजा.॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षत अखण्ड लेकर, जिननाथ गुण विचारें।
अक्षय सुगुणमयी प्रभु, निज आत्मा निहारें॥पूजा.॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

ले पुष्प शीलमय जिन, होवें परम जितेन्द्रिय।
है उपादेय भासा, हमको भी सुख अतीन्द्रिय॥पूजा.॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

नैवेद्य सरस पाया, प्रभुता स्वयं स्वयं में।
क्षुत् वेदना नशायें, रम जायें हम स्वयं में॥पूजा.॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहान्धकार नाशे, पावें प्रकाश अनुपम।
हे पूर्ण ज्ञानमय प्रभु, चरणों में आए हैं हम।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

हों भस्म कर्म सब ही, ऐसा हो ध्यान जिनवर।
हो धर्म से सुवासित, जीवन हमारा प्रभुवर।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

सम्यक्त्व मूल संयुक्त चारित्र तरू लगावें।
अक्षय अनंत रसमय, मुक्ति के फल सु पावें।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

दुर्लभ सु अर्घ्य लेकर, हम भावना संवारें।
अविचल अनर्घ्य प्रभुता, निज में ही प्रभु निहारें।।पूजा.।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(सोरठा)

गर्भागम सुखकार, भादों सुदि छटि को हुआ।
वरषे रतन अपार, सोलह सपने माँ लखे।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लषष्ठ्यां गर्भमंगलमंडिताय श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

द्वादशि सुदी सु ज्येष्ठ, जन्मे त्रिभुवन नाथ जी।
इन्द्र कियो अभिषेक, पाण्डुक शिला सुमेरू पै।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

आत्मीक सुखसार, लखि प्रभुवर दीक्षा धरी।
गूँजा जय-जयकार, जेठ सुदी बारस दिना।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

फाल्गुन कृष्णा षष्ठि, हुए स्वयंभू नाथ जी।
हर्षमयी हुई सृष्टि, दिव्य बोध को पाय के।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णषष्ठ्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

शिखर सम्मेद महान, फाल्गुन कृष्णा सप्तमी।
प्रभु पायो निर्वाण, पूजें अति आनन्द सों।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

(दोहा)

हुए विरक्त सु जगत से, पतझड़ लख जिनदेव।
निर्ग्रन्थ पथ अपनाय के, मुक्त हुए स्वयमेव॥

(तर्ज : चित्स्वरूप महावीर.....)

श्री सुपार्श्व जिनराज, मुक्ति पथ दरशाया।
परमानन्द स्वरूप, जिनेश्वर दरशाया॥टेक॥

द्रव्येन्द्रिय, भावेन्द्रिय, इन्द्रिय विषयों से प्रभु भिन्न कहा।
परम अतीन्द्रिय ज्ञानानन्दमय, सिद्ध समान स्वरूप कहा॥
स्वानुभूत जिनमार्ग, जिनेश्वर दरशाया॥श्री सुपार्श्व.॥

द्रव्यकर्म-नोकर्म-भाव कर्मों से न्यारा देव कहा।
नित्य निरंजन निष्क्रिय-ध्रुव, निर्मुक्त चिदानन्दरूप अहा॥
नयातीत पक्षातिक्रान्त प्रभु दरशाया॥श्री सुपार्श्व.॥

जीवसमास मार्गणा-गुणथानों से, ज्ञायक भिन्न अहा।
टंकोत्कीर्ण सु-अलिंगग्रहण, अव्यक्त स्वानुभवगम्य कहा॥
आश्रय करने योग्य, निजातम दरशाया॥श्री सुपार्श्व.॥

नवतत्त्वों के स्वांगों से, निरपेक्ष निरामय रूप कहा।
जिनने समझा भवदुख नाशा, नित्यानंद स्वरूप लहा॥
हेय-उपादेय भेद महेश्वर दरशाया॥श्री सुपार्श्व.॥

रागादिक दुख रूप बताये, वीतराग शिवपंथ कहा।
परम अहिंसा से ही होता, भवभ्रमणा का अन्त अहा॥
रत्नत्रय अविकार तुम्हीं ने दरशाया॥श्री सुपार्श्व.॥

बहिरातमता हेय जान तज, अन्तर आतम हों स्वामी।
ध्रुव परमातम पद को साधें, तुम सम ही अन्तर्यामी॥
धन्य-धन्य शिवरूप आपने दरशाया॥श्री सुपार्श्व.॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब तक आराधन पूरा हो, जिनशासन का योग मिले।
निर्मल आत्म भावना वर्ते, निज गुणमय उद्यान खिले॥
पाया स्वाश्रित मार्ग चरण में सिर नाया॥श्री सुपार्श्व.॥

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(दोहा)

श्री सुपार्श्व जिनराज की, भक्ति करें जो कोय।
इन्द्रादिक पद पाय के, निश्चय मुक्त सु होय॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री चन्द्रप्रभ जिनपूजन

(जोगीरासा)

तज गृहजाल महादुखकारण, चरण शरण में आया।
चन्द्र समान शान्त निर्मल छवि, लखि आनन्द उपजाया॥
तन मन धन है सर्व समर्पण, करूँ अर्चना स्वामी।
चंचल परिणति थिर हो निज में, तुम सम त्रिभुवननामी॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(भुजंगप्रयात्)

चढ़ाऊँ क्षमाभावमय नीर सुखकर,
नशें जन्म-मरणादि कारण सु दुखकर॥
अहो चन्द्रप्रभ जी की पूजा रचाऊँ,
सहजज्ञानमय भावना सहज भाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन चढ़ाऊँ परमशान्तिमय प्रभु,
भवाताप नाशे जजूँ आपको विभु॥ अहो...॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अक्षत अमलभावमय देव लाऊँ,
विनाशीक जग के अपद नाहिं चाहूँ॥
अहो चन्द्रप्रभ जी की पूजा रचाऊँ,
सहजज्ञानमय भावना सहज भाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

अतीन्द्रिय निजानन्द निज माँहिं सरसे,
सतावे नहीं काम जिनवर शरण से॥अहो...॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चिदानन्द-सुधारस प्रभो पान करके,
क्षुधादिक महादोष क्षणमाँहिं हरके॥ अहो...॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रकाशित सहज ज्ञान में नाथ ज्ञायक,
झलकते नशे मोह तम दुःखदायक॥ अहो...॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जलें कर्म सब आत्म-ध्यानाग्नि माँहीं,
सुविकसित हो निजगुण नहीं अन्त पाहीं॥ अहो...॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

न लौकिक फलों की प्रभो ! कामना है,
महा मोक्षफल पाऊँ यह भावना है॥ अहो...॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

धरूँ भक्तिमय देव प्रासुक सु अर्घ्य,
लहूँ आत्म प्रभुता सु अविचल अनर्घ्य॥ अहो...॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(दोहा)

चन्द्रप्रभ जिनराज का, गर्भागम सुखकार।
चैत कृष्ण पंचमि दिवस, पूजों भाव सम्हार॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णपंचम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पौष कृष्ण एकादशी, जन्मे श्री जगदीश।
इन्द्रादिक उत्सव कियो, नह्वन कियो गिरिशीश॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भव-तन-भोगविरक्त हो, जिनदीक्षा अविकार।
धरी पौष वदि ग्यारसी, पूजों करि जयकार॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

फाल्गुन श्यामा सप्तमी, प्रगट्यो केवलज्ञान।
आतम महिमा मुक्तिपथ, दर्शायो भगवान॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सित फाल्गुन सप्तमि गये, मुक्तिमाँहिं परमेश।
पूजत पाप विनष्ट हों, धन्य-धन्य सर्वेश॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लासप्तम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

जयवन्तो शिवभूप, अचिन्त्य महिमा के धनी।
परमानन्द स्वरूप, गाऊँ जयमाला प्रभो॥

(तर्ज- हे दीनबन्धु...)

हे चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र ! सत्य शरण हो तुम्हीं।
हे वीतराग देव ! तारण-तरण हो तुम्हीं॥
कर दर्श नाथ सहज ही कृतकृत्य हो गया।
प्रभु ! स्वयं स्वयं में ही सहज तृप्त हो गया॥
विभु ! तेजपुंज आत्मा को आप जानके।
होकर उदास लोक से दीक्षा सु-धार के॥
ध्यानाग्नि में चहुँ घाति कर्म सहज जलाए।
अनन्त दर्श-ज्ञान-सुख-वीर्य तब पाए॥
अष्टम हुए तीर्थेश धर्मतीर्थ बताया।
ध्रुव तीर्थरूप आत्मा प्रत्यक्ष दिखाया॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आत्मानुभूतिमय अहो परमार्थ तीर्थ है।
जिससे तिरें भवसिन्धु वह सत्यार्थ तीर्थ है॥
निजभाव में रमते सदा तुम ही सु राम हो।
निष्काम परमब्रह्म हो आनन्दधाम हो॥
परमार्थ मुक्तिमार्ग के हो आप विधाता।
विश्वेश विष्णु रूप हो सब विश्व के ज्ञाता॥
अतिशय तुम्हें जो देखते वे दर्शनीय हों।
जो भावसहित पूजते वे पूजनीय हों॥
वाँछा ही मिटे देव तुम्हारे सु ध्यान से।
हो प्रगट आत्मीकभाव आत्म-ध्यान से॥
प्रभु ! ध्यानमय मुद्रा सहज वैराग्य जगाती।
रागांश हों निश्शेष ज्ञान ज्योति जगाती॥
चैतन्यमय परमार्थ भावना सहज रहे।
भवनाश हो शिववास हो दुर्भावना दहे॥
गद्-गद् हुआ बहुमान से, बस मौन ही रहूँ।
नाथ हो निर्ग्रन्थ तेरा पंथ मैं गहूँ॥
तेरे प्रसाद से सहज समाधि पाऊँगा।
ज्ञाता हूँ मुक्त ज्ञातारूप ही रहाऊँगा॥

(घत्ता)

श्रीचन्द्र जिनेशं, जय जगदेशं, धर्मेशं भवसर-तारी।
अद्भुत प्रभुतामय, हुआ सु निर्भय, पूजत पद मंगलकारी॥

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

समयसारमय आपकी, प्रभुता तिहुँजग सार।
विस्मय उपजावे प्रभो, भुक्ति मुक्ति दातार॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री पुष्पदंत जिनपूजन

(गीतिका)

अक्षय सु आतम निधि बताई, प्राप्ति की भी विधि प्रभो।
है सार्थक यह नाम भी जिन, सुविधिनाथ कहा अहो॥
सौभाग्य से अवसर मिला, पूजा करूँ अति चाव से।
हे पुष्पदंत जिनेन्द्र ! बस, छूटूँ विकारी भाव से॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(छन्द-अडिल्ल)

निर्मल जल ले, पूजूँ प्रभु हरषाय के,
जन्म जरा मृत नाशूँ निजपद ध्याय के।
पुष्पदंत जिनराज करूँ गुणगान मैं,
होय प्रतिष्ठित सहज ज्ञान ही ज्ञान में॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भक्ति भावमय चन्दन ले पूजा करूँ।
नाशे ताप कषायों का समता धरूँ॥पुष्पदंत..॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

पूजूँ निर्मल अक्षत से जिननाथ जी।
पाऊँ उत्तम धर्मी जन का साथ जी॥पुष्पदंत..॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

दिव्य पुष्प ले भाऊँ जिनवर भावना।
विषयों की हो स्वप्न माँहिं भी चाह ना॥पुष्पदंत..॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

झूठे नैवेद्य लख, निस्सार तजूँ प्रभो।
पीऊँ सन्तोषामृत तुम सम ही विभो॥पुष्पदंत..॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

सहज रतन रुचि दीप उजालूँ देव जी।
मोह महातम नशे सहज स्वयमेव जी॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुष्पदंत जिनराज करूँ गुणगान मैं,
होय प्रतिष्ठित सहज ज्ञान ही ज्ञान में।।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

आर्त-रौद्र तज आत्मध्यान धारूँ अहो।
जरें कर्ममल निजगुण विस्तारूँ प्रभो।।पुष्पदंत..।।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

पुण्य-पाप फल सकल जिनेश्वर त्यागकर।
पाऊँ जिनवर मुक्तिफल आनन्दकर।।पुष्पदंत.।।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध भावमय अर्घ्य धरूँ आनन्द से।
पद अनर्घ्य हो बचूँ कर्म के फन्द से।।पुष्पदंत..।।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(चौपाई)

नवमी फागुन वदी सुहाई, गर्भ कल्याण भयो सुखदाई।
सेवे मात देवि सुखकारी, पूजूँ जिनवर मंगलकारी।।
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णनवम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

मगसिर सुदि एकम दिन आया, इन्द्र जन्मकल्याण मनाया।
उत्सव नाना भाँति रचाई, मैं भी पूजूँ त्रिभुवन राई।।
ॐ ह्रीं माघशुक्लप्रतिपदायां जन्ममंगलमंडिताय श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

इक दिन उल्कापात हुआ था, अन्तर में वैराग्य हुआ था।
भाय भावना दीक्षा धारी, मगसिर सुदि एकम् सुखकारी।।
ॐ ह्रीं माघशुक्लप्रतिपदायां तपोमंगलमंडिताय श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

आत्मध्यान प्रभु ऐसा धारा, नाशे घाति कर्म दुखकारा।
कार्तिक कृष्णा द्वितीया स्वामी, धर्मतीर्थ प्रकटा अभिरामी।।
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णद्वितीयायां ज्ञानमंगलमंडिताय श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

सुप्रभ टोंक सम्मेद महाना, आप पधारे अविचल थाना।
भादों सुदि अष्टमि सुखकारा, पूजत होवे हर्ष अपारा।।
ॐह्रीं भाद्रपदशुक्लअष्टम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

(दोहा)

तीर्थंकर नवमें प्रभो ! अद्भुत महिमावंत।
शाश्वत् धर्म बताइया, रहे सदा जयवन्त॥

(छन्द-पद्धरी)

हे पुष्पदंत ! हे सुविधिनाथ !! दर्शन पाकर मैं हूँ सनाथ।
जिनराज भजूँ निजभाव सजूँ, परमानंदमय चिद्रूप भजूँ॥

हे तेजपुंज हे धर्ममूर्ति ! हे ज्ञानपुंज चैतन्यमूर्ति।
मंगलमय लोकोत्तम स्वरूप, भविजन को तुम ही शरणरूप॥

नाशे कर्माश्रित सब विभाव, प्रगटे स्वाश्रित आतम स्वभाव।
तुम दिव्यध्वनि सुन जगे ज्ञान, आतम-अनात्म की हो पिछान॥

पर्यायदृष्टि छूटे जिनन्द, प्रगटे अनुभव रस दुख निकन्द।
दुःख कारण रागादिक दिखाय, पुरुषार्थ तिन्हें नाशन जगाय॥

वैराग्य भावना सहज होय, क्षण-क्षण में निज शुद्धात्म जोय।
निर्ग्रन्थ मार्ग में बढ़े जाय, तुम सम अक्षय पदवी सु पाय॥

यों मुक्तिमार्ग के निमित्त आप, भव्यों के नाशो प्रभु संताप।
हे परम धरम दातार देव, चरणों में शीश नमें स्वयमेव॥

जो पूजे सो जगपूज्य होय, आपद ताको आवे न कोय।
तुम ढिग वांछा ही प्रभु नशाय, निज में ही अद्भुत तृप्ति पाय॥

इन्द्रादिक पूजें चरण आन, अद्भुत अतिशय जिनवर महान।
ऐसी प्रभुता मैं भी सु पाय, तिष्ठूँ जिनेश तुम पास आय॥

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

(सोरठा)

पुष्पदंत भगवान, तीन लोक चूड़ामणि।
होय सकल कल्याण, जिन पूजा परसादतैं॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री शीतलनाथ जिनपूजन

(छन्द-अडिल्ल)

कल्पवृक्ष शुभ चिन्ह सुदेव मनोज्ञ है।
कल्पवृक्ष नहिं तुम उपमा के योग्य है॥
अविचल सुख दातार सहज ज्ञातार हो।
हृदय विराजो प्रभो ! परम उपकार हो॥

(दोहा)

जय जय शीतलनाथ जिन, मिथ्या तपन नशाय।
परम जितेन्द्रिय भाव सों, पूजें मंगलदाय॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(छन्द-द्रुतविलम्बित)

सहज समकित जल प्रभु धारिके, जन्म मरण कुरोग निवारिके।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

भावनामय चन्दन लायके, दुःखमय भवताप नशायिके।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

सहज संयम धारे सुखकरं, अखय पद को पावें जिनवरं।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

पंच इन्द्रिय भोग विडारिके, भजें नित निष्काम विचारिके।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

तृप्त होवें निजरस लीन हो, क्षुधा तृष्णा सहजहिं क्षीण हो।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोह नाशा सम्यक्ज्ञान से, क्या प्रयोजन दीपक भानु से।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

परम आतम ध्यान लगायिके, लहें निजपद कर्म नशायिके।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविनाशनाय धूपं नि. स्वाहा।

मार्ग प्रभुवर का अहो हम अनुसरें, पाप-पुण्य नशें शिवफल लहें।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

धरें अर्घ्य जिनेश्वर चरण में, तज प्रपंच सु आये शरण में।
परम आनन्दमय शिवदायकं, जजें शीतलजिन जगनायकं॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(चौपाई)

चैत्र कृष्ण अष्टमि दिन देव, अच्युत से च्युत हो स्वयमेव।
मात सुनन्दा उर अवतरे, गर्भ कल्याणक सुख विस्तरे॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णअष्टम्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय गर्भकल्याणप्राप्ताय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

माघ कृष्ण द्वादश जिनराय, अन्तिम जन्म भयो सुखदाय।
जन्मकल्याणक पूजा करें, यही भाव फिर जन्म न धरें॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणप्राप्ताय अर्घ्यं नि.स्वाहा।

वैभव यौवन इन्द्रिय-भोग, इन्द्रधनुष सम लखे मनोग।
माघ कृष्ण द्वादशि दिन नाथ, धारी दीक्षा नावें माथ॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणप्राप्ताय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

स्वामी पौष चतुर्दशि श्याम, केवलज्ञान लह्यो अभिराम।
शोभें समवशरण के माँहिं, दर्शन से भवि पाप नशाहिं॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणप्राप्ताय अर्घ्यं नि.स्वाहा।

अष्टमि सितअसौज भगवान, पायो अविचल पद निर्वाण।
भाव सहित हम शीश नमांय, ज्ञाता दृष्टा रह शिव पांय॥

ॐ ह्रीं अश्विनशुक्लअष्टम्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणप्राप्ताय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

दोहा- सहज शांत शीतल रहें, शीतल चरण प्रसाद।
गावें जयमाला सुखद, नाशें सर्व विषाद॥

(छन्द-त्रोटक)

श्री शीतलनाथ जिनेन्द्र नमूँ, जिनतत्त्व समझ दुर्मोह वमूँ।
ज्ञायक हूँ सहज प्रतीति हो, आनन्दमय निज अनुभूति हो॥

पर में एकत्व ममत्व न हो, सपने में भी कर्तृत्व न हो।
परिणमन सहज होता भासे, ज्ञातृत्व सहज ही प्रतिभासे॥

कुछ इष्ट-अनिष्ट विकल्प न हो, दुखमय मिथ्या संकल्प न हो।
दुख कारण आस्रव बंध नशें, संवर निर्जर सुखमय विलसें॥

यों तत्त्व प्रतीति नाथ धरें, प्रभु साक्षी हों भव सिन्धु तरें।
निर्ग्रंथ भावना भावत हैं, अविनाशी निजपद चाहत हैं॥

बिनशत मुक्ता सम ओस बिन्दु, निरखी प्रातः तुमने जिनेन्द्र।
तत्क्षण संसार असार तजा, आनन्दमय आतम रूप सजा॥

वस्त्राभूषण सब फैंक दिये, निर्मम होकर कचलौंच किये।
जिनयोग अपूर्व लगाया था, दुष्कर्म समूह नशाया था॥

अद्भुत जिनवैभव प्रगटाया, सुर समवशरण था रचवाया।
हुई दिव्य देशना सारभूत, भविजन को शुभ कल्याणभूत॥

लाखों प्राणी प्रतिबुद्ध हुए, तद्भव से भी बहु मुक्त हुए।
यों दशवें तीर्थंकर सु होय, सब कर्म नाशि गये सिद्ध लोय॥

ज्यों सिद्धालय में आप बसे, त्यों देहालय शुद्धात्म लसे।
हम ध्यावें मंगलकार प्रभो, वर्तें नित जाननहार विभो॥

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सोरठा- पूजा श्री जिनराज, भक्ति-युक्ति युत जो करें।
पावें सिद्ध समाज, सब संक्लेश निवारिकें॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री श्रेयांसनाथ जिनपूजन

(रोला)

श्रेय रूप ग्यारहवें तीर्थंकर पहिचाने।
अहो अकर्ता दृष्टा ज्ञाता सहज प्रमाने॥
जागा भाग्य हमारा, प्रभुवर पूज रचावें।
निजानन्द निज्माँहिं, आप सम हम भी पावें॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(छंद -त्रिभंगी)

प्रभु देह उपजती देह विनशती, अविनाशी है शुद्धातम।
येह भेद जानकर निज अनुभव कर, पूजें ध्यावें परमातम॥
श्रेयांस जिनेन्द्रं इन्द्र नरेन्द्रं, पूजत अन्तर्दृष्टि धरें।
तिहुँ जग ज्ञातारं शिवदातारं, प्रभु चरणों में नमन करें॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

प्रभु चन्दन बावन ताप मिटावन, भवाताप नहीं दूर करे।
या सम नहीं दूजा श्री जिन पूजा, सहज सर्व संताप हरे॥श्रेयांस. ॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं नि.स्वाहा।

क्षत् भाव दुखारी हे त्रिपुरारी, त्याग अखण्डित भाव धरें।
अक्षय सुखरूपं मुक्त स्वरूपं, अक्षत ले प्रभु पूज करें॥श्रेयांस. ॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

भोगों को भोगा, इच्छा रोगा, त्यों-त्यों अधिक बढ़ा स्वामी।
प्रभु शील बढावें काम नशावें, शिवपद पावें जगनामी॥श्रेयांस. ॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

निजसुधबुध खोकर जिसवश होकर, खाद्य-अखाद्य सभी खाया।
सो क्षुधा नशावें तृप्त रहावें, निज में प्रभु सम मन भाया॥श्रेयांस.॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभु भ्रम तम नाशे ज्ञान प्रकाशे, तातैं प्रभुवर चरण जजें।
निर्मोह रहावें ज्ञान बढ़ावें, सहज परम निजभाव भजें॥
श्रेयांस जिनेन्द्रं इन्द्र नरेन्द्रं, पूजत अन्तर्दृष्टि धरें।
तिहुँ जग ज्ञातारं शिवदातारं, प्रभु चरणों में नमन करें॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय मोहांधकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

प्रभु कर्म महावन भूलि रहे हम, शिव मारग है नहिं भाया।
निज ध्येय सु ध्यावें कर्म नशावें, परम धरम प्रभु से पाया॥श्रेयांस.॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

जिन कर्मों के फल हुए सु व्याकुल, सो फल प्रभुवर नहिं चाहें।
सब सिद्धि प्रदाता शिवफलदाता, धर्म कल्पतरु प्रगटाएँ॥श्रेयांस.॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

ले द्रव्य सु अर्घ्यं भाव अनर्घ्यं, आनन्द सों जिनवर पूजें।
श्रद्धान जगाया भाव बढ़ाया, भव-भव के पातक धूजें॥श्रेयांस.॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(चौपाई)

विमला माँ को स्वप्न दिखाये, पुष्पोत्तर तजकर प्रभु आये।
जेठ श्याम षष्ठी सुखकारी, जिनपद पूजें मंगलकारी॥

ॐ ह्रीं जेष्ठकृष्णषष्ठ्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.स्वाहा।

फाल्गुन कृष्ण एकादशि आई, जन्मे अनुपम मंगलदायी।
क्षीरोदधि तें जल भर लावें, सुरपति प्रभु अभिषेक करावें॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

विषय-कषाय असार विचारे, हो निर्ग्रंथ परम तप धारे।
फाल्गुनश्याम-एकादशि स्वामी, भावसहित हम शीश नमामी॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

शुक्लध्यान धरि घाति नशाये, अनन्त चतुष्टय प्रभु प्रगटाये।
माघ अमावस आनन्दकारी, पूजत होवें शिवमगचारी॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णामावस्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्रावण शुक्ल पूर्णिमा जिनवर, मुक्ति पधारे सकल कर्म-हर।
इन्द्र मोक्ष कल्याण मनावें, भक्ति सहित प्रभु पूज रचावें॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लपूर्णिमायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीश्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं..।

जयमाला

(दोहा)

श्रेय रूप श्रेयांस जिन, परम श्रेय दर्शाय।
आप बसे शिवलोक में, भक्ति करूँ सुखदाय॥
हे श्रेयांस जिनेश प्रभु, श्रेय रूप अविकार।
दर्शायो प्रभुवर सहज, रत्नत्रय सुखकार॥

(छंद-सरसी)

नलिनप्रभ राजा के भव में रत्नत्रय प्रकटाकर।
तीर्थंकर प्रकृति बांधी थी, सोलहकारण भाकर॥

आयु पूर्णकर साधु समाधि पूर्वक छोड़ी देह।
स्वर्ग सोलवें इन्द्र हुए थे भावें सदा विदेह॥

तहँते चयकर सिंहपुरी में लिया प्रभु अवतार।
दिव्योत्सव करते इन्द्रादिक देखत दृष्टि हजार॥

मति-श्रुत अवधिज्ञान के धारक जन्म समय से आप।
अतिशय रूप निरखते नाशें भव-भव के संताप॥

पुण्योदय के भोग भोगते अन्तर रहे उदास।
पतझड़ के तरु देखे इक दिन काल लगा गृहवास॥

भायी प्रभु वैराग्य भावना, लौकान्तिक सुर आय।
अनुमोदन करते प्रभुवर का, चरणों में सिर नाय॥

सहज भाव से दीक्षा लीनी, हुए नाथ निर्ग्रंथ।
तप कल्याणक देव मनावें, आप बढ़े शिवपन्थ॥

आत्म ध्यान से अल्पकाल में प्रगटा केवलज्ञान।
समवशरण में दिव्य ध्वनि से दिया तत्त्व का ज्ञान॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

धर्मतीर्थ की कर प्रभावना, गये नाथ निर्वाण।
धर्मतीर्थ जिनवर का पाकर किया स्व-पर कल्याण॥

भाव सहित प्रभु पूजन करके, उपजा उर आनन्द।
सहज भावना होवे स्वामी, रहूँ परम निर्द्वन्द्व॥

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ-जिनेन्द्राय जयमालाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

सर्व सिद्धि दातार, वीतराग सर्वज्ञ जिन।
सहज लहें भवपार, अनुगामी हो आप के॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री वासुपूज्य जिनपूजन

(सवैया तेईसा, तर्ज-वीर हिमाचल तें..)

बालयती वसुपूज्यतनय, प्रभु वासव सेवित त्रिभुवन नामी।
बारहवें तीर्थंकर हो, संयुक्त सुगुण छियालिस अभिरामी॥
मुक्तिमार्ग मिल्या भविजन को, दिव्यध्वनि द्वारा हे स्वामी।
भाव भये शुभ पूजन के, तिष्ठो उर में हे अन्तरयामी॥

(दोहा)

हर्षित हो पूजूँ चरण, चिंतूँ गुण अभिराम।
आराधूँ परमात्म पद, पाऊँ शाश्वत धाम॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(छंद-गीतिका)

निज आत्मतीर्थ सु पाइया, समतामयी जल जहाँ भरा।
मिथ्यात्व मल छूट्यो प्रभो ! स्नान करि निर्मल भया॥
श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र की, पूजा करूँ अति चाव सों।
आनन्दमय ब्रह्मचर्य वर्ते, नाथ ! सहज स्वभाव सों॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भव ताप नाशा देव ! शीतलता स्वयं में ही मिली।
आराधना की युक्ति पाई, सहज निज परिणति खिली॥
श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र की, पूजा करूँ अति चाव सों।
आनन्दमय ब्रह्मचर्य वर्ते, नाथ ! सहज स्वभाव सों॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चन्दनं नि.स्वाहा।

अक्षय अबाधित ज्ञानमय, चैतन्यप्रभु पाया अहो।
तुष बिना तन्दुल सम अमल, अक्षय स्व-पद आधार हो॥श्री.॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

प्रभु ! तुम गुणों की पुष्पमाला, कंठ में धारण करूँ।
निष्काम ब्रह्मस्वरूप ध्याऊँ, अब्रह्म परिणति परिहरूँ॥श्री.॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

शुद्धात्म अनुभव के समान, न रस दिखे तिहुँलोक में।
ताके आस्वादी क्षुधादिक, नाशे बसे शिवलोक में॥श्री.॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

चैतन्य ज्योति सु जगमगे, मोहान्धकार नहीं रहे।
फिर बाह्य दीपक भी सहज निस्सार मुझको भी लगे॥श्री.॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय मोहांधकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

आनन्दमय आराधना से, ध्यान की अगनी जले।
निज सुगुण विलसें सर्व वैभाविक करम ईंधन जले॥श्री.॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

तिहुँलोक पूजित सिद्धपद, आराधना का फल महा।
यह जानकर लौकिक फलों का भाव नहीं किंचित् रहा॥श्री.॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

निर्भेद निरघ सु अर्घ्य लेकर, ज्ञानमय आनन्दमय।
मैं अर्चना करता प्रभु, निर्द्वन्द्व पद पाऊँ अभय॥श्री.॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचकल्याणक अर्घ्य

(छंद द्रुतविलम्बित)

होय च्युत महाशुक्र विमान से, आये विजया माता गर्भ में।
षाढ़ कृष्णा षष्टिमी थी सही, धनि हुई चम्पापुर की मही॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णषष्ठ्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

चतुर्दशि फागुन की श्याम है, जन्म अन्तिम प्रभु अभिराम है।
किया था अभिषेक सुमेरु पर, पुण्यशाली इन्द्रों ने आनंद कर॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

ब्याह अवसर पर प्रभु वैराग्य धरि, भव शरीर कुभोग असार लखि।
चतुर्दशि फागुन कलि शुभघड़ी, अहो मुनिपद की सहज दीक्षा धरी॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

शुक्ल ध्यान महान लगाइया, ज्ञान केवल जिनवर पाईया।
दिव्यध्वनि भई मंगलकार है, दूज भादव कृष्ण की सुखकार है॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदकृष्णद्वितीयायां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

चतुर्दशी सित भादौं की सही, लही प्रभुवर ने अहो अष्टम् मही।
तीर्थ चम्पापुर महासुखदाय है, अर्घ ले जजिहौं सहज शिवदाय है॥

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्रीवासुपूज्य-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

इन्द्रादिक पूजैं चरण, महाभक्ति उर धार।
गावें जयमाला प्रभो ! आतमनिधि दातार॥

(चौपाई)

जय-जय वासुपूज्य भगवान, गुण अनन्त मंगलमय जान।
भरि यौवन में सहज विराग, भोगों प्रति उपज्या नहिं राग॥

निज में प्रमुदित बाह्य उदास, आत्मसाधना का उल्लास।
जगत विभव किंचित् न सुहाय, तत्त्व विचार करें सुखदाय॥

शुद्धातम ही जग में सार, अविनाशी सुख का आधार।
इन्द्रिय सुख तो दुख के मूल, फल में उपजें भव-भव शूल॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

संसारी निज ज्ञान विहीन, इन्द्रिय मद मेटन बलहीन।
विषय चाह उपजावे दाह, भोगन में भूले शिवराह॥

आत्मज्ञान बिन शरण न कोय, व्यर्थ मोह में क्लेशित होय।
अब विलम्ब करना नहीं जोग, धरूँ शीघ्र शिवदाता योग॥

सब विधि अवसर मिलो महान, जीतूँ कर्म लहूँ निर्वान।
दृढ़ विराग उपज्या सुखदाय, तत्क्षण लौकान्तिक सुर आय॥

अनुमोदन कर शीश नवाय, धन्य विचार कियो जिनराय।
दीक्षा धरो प्रभो ! अविकार, भायें भावना हम हू सार॥

इन्द्रादिक आये हर्षाय, प्रभु को तपकल्याण मनाय।
उत्सव सों प्रभु वन में गये, वस्त्राभूषण सब तजि दये॥

पंच मुष्ठि कचलौंच कराय, निर्ग्रंथ रूप धर्‌यो सुखदाय।
आत्म ध्यान की धुनी लगाय, एक वर्ष छद्मस्थ रहाय॥

चढ़े क्षपक श्रेणी सुखकार, प्रगट्‌यो अर्हत् पद अविकार।
भविजन को शिवराह दिखाय, सिद्धालय में तिष्ठे जाय॥

ज्ञान माँहिं हे देव निहार, करें अर्चना मंगलकार।
प्रभु चरणों में शीश नवाय, अद्‌भुत परमानन्द विलसाय॥

(छन्द-घत्ता)

प्रभु अमल अनूपं शुद्ध चिद्रूपं, सहजानंदमय राजत हो।
निष्काम जिनेश्वर, जजूँ महेश्वर, शिव मारग विस्तारत हो॥

ॐ ह्रीं श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जयमालाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

बाल ब्रह्मचारी प्रभो ! वासुपूज्य जिनराज।
करि सम्यक् आराधना, पाऊँ निजपद राज॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री विमलनाथ जिनपूजन

(चौपाई)

जय-जय विमलनाथ भगवान, भक्ति सहित करता आह्वान्।
मेरे हृदय विराजो देव, आराधूँ निजपद स्वयमेव॥

(दोहा)

कम्पिल नगरी जन्म से, हुई जगत विख्यात।
कृतवर्मा प्रभु के पिता, जय-जय श्यामा मात॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भववषट्।

(छन्द-चाल होली)

प्रभु पूजों भाव सों, श्री विमलनाथ जिनरायजी पूजों भाव सों।
प्रासुक समतामय जल लीनों, अन्तर्दृष्टि लाय।
यही भावना प्रभु प्रसाद से, जन्म-मरण मिट जाय॥प्रभु..॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम क्षमा भाव मय चन्दन, भव आताप मिटाय।
प्रभु चरणों में मैंने पाया, आनन्द उर न समाय॥प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में भोग संयोग विभव सब विनाशीक दुखदाय।
अक्षय पद का आराधन कर, अक्षय प्रभुता पाय॥प्रभु..॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

कामदाह अति ही दुखदायक, महा अनर्थ कराय।
ताको नाशि लहूँ तुम सम ही, ब्रह्मचर्य सुखदाय॥प्रभु..॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

तृष्णा भाव मिटे हे स्वामी, भव-भव में दुखदाय।
सन्तोषामृत पियूँ निरन्तर, तुम समान जिनराय॥प्रभु..॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भेदज्ञान का हुआ उजाला, मिथ्या तिमिर नशाय।
अविरल ज्ञान भावना भाऊँ, केवलि पद प्रगटाय॥
प्रभु पूजों भाव सों, श्री विमलनाथ जिनरायजी पूजों भाव सों।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज तत्त्व का सहज ध्यान हो, कर्म समूह नशाय।
जगत पूज्य निष्कर्म निरंजन, सिद्ध स्वपद प्रगटाय॥प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पाप-पुण्य के फल में प्राणी, भव-भव में भरमाय।
शुद्ध भाव से अहो जिनेश्वर, सहज मोक्ष फल पाय॥प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

विमल अर्घ्य ले प्रभु चरणन में, आऊँ अति हर्षाय।
ज्ञानानन्दमय निज अनर्घ्यपद, पाऊँ हे शिवराय॥प्रभु...॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(छन्द-सखी)

गर्भागम मंगल गाये, नभ से सु-रतन वर्षाये।
कलि जेठ सु-दशमी जानो, प्रभु पूजत चित हुलसानो॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णदशम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्रायअर्घ्यं नि.।

सुदि माघ चतुर्थी आई, जन्मे जिन आनन्ददायी।
भयो मेरु न्हवन सुखकारी, पूजत प्रभु पद अविकारी॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

सुदि माघ चतुर्थी प्यारी, मुनिपद की दीक्षा धारी।
इन्द्रादिक उत्सव कीनो, सुनि आनन्द होय नवीनो॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्थ्यां तपोमंगलमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

सुदि माघ छटी दिन आयो, अरहंत परमपद पायो।
कैवल्यलक्ष्मी पाई, हमको शिव राह दिखाई॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लषष्ठ्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कलि षाढ़ अष्टमी पावन, कर आवागमन निवारण।
निर्वाण महाफल पाया, हम पूजत शीश नवाया॥

ॐ ह्रीं श्री आषाढ़कृष्णअष्टम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

जयमाला

(सोरठा)

तेरहवें तीर्थेश, विमल विमल पद देत हैं।
परमपूज्य सर्वेश, अनन्त चतुष्टय रूप जिन॥

(छन्द-कामिनी मोहन, तर्ज: मैं हूँ पूर्ण ज्ञायक...)

गाऊँ जयमाल जिनराज आनन्द सौं,
छूटि हौं दु:खमय कर्म के फन्द सौं।
मोहवश मैं अनादि से भ्रमता रहा,
नाथ कैसे कहूँ जो महादु:ख सहा॥
परम सौभाग्य से नाथ दर्शन हुआ,
जैनवाणी सुनी तत्त्व निर्णय हुआ।
है त्रिविध कर्ममल शून्य शुद्धात्मा,
ज्ञान-आनन्दमय सहज परमात्मा॥
नित्य निरपेक्ष निर्द्वन्द निर्मल अहो,
सहज स्वाधीन निर्लेप ज्ञायक प्रभो।
जानकर नाथ आदेय आनन्द हुआ,
मोहतम मिट गया आत्म-अनुभव हुआ॥
जागा बहुमान उर में अहो आपका,
भेद जाना धर्म-कर्म पुण्य-पाप का।
आपकी स्तुति देव कैसे करूँ,
गुण अनन्ते विभो! चित्त माँहीं धरूँ॥
आप ही लोक में सत्य परमेश्वरं,
वीतरागी सु सर्वज्ञ तीर्थंकरं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आपको जग से वैराग्य जब था हुआ,
देव लोकान्तिकों ने सुमोदन किया॥
परम उल्लास से नाथ संयम धरा,
घातिया घात कर ज्ञान केवल वरा।
जग को दर्शाय ध्रुव शुद्ध परमात्मा,
हो गये आप निष्कर्म सिद्धात्मा॥
भाव पंचम परम पारिणामिक महा,
करके आराधना आप शिवपद लहा।
धन्य हो ! धन्य हो !! परम उपकारी हो,
भावमय वंदना देव ! अविकारी हो॥
ध्याऊँ निज देव को पाऊँ जिनदेव पद,
इन्द्र चक्री के पद जिसके सन्मुख अपद।
कामना वासना अन्य कुछ ना रही,
सहज कृत-कृत्य ज्ञायक रहूँगा सही॥

(छन्द-घत्ता)

जय विमल जिनेशं, हरत कलेशं नमत सुरेशं सुखकारी।
जो पूजें ध्यावें, मोह नशावें, पावें पद मंगलकारी॥

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(छन्द-अडिल्ल)

जयवन्तो जिनराज, जगत में नित्य ही।
तुम प्रसाद भवि पावें, बोधि समाधि ही॥
वीतराग जिनधर्म सु, मंगलकार है।
भाव सहित जे धरे, लहे भव पार है॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

राग के समय भी ज्ञान राग से भिन्न रहता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री अनन्तनाथ जिनपूजन

(वीरछन्द)

जय अनन्त भगवन्त संत प्रभु, तारण-तरण जिहाज हो,
विषय-कषाय इन्द्रियाँ जीतीं, भावरूप जिनराज हो।
निज प्रभुता अनन्त दरशाई, मोह अंधेरा दूर भगा,
अनन्त चतुष्टय रूप महेश्वर, पूजन का उल्लास जगा॥

(दोहा)

प्रभुवर की पूजा करें, रोम-रोम हुलसाय।
निज प्रभुता पावें प्रभो, यही भाव उमगाय॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

समता भाव सहज सुखकार, जन्म मरण दुःख नाशनहार।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय॥

जय जय अनन्तनाथ भगवन्त, गुण-अनन्त अनुपम शोभन्त॥महासुख..॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

समकित शीतलता का मूल, सहज नशे भव-भव की शूल।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय॥जय जय अनन्तनाथ..॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के पद क्षत् रूप लखाय, अक्षय पद निज में विलसाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय॥जय जय अनन्तनाथ..॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जीते काम सुभट जिनराय, धारें ब्रह्मचर्य हुलसाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय॥जय जय अनन्तनाथ..॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय कामवाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अनुभव रस में तृप्त रहाय, क्षुधा तृषा सहजहिं विनशाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय॥जय जय अनन्तनाथ..॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निज-स्वभाव उद्योत कराय, सम्यग्ज्ञान प्रकाश लहाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मध्यान की अग्नि जलाय, सर्व विभाव सहज नशि जाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

साधन शुद्ध उपयोग बनाय, साध्य रूप शिवफल प्रगटाय।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु को पाकर हुए सनाथ, पावें निज अनर्घ्यपद नाथ।
महासुख होय, प्रभु पद पूजें शिवसुख होय।।जय जय अनन्तनाथ..।।
ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(चौपाई)

कार्तिक कृष्णा एकम् के दिन, गरभ माँहिं आये तुम हे जिन।
पन्द्रह मास रत्न थे बरसे, मात-पिता नर-नारी हरषे।।
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णाप्रतिपदायां गर्भमंगलमण्डिताय श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

सकल सृष्टि अति ही हरषाई, सिंहसेन गृह बजी बधाई।
ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशि दिन जन्में, मेरु नह्वन कीनो सुरपति ने।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

उल्कापात देखकर स्वामी, धरि वैराग्य हुए शिवगामी।
ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशि सुखकार, वन में गूँजा जय-जयकार।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

एक मास धरि प्रतिमा योग, जये कर्म धरि ध्यान मनोज्ञ।
चैत अमावस केवल पाय, भाव सहित हम अर्घ्य चढ़ाय।।
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

चैत अमावस लह्यो निर्वाण, जय-जय अनन्तनाथ भगवान।
अचल सिद्धपद वन्दें सार, ध्यावें समयसार अविकार।।
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

सोरठा- अनन्तनाथ भगवान, जयवन्तो मम हृदय में।
करूँ प्रभो ! गुण गान, भावविशुद्धि के लिए॥

(छन्द-पद्धरि)

भव भ्रमण मूल मिथ्यात्व नाश, पाया प्रभुवर आतम प्रकाश।
जग विभव-विभाव असार त्याग, निर्ग्रंथ मार्ग में चित्त पाग॥

साधा जिनवर शुद्धोपयोग, मुनि मुद्रा मन मोहे मनोग।
प्रभु मौन निजानन्द लीन हुए, निर्द्वन्द सहज स्वाधीन हुए॥

बिन काम दाह नहीं अक्ष भोग, नहीं राग द्वेष नहीं रोग शोक।
पर परिणति सों अत्यन्त भिन्न, निज रस में तृप्त रहें अखिन्न॥

धरि ध्यान क्षपकश्रेणी चढ़ाय, प्रभु घातिकर्म सहजहिं नशाय।
तब केवलज्ञान हुआ सुखकर, किय समवशरण धनपति आकर॥

भवि भागन वश खिरी दिव्यध्वनि, हरषे सब ज्ञानी और मुनि।
शुद्धात्म तत्त्व ही कहा सार, ध्रुव एक शुद्ध वर्जित विकार॥

हम अनुभव करि कीना प्रमान, पाया प्रभुवर सत्यार्थ ज्ञान।
जीते रागादिक सकल क्लेश, आरम्भ परिग्रह तजि अशेष॥

धारें निर्ग्रंथ स्वरूप देव, यह भाव भयो स्वामी स्वयमेव।
वृद्धिंगत हो पुरुषार्थ नाथ, पामरता का होवे विनाश॥

जग में तुम ही हो सत्य शरण, प्रभु परम हितैषी मोह हरण।
हो परम धरम आराध्य सार, निज सम करि कारण दुर्निवार॥

प्रभु पद वन्दूँ मैं बार-बार, अविकारी आनन्दरूप धार।
तुम चरण प्रसाद लहूँ अनन्त, अपनी अक्षय प्रभुता महन्त॥

ॐ ह्रीं श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- अहो अनन्त जिनेश को, नित पूजें मनलाय।
इन्द्रादिक से पूज्य हो, निश्चय शिवपद पाय॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री धर्मनाथ जिनपूजन

(गीतिका)

हे प्रभो ! शिवमार्ग पाया, भविजनों ने आप से।
आपका दर्शन हुआ, प्रभुवर परम सौभाग्य से॥
भक्ति से पूरित हृदय, गुणगान को उद्यत हुआ।
बहुमान से पूजा करूँ, निजनाथ के सन्मुख हुआ॥

(दोहा)

पूजूँ धर्म जिनेश को, भाव विशुद्धि धार।
प्रभु सम प्रभु अन्तर निरख, भक्ति करूँ अविकार॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीरछन्द)

सहज शुद्ध आतम नहिं जाना, मोह मलिनता नहिं जानी।
बाह्य मलिनता जल से धोई, धर्म रीति नहिं पहिचानी॥
मोह मलिनता को हरने अब, शुद्ध आत्मा को ध्याऊँ।
धर्मनाथ प्रभु की पूजा कर, परमधर्म निज में पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दनादि से शीतलता की, आशा में भरमाया था।
प्रभु गुण चिन्तन रूपी चंदन, नहीं क्रोधवश पाया था॥
अब भवाताप विनशाने को, भव रहित आत्मा को ध्याऊँ॥धर्मनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षयपद नहिं पहिचाना, अक्षय वैभव नहिं पाया था।
अपद्भूत इन्द्रादि पदों में, सुख समझा ललचाया था॥
अक्षय अविकारी सुख पाने, ध्रुव रूप आत्मा को ध्याऊँ॥धर्मनाथ....॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निष्काम निजानन्द नहिं जाना, भोगों में चित्त लुभाया था।
अनुकूल भोग सामग्री पा, इतराया शील नशाया था॥
अब परम शील सुख पाने को, चिद्रूप आत्मा को ध्याऊँ॥
धर्मनाथ प्रभु की पूजा कर, परमधर्म निज में पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञायकस्वभाव की दृष्टि बिना, स्वाभाविक तृप्ति न पाई थी।
रे ! क्षुधा रोग से पीड़ित हो, जो वस्तु मिली सब खाई थी॥
अविनाशी आनन्द पाने को, परिपूर्ण आत्मा को ध्याऊँ॥धर्मनाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार में भटकाया, भव-भव में स्वामिन् दुखी हुआ।
निजनिधि अवलोकन कर न सका, भव-भव में जन्मा और मुआ॥
अब सम्यग्ज्ञान प्रकाश मिला, चैतन्य आत्मा को ध्याऊँ॥धर्मनाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नि में खेय दशांग धूप, जग में जो धुआँ उड़ाते हैं।
नहिं इससे कर्म नष्ट होते, बहुते प्राणी मर जाते हैं॥
अब कर्म नशाऊँ ध्यानानल में, ध्येय आत्मा को ध्याऊँ॥धर्मनाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु पुण्य-पाप के फल पाकर, रति-अरति करें प्राणी जग के।
पर पुण्य-पाप को सहज त्याग, ज्ञानी साधक हों शिवमग के॥
अविनाशी शिवफल पाने को, निर्मुक्त आत्मा को ध्याऊँ॥धर्मनाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

बहुबार चढ़ाया द्रव्य अर्घ्य, पर प्रभु स्वरूप से रहा विमुख।
कुछ नहीं मूल्य है द्रव्यअर्घ्य का, निज अनर्घ्यपद के सन्मुख॥
अविचल अनर्घ्यपद पाने को, अब अनुपम शुद्धातम ध्याऊँ॥धर्मनाथ.॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचकल्याणक अर्घ्य

(रोला)

गर्भागम जिनराज आपका मंगलकारी,
पन्द्रह माह रत्नवर्षा होवे सुखकारी।
अष्टम सित वैशाख गर्भ कल्याण मनायाा,
पूजत तुम्हें जिनेश महा आनन्द उपजाया॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लाष्टम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

माघ शुक्ल तेरस के दिन जन्मे अविकारी,
मेरु शिखर अभिषेक और उत्सव सुखकारी।
इन्द्रादिक ने किये, भक्ति कर मैं हर्षाऊँ,
जनम-मरण की सन्तति नाशे यह वर पाऊँ॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

उल्कापात निहार विरागी हुए जिनेश्वर,
हुए माघ सित तेरस को निर्ग्रंथ मुनीश्वर।
धन्यसेन नृप धन्य प्रथम आहार कराया,
हुए पंच-आश्चर्य हर्ष जन-जन में छाया॥

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

लगभग एक वर्ष मुनिपद में निजपद भाया,
रत्नपुरी दीक्षावन आकर ध्यान लगाया।
पौष शुक्ल पूनम दिन घाति कर्म नशाये,
समवशरण अरु अतिशय अन्य सहज प्रगटाये॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लपूर्णिमायां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

श्री सम्मेदशिखर पर कर्म कलंक निवारे,
प्रभो चतुर्थी जेठ सुदी निर्वाण पधारे।
मुक्त स्वरूप विचार आपकी पूज रचाऊँ,
सम्यक् आराधन द्वारा निर्वाण सुपाऊँ॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लचतुर्थ्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

(सोरठा)

जयमाला सुखकार, गाऊँ अति आनन्द सों।
भाव रहे अविकार, भव-भव के बन्धन नशें॥

(तर्ज – अहो जगत गुरु देव...)

धर्मनाथ जिनराज परम धरम दर्शाया,
रत्नत्रय अविकार, शिवपुर पंथ दिखाया।
प्रभो ! प्रयोजनभूत सप्त तत्त्व प्रगटाये,
उपादेय निज भाव हेय अन्य सब गाये॥

निज-दृष्टि निज-ज्ञान अहो लीनता निज में,
निज-आश्रय से नाथ सहज बढ़े शिवमग में।
निज अनुभव सर कूप शिवपुर मूल जिनेश्वर,
तुमरे चरण प्रसाद जाना हे परमेश्वर॥

त्रिभुवन मंगलकार प्रभुवर धर्म तुम्हारा,
मिले हमें अविकार जागा भाग्य हमारा।
पंचकल्याणक देव सुरगण आय मनावें,
तीन लोक के जीव सहजहिं साता पावें॥

निकट भव्य तो नाथ लख सम्यक् प्रगटावें,
निर्मोही हो नाथ शिवमारग में धावें।
दर्शन कर मुनिनाथ मुक्त स्वरूप दिखावे,
पूजत तुम्हें जिनेश मुक्ति समीप सु आवे॥

स्व-पर विवेक जगाय देव ! गुणों का चिन्तन,
चाह-दाह विनशाय होय धर्म आकिंचन।
धूल समान दिखाँय, जग के वैभव सारे,
पर पद आपद रूप, भोग भुजंग से कारे॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भक्ति कर जिनदेव यही भावना भाऊँ,
प्रभो ! आप सम होय अपनी प्रभुता पाऊँ।
तवपद मम उरमाँहिं, मम उर तुम चरणन में,
तब लौं लीन रहाय, थिरता होवे निज में॥

(छन्द-घत्ता)

श्री धर्म जिनेश्वर हे परमेश्वर, जजत मुनीश्वर सुखकारी।
मैं भी प्रभु ध्याऊँ, कर्म नशाऊँ शिवपद पाऊँ अविकारी॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पूजत धर्म जिनेश को, सर्व क्लेश विनशाय।
अक्षय निज सम्पत्ति मिले, सिद्ध स्वपद प्रगटाय॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री शान्तिनाथ जिनपूजन

(गीतिका)

चक्रवर्ती पाँचवें अरु कामदेव सु बारहवें।
इन्द्रादि से पूजित हुए, तीर्थेश जिनवर सोलहवें॥
तिहुँलोक में कल्याणमय, निर्ग्रन्थ मारग आपका।
बहुमान से पूजन निमित्त, स्वरूप चिन्तें आपका॥

(सोरठा)

चरणों शीस नवाय, भक्तिभाव से पूजते।
प्रासुक द्रव्य सुहाय, उपजे परमानन्द प्रभु॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(बसन्ततिलका)

प्रभु के प्रसाद अपना ध्रुवरूप जाना,
जन्मादि दोष नाशें हो आत्मध्याना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहिं पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जाना स्वरूप शीतल उद्योतमाना,
भव ताप सर्व नाशे हो आत्मध्याना॥श्री शान्ति...॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय विभव प्रभु सम निज माँहिं जाना,
अक्षय स्वपद सु पाऊँ हो आत्मध्याना॥श्री शान्ति...॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम ब्रह्मरूपं निज आत्म जाना,
दुर्दान्त काम नाशे हो आत्मध्याना॥श्री शान्ति...॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परिपूर्ण तृप्त ज्ञाता निजभाव जाना,
नाशें क्षुधादि क्षण में हो आत्मध्याना॥श्री शान्ति...॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मोह ज्ञानमय ज्ञायक रूप जाना,
कैवल्य सहज प्रगटे हो आत्मध्याना॥श्री शान्ति...॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्कर्म निर्विकारी चिद्रूप जाना,
भव-हेतु-कर्म नाशें हो आत्मध्याना॥श्री शान्ति...॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्बन्ध मुक्त अपना शुद्धात्म जाना,
प्रगटे सु मोक्ष सुखमय हो आत्मध्याना॥श्री शान्ति...॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अविचल अनर्घ्य प्रभुतामय रूप जाना,
विलसे अनर्घ्य आनन्द हो आत्मध्याना॥श्री शान्ति...॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचकल्याणक अर्घ्य

(दोहा)

भादौं कृष्णा सप्तमी, तजि सर्वार्थ विमान।
ऐरा माँ के गर्भ में, आए श्री भगवान॥

ॐ ह्रीं भादवकृष्णासप्तम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

कृष्णा जेठ चतुर्दशी, गजपुर जन्मे ईश।
करि अभिषेक सुमेरू पर, इन्द्र झुकावें शीश॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

सारभूत निर्ग्रन्थ पद, जगत असार विचार।
कृष्णा जेठ चतुर्दशी, दीक्षा ली हितकार॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

आत्मध्यान में नशि गये, घातिकर्म दुखदान।
पौष शुक्ल दशमी दिना, प्रगटो केवलज्ञान॥

ॐ ह्रीं पौषशुक्लादशम्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जेठ कृष्ण चौदशि दिना, भये सिद्ध भगवान।
भाव सहित प्रभु पूजते, होवे सुख अम्लान॥

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीशान्तिनाथ-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(चौपाई)

जय जय शान्तिनाथ जिनराजा, गाऊँ जयमाला सुखकाजा।
जिनवर धर्म सु मंगलकारी, आनन्दकारी भवदधितारी॥

(लावनी)

प्रभु ! शान्तिनाथ लख शान्त स्वरूप तुम्हारा।
चित शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा॥टेक॥
हे वीतराग सर्वज्ञ परम उपकारी,
अद्भुत महिमा मैंने प्रत्यक्ष निहारी।
जो द्रव्य और गुण पर्यय से प्रभु जानें,
वे जानें आत्मस्वरूप मोह को हानें॥
विनशें भवबन्धन हो सुख अपरम्पारा॥ चित शान्त हुआ मैं... ॥१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हे देव! क्रोध बिन कर्म शत्रु किम मारा?
बिन राग भव्यजीवों को कैसे तारा?
निर्ग्रन्थ अकिंचन हो त्रिलोक के स्वामी,
हो निजानन्दरस भोगी योगी नामी॥
अद्भुत, निर्मल है सहज चरित्र तुम्हारा॥ चित शान्त हुआ मैं... ॥२॥
सर्वार्थसिद्धि से आ परमार्थ सु साधा,
हो कामदेव निष्काम तत्त्व आराधा।
तजि चक्र सुदर्शन, धर्मचक्र को पाया,
कल्याणमयी जिनधर्मतीर्थ प्रगटाया॥
अनुपम प्रभुता माहात्म्य विश्व से न्यारा॥ चित शान्त हुआ मैं... ॥३॥
गुणगान करूँ हे नाथ आपका कैसे?
हे ज्ञानमूर्ति! हो आप आप ही जैसे।
हो निर्विकल्प निर्ग्रन्थ निजातम ध्याऊँ,
परभावशून्य शिवरूप परमपद पाऊँ॥
अद्वैत नमन हो प्रभो सहज अविकारा॥ चित शान्त हुआ मैं... ॥४॥
कुछ रहा न भेद विकल्प पूज्य पूजक का,
उपजे न द्वन्द दुःखरूप साध्य-साधक का।
ज्ञाता हूँ ज्ञातारूप असंग रहूँगा,
पर की न आस निज में ही तृप्त रहूँगा॥
स्वभाव स्वयं को होवे मंगलकारा॥ चित शान्त हुआ मैं... ॥५॥

(घत्ता)

जय शान्ति जिनेन्द्रं, आनन्दकन्दं, नाथ निरंजन कुमतिहरा।
जो प्रभु गुणगावें, पाप मिटावें, पावें आतमज्ञान वरा॥

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- भक्तिभाव से जो जजें, जिनवर चरण पुनीत।
वे रत्नत्रय प्रगटकर, लहें मुक्ति नवनीत॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री कुन्थुनाथ जिनपूजन

(दोहा)

कामदेव होकर प्रभो ! किया काम निर्मूल।
चक्रवर्तीपद सम्पदा, समझी तुमने धूल॥
निर्ग्रन्थ पद आराधकर, धर्म तीर्थ प्रगटाय।
हुए मुक्त श्री कुन्थु प्रभु, पूजूँ प्रीति बढ़ाय॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीरछन्द)

अन्तर साम्यभाव धारण कर, जल जिनचरणों में लाऊँ।
जन्म-जरा-मृत दोष नाशने, अविनाशी निजपद ध्याऊँ॥
कुन्थुनाथ की पूजा करते, हृदय हर्षित होता है।
भक्तिभाव से प्रभु गुण गाते, आनन्द विलसित होता है॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज भाव से शान्त भावं से, चन्दन नाथ चढ़ाता हूँ।
क्रोधादिक संताप मेटने, आत्म भावना भाता हूँ॥कुन्थुनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल अक्षत जिनवर सन्मुख, सविनय आज चढ़ाता हूँ।
क्षत् भावों से उदासीन हो, अक्षय पद को ध्याता हूँ॥कुन्थुनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम्हें नाथ निष्काम निरखकर, प्रासुक पुष्प चढ़ाता हूँ।
कामभाव को निष्फल करने, ब्रह्म भावना भाता हूँ॥कुन्थुनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

देव ! स्वयं में तृप्त तुम्हें लख, यह नैवेद्य चढ़ाता हूँ।
क्षुधा वेदना हरने को, परिपूर्ण भावना भाता हूँ॥कुन्थुनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लोकालोक प्रकाशक हो प्रभु फिर भी दीप चढ़ाता हूँ।
मोह अंधेरा दूर भगाने, ज्ञान भावना भाता हूँ॥
कुन्थुनाथ की पूजा करते, हृदय हर्षित होता है।
भक्तिभाव से प्रभु गुण गाते, आनन्द विलसित होता है॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्रायं मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धन्य प्रभो ! निष्कर्म अवस्था, मेरे मन को भाई है।
वैभाविक दुष्कर्म जलाने, ध्यान अग्नि प्रगटाई है॥कुन्थुनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम जैसा अविनाशी फल, पाने को चित्त ललचाया है।
प्रासुकफल ले भक्तहृदय प्रभु, चरणशरण में आया है॥कुन्थुनाथ..॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु अनर्घ्य वैभव लख, मेरा रोम-रोम पुलकाया है।
ऐसा पद प्रगटाने स्वामी, सविनय अर्घ्य चढ़ाया है॥कुन्थुनाथ...॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(वीरछन्द)

तजि विमान सर्वार्थसिद्धि प्रभु, गर्भ विषैं आये सुखकार।
श्रावण कृष्णा दशमी के दिन, पूजूँ जिनवर मंगलकार॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णदशम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

एकम सुदि वैशाख सु पावन, हुई बधाई मंगलकार।
अन्तिम जन्म हुआ हे स्वामी, पूजें हरि करि उत्सव सार॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां जन्ममंगलमण्डिताय श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

नगरी की शोभा को लखते, जागा उर वैराग्य महान।
धनि एकम वैशाख सुदी को, पद निर्ग्रन्थ लिया अम्लान॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां तपोमंगलमण्डिताय श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

केवल पायो चैत सुदी तृतीया को घातिकर्म चकचूर।
अद्भुत समवशरण की शोभा, धर्म प्रभाव हुआ भरपूर॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लतृतीयायां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

टोंक ज्ञानधर से शिव पायो, सुदि एकम वैशाख दिना।
हरि निर्वाण महोत्सव कीनो, पूजूँ मन-वच-काय बिना॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

जयमाला

(दोहा)

परम अहिंसा धर्म का, दिया सत्य उपदेश।
निजानन्द में मग्न हो, गाऊँ सुयश जिनेश॥

(तर्ज– दिन रात मेरे स्वामी...)

आया शरण तुम्हारी, हे कुन्थुनाथ जिनवर।
आतम निधि सुपाऊँ, पुरुषार्थ जागे प्रभुवर॥टेक॥

जब से स्वरूप देखा, नहीं और कुछ सुहावे।
ज्यों मीन जल बिना त्यों, मम चित्त छटपटावे॥
निजपद की भावना है, तुम सम ही होऊँ सत्वर॥आतम.॥

प्रभु चक्रवर्ती पद को तृण के समान छोड़ा।
होकर परम जितेन्द्रिय, विषयों से मुख को मोड़ा॥
भव जाल से विरत हो, हुए सहज दिगम्बर॥आतम.॥

धनि धर्म मित्र श्रावक, आहार प्रथम दीना।
निज आत्म भावना से, मुक्ती का मार्ग लीना॥
देवों ने हर्ष कीना, पंचाश्चर्य प्रगट कर॥आतम.॥

एकाग्र हुए स्वामी, निज भाव थे निहारे।
फिर क्षपक श्रेणि चढ़कर, घाती करम संहारे॥
प्रगटा अनंत चतुष्टय, हुए अरहंत सुखकर॥आतम.॥

दश जन्म के थे अतिशय, कैवल्य के हुए दश।
देवों ने कीने चौदह, थे प्रातिहार्य भी अठ॥
धनपति ने भक्ति कीनी विभु समवशरण रचकर॥आतम.॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभु दिव्य-ध्वनि के द्वारा, सन्मार्ग था बताया।
तत्त्वों का मार्ग सुनकर, भव्यों ने बोध पाया॥
जिनमार्ग पर चलूँ मैं, निर्भय निःशंक होकर॥आतम.॥

अनुपम है प्रभुता प्रभु की, अद्भुत है महिमा प्रभु की।
वचनों से कैसे गावें, हम स्तुति सु प्रभु की॥
हो ज्ञान में प्रतिष्ठित बस ज्ञान ही जिनेश्वर॥आतम.॥

चिन्मूर्ति हो विराजे, ज्यों मुक्ति में हे स्वामी।
ध्रुव अचल ऋद्धि पाई, विश्वेश त्रिजग नामी॥
सो भावना मैं भाऊँ, चरणों में शीश धरकर॥आतम.॥

(छन्द-घत्ता)

प्रभु के गुण गावें, मुनिजन ध्यावें, शुद्धातम में लीन भये।
रागादि विनाशे, ज्ञान प्रकाशे, कर्म महारिपु सहज जये॥

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पूजा कुन्थु जिनेश की, नित नव मंगलकार।
जग प्रपंच से काढ़ि कै, रत्नत्रय दातार॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री अरनाथ जिनपूजन

(छन्द-लावनी)

अरनाथ जिनेश्वर, दुर्लभ दर्शन पाया।
हे जगतपूज्य ! पूजा का भाव जगाया॥
मदनेश्वर, चक्री, तीर्थंकर पद धारी।
मम हृदय पधारो, भाव रहें अविकारी॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(सोरठा)

जन्म-जरा-मृत नाश के, हुए प्रगट भगवान।
प्रभु समान शुद्धात्मा, अविनाशी पहिचान॥
सहज भक्ति उर धारि के, पूजूँ अर जिनराय।
ध्याऊँ ध्रुव परमात्मा, परमानन्द विलसाय॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवाताप नाशक सुतप, कियो जिनेश्वर देव।
मिटती भक्ति प्रसाद से, चाह दाह स्वयमेव॥सहज..॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत के कारण घातिया, आत्म ध्यान से नाश।
अक्षय गुणमय आत्मा, किया विभो परकाश॥सहज..॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

आर्त ध्यान के हेतु हैं, रौद्र ध्यानमय भोग।
उत्तम शील प्रकाशकर, कीनो पूरण योग॥सहज..॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज रस में संतुष्ट हो, क्षुधा वेदनी टाल।
सो रस निज में ही झरे, पीवत होय निहाल॥सहज..॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज ज्ञानमय आत्मा, भासा तत्त्व महान।
मोहादिक विध्वंस कर, पाया केवलज्ञान॥सहज..॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मेन्धन को भस्म कर, धर्म सुगन्ध सुदेय।
तीन लोक पूजित हुए, दिव्य धूप मैं लेय॥सहज..॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म प्रकृति त्रेसठ तजी, पच्चासी फिर नाशि।
महामोक्षफल प्रभु लहो, गुण अनन्त की राशि॥सहज..॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अनर्घ्य प्रभुता अहो! प्रगटाई जिननाथ।
सो प्रभुता अन्तर लखी, अर्घ्य लेय हे नाथ॥सहज..॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचकल्याणक अर्घ्य

(तर्ज : भावना रथ पर चढ़ जाऊँ...)

पंच कल्याणक मनहारी–२
भव्यों के कल्याण निमित्त यह उत्सव सुखकारी ।।टेक ।।
पन्द्रह मास रतन शुभ वर्षे, आनन्द भयो भारी।
फाल्गुन शुक्ला तीज हुआ, गर्भागम सुखकारी ।।पंचकल्याणक.. ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लातृतीयां गर्भमंगलमण्डिताय श्री अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

मगसिर सुदी चर्तुदशि गजपुर, जन्मे जगतारी।
मेरु शिखर पर इन्द्रादिक, अभिषेक कियो भारी ।।पंचकल्याणक ।।

ॐ ह्रीं मगसिरशुक्लचतुर्दश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. ।

मगसिर शुक्ला दशमी को निर्ग्रन्थ दशा धारी।
समता रस की धार बहाई, नित्यानन्दकारी ।।पंचकल्याणक ।।

ॐ ह्रीं मगसिरशुक्लचतुर्दश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

कार्तिक शुक्ला द्वादशि को लहि, केवल अविकारी।
धर्मतीर्थ का किया प्रवर्तन, सबको हितकारी ।।पंचकाल्याकणक ।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

कृष्णा चैत अमावस्या को, बन्ध दशा टारी।
नित्य निरंजन शिवपद पायो, अक्षय अविकारी ।।पंचकल्याकणक ।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णामावस्यायां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

धर्म शस्य हित मेघ सम, श्री अरनाथ महान।
गाऊँ जयमाला प्रभो, परमानन्द की खान ।।

(तर्ज-प्रभो! आपने एक ज्ञायक दिखाया..)

प्रभु आपको पूजते हर्ष भारी,
स्वयं की विभूति स्वयं में निहारी।
अहो नाथ ! तुमसे तुम्हीं हो दिखाते
महानन्दमय पद तुम्हीं तो बताते ।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महामोहतम प्रभु तुम्हीं तो नशाते,
सहज ज्ञानमय ज्योति तुम ही जलाते।
सुगम मोक्षमारग तुम्हीं प्रभु दिखाते,
सरस ज्ञान गंगा तुम्हीं हो बहाते॥
विषयों के फन्दे से तुम ही छुड़ाते,
चर्तुगति दुःखों से तुम्हीं तो बचाते।
परम ज्ञान वैराग्य तुम ही जगाते,
निर्ग्रन्थ पथ में तुम्हीं प्रभु बढ़ाते॥
हो निरपेक्ष बान्धव तुम्हीं साँचे जग में,
तुम्हीं मार्गदर्शक अहो मोक्षमग में।
हुआ मैं निशंकित तुम्हारे वचन से,
परम सौख्य पाया स्वयं अनुभवन से॥
कहाँ तक कहूँ नाथ महिमा तुम्हारी,
न शब्दों में शक्ति प्रभो ! इतनी धारी॥
चिन्तन तुम्हारा नहीं पार पावे,
अहो स्वानुभव में न आनंद समावे॥
खिला पुण्य मेरा, मिला दर्श तेरा,
यही भावना होय वन माँहिं डेरा।
हो निर्ग्रन्थ मुद्रा महासुखकारी,
सहज ध्यान में कर्म नाशे विकारी॥
नहीं कामना कोई निष्काम वर्तूं,
परम समरसी भाव निर्मान वर्तूं।
नहीं क्षोभ आवे परम शांत वर्तूं,
निर्द्वन्द्व निर्मूढ़ निर्भ्रान्त वर्तूं॥
विशुद्धि जिनेश्वर सु बढ़ती ही जावे,
परम-भाव में वृत्ति रमती ही जावे।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रभो आप सम ही परम लीनता हो,
परम मुक्तता हो, परम पूर्णता हो॥

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

निज कल्याण स्वरूप, धर्मचक्र के अर प्रभो।
पूजूँ हे शिवभूप ! होवें मंगल नित नये॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री मल्लिनाथ जिनपूजन

(छन्द-अडिल्ल)

मल्लिनाथ जिनराज, परम आदर्श हो।
भविजन को सुखदाय, आपका दर्श हो॥
देव आप सम ब्रह्मचर्य वर्ते सदा।
पूजूँ तुम्हें जिनेश, हर्ष उर में महा॥

(छन्द-दोहा)

परम जितेन्द्रिय जिन हुए, काम सुभट को जीत।
स्वाभाविक आनंद की, जागी सहज प्रतीति॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(छन्द-अवतार)

जल जाना प्रभु निस्सार, चरणन माँहिं तजूँ।
तुमसम ही हे जिनराय, अव्यय भाव सजूँ॥
हे बालयती तीर्थेश, नित प्रति शिर नाऊँ।
हे मल्लिनाथ जिनराज, शाश्वत पद पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु चन्दनादि निस्सार, चरणन माँहिं तजूँ।
तुम सम ही हे जिनराज, शीतल शांत रहूँ॥हे बालयती.. ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षत् रूप विभाव असार, चरणन माँहिं तजूँ।
तुम सम ही हे जिनराज, अक्षय सौख्य लहूँ॥
हे बालयती तीर्थेश, नित प्रति शिर नाऊँ।
हे मल्लिनाथ जिनराज, शाश्वत पद पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु काम भोग निस्सार, चरणन माँहिं तजूँ।
तुम सम ही हे जिनराज, ब्रह्म विलास भजूँ॥ हे बालयती.. ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निस्सार बाह्य नैवेद्य, चरणन माँहिं तजूँ।
तुम सम ही हे जिनराज, तृप्त सदैव रहूँ॥हे बालयती.. ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीप प्रभु निस्सार, चरणन माँहिं तजूँ।
तुम सम ही हे जिनराज, नित निर्मोह रहूँ॥हे बालयती.. ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुखरूप नहीं जड़ धूप, चरणन माँहिं तजूँ।
तुम सम ही हे जिनराज, नित निष्कर्म रहूँ॥हे बालयती.. ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लौकिक फल सर्व असार, चरणन माँहिं तजूँ।
तुम सम ही हे जिनराज, मुक्त सदैव रहूँ॥हे बालयती.. ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु बाह्य विभव निस्सार, चरणन माँहिं तजूँ।
तुम सम ही हे जिनराज, विभव अनर्घ्य लहूँ॥हे बालयती.. ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(सोरठा)

करे जगत कल्याण, गर्भागम भी आपका।
हो भवभय से त्राण, भाव सहित पूजूँ प्रभो ॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लप्रतिपदायां गर्भमंगलमण्डिताय श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जन्म समय इन्द्रादि, कीना नह्वन सुमेरु पर।
जन्मोत्सव कर याद, आनन्द धरि पूजूँ प्रभो॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

ब्याह समय वैराग, धारि हृदय दीक्षा लही।
निज स्वरूप में पाग, कर्म नाश उद्यम किया॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लैकादश्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि।

केवलज्ञान सुपाय, धर्म तीर्थ प्रगटाइयो।
निश्चय शिव-सुखदाय, पूजूँ अति उल्लास सौं॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णद्वितीयायां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

सर्व कर्म मल जारि, अविनाशी शिवपद लह्यो।
मुक्त स्वरूप निहार, प्रभु निश्चय पूजा करूँ॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लपंचम्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

जयमाला जिनराज की, गाऊँ मंगल रूप।
कर स्मरण चरित्र प्रभु, ध्याऊँ शुद्ध चिद्रूप॥

(ऑचलीबद्ध-चौपाई)

जय-जय मल्लिनाथ भगवान, जिनमुद्रा लखकर अम्लान।
आनन्द मेरे उर न समाय, तन का रोम-रोम पुलकाय॥

महिमा प्रभु की कही न जाय, प्रभु भक्ति वाचाल कराय।
परमब्रह्म परमात्मस्वरूप, तुम गुण तिहुँ जगमाँहिं अनूप॥

जम्बूद्वीप विदेह मँझार, नृपति वैश्रवण चित्त उदार।
मुनि सुगुप्ति के दर्शन किए, रत्नत्रय व्रत सहजहि लिए॥

इक दिन वन विहार के काल, देखा वट का वृक्ष विशाल।
किन्तु लौटते समय विनष्ट, देख हुआ था चित्त विरक्त॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दीक्षा ले भायी सुखकार, भावना सोलह कारण सार।
किया प्रकृति तीर्थंकर बंध, कर समाधि हुए अहमिन्द्र॥

मिथिला नगरी राजा कुम्भ, प्रजावती रानी अतिरम्य।
अपराजित विमान तें सार, आये ताके गर्भ मंझार॥

नाना उत्सव देव सु किये, धन्य घड़ी प्रभु जन्मत भये।
हुआ सुमेरू पर अभिषेक, दर्शन से प्रभु जगे विवेक॥

अद्भुत क्रीड़ाएं सुखकार, करते बढ़ते भये कुमार।
शादी को जब चली बरात, लख शोभा प्रभु हुए उदास॥

हुआ जाति स्मरण सु ज्ञान, दीक्षा हेतु किया प्रस्थान।
धिक्-धिक् कह त्यागे जड़भोग, आराधा निजरूप मनोग॥

छह दिन में लहि केवलज्ञान, धर्मतीर्थ प्रगटा अम्लान।
समवशरण में शोभें आप, भविजन के नाशें संताप॥

एक मास पहले जिनराज, सम्बल कूट सु आय विराज।
करके योग निरोध महान, पायो अविचल पद निर्वाण॥

भाव सहित पूजत जिनदेव, तत्त्वज्ञान जागे स्वयमेव।
विचरूँ मैं भी प्रभु के पंथ, पाऊँ दशा परम निर्ग्रंथ॥

(छन्द-घत्ता)

जय मल्लि जिनेन्द्रं, आनन्द कन्दं, चिदानन्दमय चित्त धरूँ।
तज जग जंजालं, सुगुण विशालं, प्रभु समान ही प्रगट करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

प्रभु पूजा सुखकार, हर्षित हो नित प्रति करूँ।
पाऊँ निज पद सार, अन्य न कोई कामना॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनपूजन

(गीतिका)

मुनिनाथ त्रिभुवननाथ पूजित, मुनिसुव्रत प्रभु को नमूँ ।
प्रभु भक्तिमय धरि भाव निर्मल, मोह मायादिक वमूँ॥
मम हृदय में आओ विराजो, हर्ष से पूजन करूँ ।
निर्भेद हो, निरखेद हो, निर्मुक्त प्रभुता विस्तरूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः ।
ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(छन्द-चौपाई)

आत्मतीर्थ जल से अविकारी, भाव सहित पूजूँ त्रिपुरारी।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-आताप विनाशन हारी, चन्दन से पूजूँ उपकारी।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय आबाधित पद धारी, अक्षत से पूजें अविकारी।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

परम ब्रह्ममय रूप सु ध्याऊँ, काम वासना दूर भगाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निजरस आस्वादी हो स्वामी, नाशूँ क्षुधा महादुखदानी।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वपर ज्ञानमय ज्योति जगाऊँ, मोह महातम सहज मिटाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान अग्नि में कर्म जलाऊँ, उर्ध्वगमन से शिवपुर जाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सभी पुण्यफल हेय लखाऊँ, निर्वांछक हो शिवफल पाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-भावमय अर्घ्य चढ़ाऊँ, पद अनर्घ्य प्रभु सम प्रगटाऊँ।
मुनिसुव्रत प्रभु गुण उच्चारूँ, धन्य भाग्य जब मुनिव्रत धारूँ॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(छन्द-अडिल्ल)

श्रावण कृष्णा दूज गर्भ आए प्रभो,
सोला सपने माँ को दिखलाए विभो।
करें देवियाँ सेव मात की चाव सों,
हम हू पूजें जिनवर भक्ति भाव सों॥

ॐ ह्रीं श्रावणकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

तिथि वैशाख वदी दशमी अति पावनी,
जन्मकल्याणक की थी छटा सुहावनी।
मेरु शिखर पर इन्द्र प्रभु को ले गयो,
किया महा-अभिषेक जगत आनन्द भयो।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

लख गजराज प्रसंग विरक्ति मन धरी,
ली हरिवंश शिरोमणि ! दीक्षा शिवकरी।
तिथि वैशाख वदी दशमी सुखकार थी,
मुनिसुव्रत की गूँजी जय-जयकार थी॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तिथि वैशाख वदी नवमी चित थिर कियो,
क्षपक श्रेणि चढ़ घाति नाशि केवल लियो।
दिव्यध्वनि सुन भव्य अनेक सु तिर गये,
पूजत अहो जिनेश भाव सम्यक् भये॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

निर्जर टोंक शिखर सम्मेद तें शिव गये,
फाल्गुन कृष्णा बारस सिद्धालय ठये।
परम मुक्त शुद्धात्म स्वरूप दिखाइया,
हे प्रभु हमहू पावें भाव जगाइया॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णद्वादशम्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

जयमाला

(दोहा)

जीते अन्तर शत्रु प्रभु, इन्द्रिय विषय-कषाय।
मुनिव्रत धरि शिवपद लह्यो, मुनिसुव्रत जिनराय॥

(वीरछन्द)

पूजा करके भक्ति करते, मुनिसुव्रत भगवान की।
यही भावना प्रभु सम पावें, पदवी हम निर्वाण की॥

देखो प्रभु ने सहज भाव से, दुर्लभ रत्नत्रय धारा।
जगत प्रपंच तजे दुःखकारी, मुनि दीक्षा को स्वीकारा॥

सभी जीव दुःखों से छूटें, पावें आतम ज्ञान को।
पाप-पुण्य की बेड़ी टूटें, धारें आतम ध्यान को॥

जब ही ऐसे भाव जगे थे, प्रकृति बँधी तीर्थंकर की।
हुए पंचकल्याणक मण्डित, जय हो जगत हितंकर की॥

सोमा-नन्दन कर्म निकन्दन, धर्मतीर्थ जो प्रगटाया।
महाभाग्य हमने भी पाया, महानन्द उर में छाया॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोह अंधेरा दूर हुआ है, वस्तु स्वभाव धर्म भासा।
जीव-अजीव भिन्न दिखलावें, दुखकारण आस्रव नाशा॥

संवर पूर्वक होय निर्जरा, कर्म बंध तड़ तड़ टूटें।
धन्य परम निर्मुक्त दशा हो, पर-सम्बन्ध सभी छूटें॥

तृप्त स्वयं में मग्न स्वयं में, काल अनंत रहें अविकार।
यही भावना सहज पूर्ण हो, और चाह नहीं रही लगार॥

करें अनुसरण प्रभो आपका, आराधन निज आतम का।
हुआ सहज विश्वास मुनीश्वर, पद पाऊँ परमातम का॥

(छन्द-घत्ता)

अनुपम गुणधारी, हे अविकारी, मुनिसुव्रत जिनशरण लही।
रत्नत्रय पाऊँ मंगल गाऊँ, जाऊँ अष्टम मुक्ति मही॥

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

(सोरठा)

पूजा श्री जिनराज, महाभाग भविजन करें।
पावें सिद्ध समाज, तीन लोक में पूज्य हों॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री नमिनाथ जिनपूजन

(छन्द-पद्धरि)

नमिनाथ जजूँ जिननाथ भजूँ, मिथ्या संकल्प-विकल्प तजूँ।
ये ही शिवसुख का कारण है, निजभाव सजूँ निजभाव भजूँ॥
अति पुण्योदय जागा स्वामिन् बहुमान आपका आया है।
पूजन करते ज्ञानानन्द सागर, अन्तर में उछलाया है॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(छन्द-चाल)

सम्यक् जल ले अविकारी, पूजूँ चैतन्य विहारी।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, जन्मादिक दोष नशाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्वांछिक चन्दन पाऊँ, प्रभु चाह दाह बिनशाऊँ।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, धर्मामृत धार बहाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत् अक्षत भेद विचारूँ, विचिकित्सा दोष विडारूँ।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, अक्षत से पूज रचाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु प्रासुक पुष्प चढ़ाऊँ, परिणति निजमाँहिं लगाऊँ।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, निष्काम भावना भाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म परमरस स्वादी, नाशो मम क्षुधा कुव्याधी।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, प्रासुक नैवेद्य चढ़ाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्धकार नहीं भावे, ताको प्रभु ज्ञान नशावे।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, प्रभु सम केवल प्रगटाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु ध्यान अग्नि प्रजलाई, कर्मों की धूल उड़ाई।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, वात्सल्य भाव प्रगटाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

वैभाविक फल विनशाया, प्रभु धर्म प्रभाव बढ़ाया।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, जिन मुक्तिमहाफल पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टांग अर्घ्य ले स्वामी पूजूँ मैं अन्तर्यामी।
नमिनाथ चरण सिर नाऊँ, अविचल अनर्घ्यपद पाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचकल्याणक अर्घ्य

(वीरछन्द)

आश्विन कृष्णा द्वितीया के दिन, शुभ गर्भ विषैं प्रभुवर आए।
अभिनन्दन मात-पिता का कर, देवों ने रत्न सु वर्षाये॥

ॐ ह्रीं आश्विनकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

दसवीं अषाढ़ श्यामा के दिन, मंगलमय अन्तिम जन्म लिया।
नरकों में भी साता आई, देवों ने उत्सव आन किया।

ॐ ह्रीं अषाढ़कृष्णदशम्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

दो देवों ने आ नमन किया, अपराजित प्रभु वृतान्त कहा।
तब जातिस्मरण हुआ सुखमय, कलिषाढ़ दशौं तप आप लहा॥

ॐ ह्रीं अषाढ़कृष्णदशम्यां तपोमंगलमण्डिताय श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

शुद्धातम रस में लीन हुए, तब चार घाति चकचूर किए।
मगसिर सित एकादशि स्वामी, केवलज्ञानी अरहंत हुए॥

ॐ ह्रीं मगसिरशुक्लैकादशम्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

है टोंक मित्रधर सुखकारी, सम्मेदशिखर से सिद्ध हुए।
वैशाख कृष्ण चौदश के दिन, प्रभु आवागमन विमुक्त हुए॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(दोहा)

भाव सहित पूजा करी, गाऊँ अब जयमाल।
परिणति अन्तर में ढले, होऊँ सहज निहाल॥

(छन्द-रोला)

जयवन्तो नमिनाथ विश्व के जाननहारे।
जयवन्तो नमिनाथ दोष रागादि निवारे॥

जयवन्तो नमिनाथ मोहतम नाशन हारे।
जयवन्तो नमिनाथ भवोदधि तारण हारे॥

चरण परस से भूमि जगत में तीर्थ कहाई।
भाव विशुद्धि की निमित्त सबको सुखदाई॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यान द्वार से मम परिणति में निवसो स्वामी।
रत्नत्रयमय भाव-तीर्थ प्रगटे जगनामी॥

परमानन्दमय नाथ भाग्य से तुमको पाया।
भव-भव का संताप सर्व ही सहज पलाया॥

भेदज्ञान की ज्योति जगी गुण चिन्तत प्रभुजी।
आत्मज्ञान की कला खिली, अन्तर में जिनजी॥

निज प्रभुता में मग्न नाथ जग प्रभुता पाई।
भई विभूति समवशरण की मंगलदाई॥

दिव्य-ध्वनि से दिव्य-तत्त्व प्रभुवर दर्शाया।
सम्यक् सरस सरल शिवपथ जिनवर दर्शाया॥

निर्मोही हो नाथ आपका मारग पाऊँ।
आप रहो आदर्श मुक्तिमारग मैं धाऊँ॥

राग-द्वेष मय वैभाविक परिणति मिट जावे।
रहूँ परम निर्मुक्त स्वपद प्रभु सम प्रगटावे॥

वचनातीत स्वरूप वचन में कैसे आवे।
चिन्तन भी प्रभु महिमा का कुछ पार न पावे॥

अहो ! स्वानुभवगम्य नाथ को निज में ध्याऊँ।
प्रभु पूजा के निमित्त सहज पुरुषार्थ बढ़ाऊँ॥

(छन्द-घत्ता)

धनि-धनि नमिनाथा, नावें माथा, इन्द्रादिक तव चरणों में।
भव दुःख नशाऊँ, ध्यान बढ़ाऊँ, शिवसुख पाऊँ चरणों में॥

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

करें करावें मोद धर, पूजा श्री जिनराज।
स्वर्गादिक सुख पायके, पावें शिवपद राज॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री नेमिनाथ जिनपूजन

(रोला)

नेमिनाथ जिनराज, दर्शकर चित हुलसाया,
ज्ञानानन्दमय देव ! सहज निजपद दरशाया।
लख अनुपम वैराग्य आपका त्रिभुवन नामी,
जगा सहज बहुमान विराजो हृदय स्वामी॥

(दोहा)

बाल ब्रह्मचारी प्रभो, अद्भुत प्रभुतावान।
पूजें हर्ष विभोर हो, भाव सहित भगवान॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

ज्ञानसरोवर का सम्यक् जल, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
जन्म-जरा-मृत नाश करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥
धन्य-धन्य नेमीश्वर स्वामी, बालयती हो शिवपद पाय।
आतमनिधि दातार जिनेश्वर, भाव यही निजपद प्रगटाय॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

दाह निकंदन शीतल चन्दन, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
सहज भाव शीतल नित वर्ते, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥धन्य...॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अमल अखंडित अनुपम अक्षत, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
निज अक्षय पद प्राप्त करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥धन्य...॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्म वृक्ष के पुष्प शीलमय, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
काम व्यथा निर्मूल करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥धन्य...॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज रस पूरित नैवेद्य सुखमय, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
नाश करन को दोष क्षुधादि, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥धन्य...॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रत्न दीप सुन्दर सुज्ञानमय, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
मोह तिमिर के नाश करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥
धन्य-धन्य नेमीश्वर स्वामी, बालयती हो शिवपद पाय।
आतमनिधि दातार जिनेश्वर, भाव यही निजपद प्रगटाय॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो गंध दशधर्ममयी मैं, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
अष्ट कर्म निर्मूल करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥धन्य...॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रासुक फल मैं सहज भावमय, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
महामोक्ष फल प्राप्त करन को, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥धन्य...॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य अनूपम जिनभक्तिमय, लेकर श्री जिन चरण चढ़ाय।
अविनाशी अनर्घ्य पद पाऊँ, पूजूँ गुण गाऊँ हरषाय॥धन्य...॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(उपेन्द्रवज्रा, तर्ज: मैं हूँ पूर्ण ज्ञायक..)

कार्तिक सुदी षष्ठमि गर्भ माँहीं, आए प्रभो सर्व जन सुखपाँहीं।
वर्षे रतनराशि महिमा अपारी, करें देवियाँ मातु सेवा सुखारी॥

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लषष्ठम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्रावण सुदी षष्ठमि सुखकारी, जन्में जिनेश्वर जग दु:खहारी।
इन्द्रादि ने जन्म अभिषेक कीना, करें भावना जन्म हो ना नवीना॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठम्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तजो ब्याह को स्वाँग दीक्षा सु धारी, अभयरूप निर्ग्रन्थ वृत्ति सम्भारी।
छटे श्रावणी सित जजों नाथ चरणं, दिखे विश्व में धर्म ही सत्य शरणं॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

धरो ध्यान जिनवर अचल अविकारी, नशे घातिया कर्म सब दु:खकारी।
आश्विन सुदी प्रतिपदा सुखरूपं, जजूँ नेमि पायो सु अर्हत् स्वरूपं॥

ॐ ह्रीं अषाढ़शुक्लप्रतिपदायां ज्ञानमंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सित षाढ़ अष्टमि सु निर्वाण पायो, गिरनार पर्वत सु तीरथ कहायो।
अहो हम स्वयंसिद्ध निजपद निहारें, करें अर्चना भाव अपना सुधारें॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लअष्टम्यां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

शंख चिन्ह चरणों लसे, शोभे श्याम शरीर।
निरावरण विज्ञानमय, निश्चय से अशरीर॥

(तर्ज: अहो जगत गुरुदेव...)

नेमिनाथ जिनराज तिहुँ जग मंगलकारी।
अनन्त चतुष्टयरूप, देव परम अविकारी॥टेक॥
प्रभु पंचमभव पूर्व शुद्धातम पहिचाना,
धरि जिनदीक्षा आप पायो स्वर्ग विमाना।
फिर तीजे भव माँहिं सोलहकारण भाई,
धर्मतीर्थ कर्तार प्रकृति पुण्य बंधाई॥
फेर हुए अहमिन्द्र तहँ तैं आप पधारे,
समुद्रविजय के लाल तुम ही शरण हमारे।
दीन पशु लख आप ब्याह तजो दुखकारी,
हो विरक्त शिवहेतु निर्ग्रन्थ दीक्षा धारी॥
कियो काम चकचूर निज बल से ही स्वामी,
तिहुँ जग पूज्य ललाम हुए जितेन्द्रिय नामी।
क्षपक श्रेणि चढ़ देव परमातम पद पायो,
धनपति ने तब आप समवशरण सु रचायो॥
झलकें लोकालोक युगपद् परिणति माँहीं,
तदपि विकल्प न लेश रमे सहज निज माँहीं।
नशे अठारह दोष आत्मीक गुण सोहे,
आयुध अम्बर नाहिं सौम्य दशा मन मोहे॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

खिरी दिव्यध्वनि देव दिव्यतत्त्व दर्शायो,
समयसार अविकार सारभूत प्रगटायो।
परलक्षी सब भाव दुखकारण बतलाये,
रत्नत्रय सुखरूप सुखकारण दर्शाये॥
जगत विभव निस्सार हमको भी प्रभु लागे,
मिटा मोह दुखकार तुम चरणों के आगे।
त्यागूँ जगत प्रपंच पुण्य-पाप दुखकारी,
भाव यही जिनराज पाऊँ पद अविकारी॥

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(घत्ता)

जय नेमि जिनेश्वर, साँचे ईश्वर, शील शिरोमणि जितमारं।
भव भय हर्तारं, धर्माधारं, जयवन्तो शिवदातारं॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

श्री पार्श्वनाथ जिनपूजन

(छन्द-ताटंक)

हे पार्श्वनाथ ! हे पार्श्वनाथ, तुमने हमको यह बतलाया।
निज पार्श्वनाथ में थिरता से, निश्चय सुख होता सिखलाया॥
तुमको पाकर मैं तृप्त हुआ, ठुकराऊँ जग की निधि नामी।
हे रविसम स्व-पर प्रकाशक प्रभु, मम हृदय विराजो हे स्वामी॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(वीरछन्द)

जड़ जल से प्यास न शान्त हुई, अतएव इसे मैं यहीं तजूँ।
निर्मल जल-सा प्रभु निजस्वभाव, पहिचान उसी में लीन रहूँ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वाँछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन से शान्ति नहीं होगी, यह अन्तर्दहन जलाता है।
निज अमल भावरूपी चन्दन ही, रागाताप मिटाता है॥ तन.॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवातापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

प्रभु उज्ज्वल अनुपम निजस्वभाव ही, एकमात्र जग में अक्षत।
जितने संयोग वियोग तथा, संयोगी भाव सभी विक्षत॥ तन.॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

ये पुष्प काम-उत्तेजक हैं, इनसे तो शान्ति नहीं होती।
निज समयसार की सुमन माल ही कामव्यथा सारी खोती॥ तन.॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

जड़ व्यञ्जन क्षुधा न नाश करें, खाने से बंध अशुभ होता।
अरु उदय में होवे भूख अतः, निजज्ञान अशन अब मैं करता॥ तन.॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

जड़ दीपक से तो दूर रहो, रवि से नहिं आत्म दिखाई दे।
निज सम्यक्ज्ञानमयी दीपक ही, मोहतिमिर को दूर करे॥ तन.॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

जब ध्यान-अग्नि प्रज्ज्वलित होय, कर्मों का ईंधन जले सभी।
दशधर्ममयी अतिशय सुगंध, त्रिभुवन में फैलेगी तब ही॥ तन.॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

जो जैसी करनी करता है, वह फल भी वैसा पाता है।
जो हो कर्तृत्व-प्रमाद रहित, वह महा मोक्षफल पाता है॥ तन.॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

निज आत्मस्वभाव अनुपम है, स्वाभाविक सुख भी अनुपम है।
अनुपम सुखमय शिवपद पाऊँ, अतएव यह अर्घ्य समर्पित है॥तन.॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पंचकल्याणक अर्घ्य

(दोहा)

दूज कृष्ण वैशाख को, प्राणत स्वर्ग विहाय।
वामा माता उर वसे, पूजूँ शिव सुखदाय॥

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भमंगलमण्डिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

पौष कृष्ण एकादशी, सुतिथि महा सुखकार।
अन्तिम जन्म लियो प्रभु, इन्द्र कियो जयकार॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णएकादश्यां जन्ममंगलप्राप्ताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.

पौष कृष्ण एकादशी, बारह भावन भाय।
केशलोंच करके प्रभु, धरो योग शिवदाय॥

ॐ ह्रीं पौषकृष्णएकादश्यां तपोमंगलमंडिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

शुक्लध्यान में होय थिर, जीत उपसर्ग महान।
चैत्र कृष्ण शुभ चौथ को, पायो केवलज्ञान॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचर्तुथ्यां केवलज्ञानप्राप्ताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.

श्रावण शुक्ल सु सप्तमी, पायो पद निर्वाण।
सम्मेदाचल विदित है, तव निर्वाण सुथान॥

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्याम् मोक्षमंगलमंडिताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं

जयमाला

(तर्ज–प्रभु पतित पावन में...)

हे पार्श्व प्रभु मैं शरण आयो दर्शकर अति सुख लियो।
चिन्ता सभी मिट गयी मेरी कार्य सब पूरण भयो॥

चिन्तामणी चिन्तत मिले तरु कल्प माँगे देत हैं।
तुम पूजते सब पाप भागैं सहज सब सुख हेत हैं॥

हे वीतरागी नाथ ! तुमको भी सरागी मानकर।
माँगें अज्ञानी भोग वैभव जगत में सुख जानकर॥

तव भक्त वाँछा और शंका आदि दोषों रहित हैं।
वे पुण्य को भी होम करते भोग फिर क्यों चहत हैं॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब नाग और नागिन तुम्हारे वचन उर धर सुर भये।
जो आपकी भक्ति करें वे दास उनके भी भये॥
वे पुण्यशाली भक्त जन की सहज बाधा को हरें।
आनन्द से पूजा करें वाँछा न पूजा की करें॥
हे प्रभो तव नासाग्रदृष्टि यह बताती है हमें।
सुख आत्मा में प्राप्त कर लें व्यर्थ बाहर में भ्रमें॥
मैं आप सम निज आत्म लखकर आत्म में थिरता धरूँ।
अरु आशा-तृष्णा से रहित अनुपम अतीन्द्रिय सुख भरूँ॥
जब तक नहीं यह दशा होती आपकी मुद्रा लखूँ।
जिनवचन का चिन्तन करूँ व्रत शील संयम रस चखूँ॥
सम्यक्त्व को नित दृढ़ करूँ पापादि को नित परिहरूँ।
शुभराग को भी हेय जानूँ लक्ष्य उसका नहिं करूँ॥
स्मरण ज्ञायक का सदा विस्मरण पुद्गल का करूँ।
मैं निराकुल निजपद लहूँ प्रभु ! अन्य कुछ भी नहिं चहूँ॥

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पूज्य ज्ञान वैराग्य है, पूजक श्रद्धावान।
पूजा गुण अनुराग अरु, फल है सुख अम्लान॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

एक भव के थोड़े से सुख के लिये अनंत भवों के अनंत दुःखों को नहीं बढ़ाने का प्रयत्न सत्पुरुष करते हैं।

हजारों उपदेश वचन और कथन सुनने की अपेक्षा उनमें से थोड़े भी वचनों का विचार करना विशेष कल्याणकारी है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री महावीर जिनपूजन

(दोहा)

अद्भुत प्रभुता शोभती, झलके शान्ति अपार।
महावीर भगवान के, गुण गाऊँ अविकार॥
निजबल से जीत्यो प्रभो, महाक्लेशमय काम।
पूजन करते भावना, वर्तूं नित निष्काम॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(त्रिभंगी)

भव-भव भटकायो, अति-दुख पायो, तृष्णाकुल तुम ढिंग आयो।
उत्तम समता जल, शुचि अति शीतल, पायो उर आनन्द छायो॥
इन्द्रादि नमन्ता, ध्यावत संता, सुगुण अनन्ता, अविकारी।
श्री वीर जिनन्दा, पाप निकन्दा, पूजों नित मंगलकारी॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भवताप निकन्दन, चन्दनसम गुण, हरष-हरष गाऊँ ध्याऊँ।
नाशूँ दुर्मोहं, दुखमय क्षोभं, सहज शान्ति प्रभु सम पाऊँ॥ इन्द्रादि.॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय गुणमण्डित, अमल अखंडित, चिदानन्द पद प्रीति धरूँ।
क्षत् विभव न चाहूँ, तोष बढ़ाऊँ, अक्षय प्रभुता प्राप्त करूँ॥ इन्द्रादि...॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभुसम-आनन्दमय, नित्यानन्दमय, परमब्रह्मचर्य चाहत हों।
नव बाढ़ लगाऊँ, काम नशाऊँ, सहज ब्रह्मपद ध्यावत हों॥ इन्द्रादि...॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

दुख क्षुधा नशावन, पायो पावन, निज अनुभव रस नैवेद्यं।
नित तृप्त रहाऊँ, तुष्ट रहाऊँ, निज में ही हूँ निर्भेदं॥ इन्द्रादि...॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उद्योतस्वरूपं, शुद्धचिद्रूपं, प्रभु प्रसाद प्रत्यक्ष भयो।
अज्ञान नशायो, समसुख पायो, जाननहार जनाय रह्यो॥ इन्द्रादि...॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

विच कर्ममहावन, भटक्यो भगवन्, शिवमारग तुमढिंग पायो।
तप अग्नि जलाऊँ, कर्म नशाऊँ, स्वर्णिम अवसर अब आयो॥ इन्द्रादि...॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

रागादि विकारं, दुखदातारं, त्याग सहज निजपद ध्याऊँ।
साधूँ हो निर्भय, शुद्धरत्नत्रय, अविनाशी शिवफल पाऊँ॥ इन्द्रादि...॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

करि अर्घ अनूपं, हे शिवभूपं, द्रव्य-भावमय भक्ति करूँ।
तज सर्व-उपाधि, बोधि-समाधि पाऊँ निज में केलि करूँ॥ इन्द्रादि...॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(सरसी)

नगरी सजी रत्न वर्षाये, सोलह स्वप्ने देखे मात।
षष्ठमि सुदी आषाढ़ प्रभू का, गर्भ कल्याणक हुआ विख्यात॥
भावसहित प्रभु करूँ अर्चना, शुद्धातम कल्याणस्वरूप।
आनन्द सहित आपसम ध्यावें, पावें अविचल बोध अनूप॥

ॐ ह्रीं आषाढ़शुक्लषष्ठम्यां गर्भमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

नरकों में भी कुछ क्षण को तो, साता का संचार हुआ।
चैत सुदी तेरस को प्रभुवर, जन्म जगत सुखकार हुआ॥भाव...॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां जन्ममंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जीरण तृण-सम विषयभोग तज, बाल ब्रह्मचारी हो नाथ।
दशमी मगसिर कृष्णा के दिन जिनदीक्षा धारी जिननाथ॥भाव...॥

ॐ ह्रीं मगसिरकृष्णदशम्यां तपोमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

दशमी सुदि बैशाख तिथी को, आत्मलीन हो घाति विनाश।
धन्य-धन्य महावीर प्रभु को, हुआ सु केवलज्ञान प्रकाश॥भाव...॥

ॐ ह्रीं बैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानमंगलमंडिताय श्रीमहावीर-जिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अन्तिम शुक्लध्यान प्रगटाया, शेष अघाति विमुक्त हुए।
कार्तिक कृष्ण अमावस के दिन, वीर जिनेश्वर सिद्ध हुए॥
भावसहित प्रभु करूँ अर्चना, शुद्धातम कल्याणस्वरूप।
आनन्द सहित आपसम ध्यावें, पावें अविचल बोध अनूप॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णमावस्यायां मोक्षमंगलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.।

जयमाला

(सोरठा)

वर्द्धमान श्रीवीर, सन्मति अरु महावीर जी।
जयवन्तो अतिवीर, पंचनाम जग में प्रसिद्ध॥

(जोगीरासा)

चित्स्वरूप प्रगटाया प्रभुवर, चित्स्वरूप प्रगटाया।
स्वयं स्वयंभू होय जिनेश्वर, चित्स्वरूप प्रगटाया॥टेक॥

हो सबसे निरपेक्ष सिंह के, भव में सम्यक् पाया।
स्वाश्रित आत्माराधन का ही, सत्य मार्ग अपनाया॥१॥

बढ़ती गई सु भाव-विशुद्धि, दशवें भव में स्वामी।
आप हुए अन्तिम तीर्थंकर, भरतक्षेत्र में नामी॥२॥

इन्द्रादिक से पूजित जिनवर, सम्यक्ज्ञानि विरागी।
इन्द्रिय भोगों की सामग्री, दुख निमित्त लख त्यागी॥३॥

जब विवाह प्रस्ताव आपके, सन्मुख जिनवर आया।
आत्मवंचना लगी हृदय में, दृढ़ वैराग्य समाया॥४॥

अज्ञानी सम भव में फँसना, 'क्या इसमें चतुराई?'।
भव-भव में भोगों में फँसकर, भारी विपदा पाई॥५॥

उपादेय निज शुद्धातम ही, अब तो भाऊँ ध्याऊँ।
धरूँ सहज मुनिधर्म परम साधक हो शिवपद पाऊँ॥६॥

इस विचार का अनुमोदन कर, लौकान्तिक हर्षाये।
आप हुए निर्ग्रन्थ ध्यान से, घाति कर्म भगाये॥७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हुए सु गौतम गणधर पहले, दिव्यध्वनि सुखकारी।
खिरी श्रावणी वदि एकम को, त्रिभुवन मंगलकारी ॥८॥

धर्मतीर्थ का हुआ प्रवर्तन, आत्मबोध जग पाया।
प्रभो! आपका शासन पाकर, रोम-रोम हुलसाया ॥९॥

वर्ष बहत्तर आयु पूर्ण कर, सिद्धालय तिष्ठाये।
तुम गुण चिन्तन मोह नशावे, भेदज्ञान प्रगटावे ॥१०॥

सहज नमनकर पूजन का फल और न कुछ भी चाहूँ।
सहज प्रवर्ते तत्त्व भावना आवागमन मिटाऊँ ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(बसन्ततिलका)

सत्तीर्थ वीर प्रभु का जग में प्रवर्ते,
निज तत्त्वबोध पाकर सब लोक हर्षे।
दुर्भावना न आवे मन में कदापि,
निर्विघ्न निर्विकारी आराधना प्रवर्ते।

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

समुच्चय जयमाला

(दोहा)

मोहादिक रिपु जीतकर, जय पाई अविकार।
जयमाला गाऊँ सुखद, गुण चिन्तन के द्वार॥

(त्रोटक)

जय मंगलमय जय लोकोत्तम, जय अनन्य शरण जय पुरुषोत्तम।
जय महावीर जय महाधीर, अवबोध-सिन्धु अति ही गम्भीर॥

जय तेजपुंज जय दिव्य-रूप, हे प्रशममूर्ति अति शान्त-रूप।
जय वचन अगोचर हे महेश, जय स्वानुभूति गोचर जिनेश॥

जय ज्ञानमात्र परभाव शून्य, जय गुण अनंत से सदा पूर्ण।
जय वीतमोह जय वीतक्रोध, जय वीतमान जय वीतलोभ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जय वीत-क्षोभ जय वीत-काम, निर्दोष परम प्रभुता ललाम।
दृग ज्ञान सुक्ख वीरज अनंत, जय गुण अनंत महिमा अनंत॥

ध्रुव धर्म तीर्थ पाकर जिनेश, आनंद हुआ उर में विशेष।
प्रभु दूर हुए सब पाप ताप, संतुष्ट आप में हुआ आप॥

देखत प्रभु को निज रूप दिखे, दुर्मोह मिटे दुष्कर्म नशे।
विभु धन्य अलौकिक गुणनिधान, करते भक्तों को निज समान॥

जिन आराधन की लगी लगन, मैं द्रव्य-भाव से बनूँ नगन।
भाऊँ ध्याऊँ ज्ञायक स्वरूप, देहादि दिखें अति भिन्न रूप॥

उपसर्ग परीषह सहज जीत, अपनाऊँ मैं परमार्थ नीति।
ऐसा पुरुषार्थ जगे स्वयमेव, साम्राज्य मुक्ति का लहूँ देव॥

भव-भव का दुखमय भ्रमण नाश, तिष्ठूँ सिद्धालय आप पास।
सब जीव लहें निज तत्त्वज्ञान, पावें सम्यग्दर्शन महान॥

मैत्री प्रमोद कारुण्य भाव, माध्यस्थ धार साधें स्वभाव।
विपरीत विकल्पों को सु त्याग, सब लगें लगावें मुक्तिमार्ग॥

दिन दूना धर्म प्रभाव बढ़े, दुर्व्यसन उपद्रव दूर रहें।
चित शान्त रहे सन्तुष्ट रहे, नित आनन्द मंगल सहज बढ़े॥

भक्ति वश निज हित के निमित्त, पूजन विधान कीना पवित्र।
प्रभु भूल चूक सब क्षमा होय, मम परिणति पूर्ण पवित्र होय॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिमहावीरान्त चतुर्विंशतिजिनेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

जिस विधि से जिनवर लहा, परमानन्द अम्लान।
उस विधि से ही हे विभो ! होऊँ आप समान॥

॥ पुष्पांजलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री आध्यात्मिक पाठ संग्रह (खण्ड-४)

सामायिक पाठ

(दोहा)

पंच परम गुरु को प्रणमि, सरस्वती उर धार।
करूँ कर्म छेदंकरी सामायिक सुखकार॥१॥

(चाल-छन्द)

आत्मा ही समय कहावे, स्वाश्रय से समता आवे।
वह ही सच्ची सामायिक, पाई नहीं मुक्ति विधायक॥२॥

उसके कारण मैं विचारूँ, उन सबको अब परिहारूँ।
तन में 'मैं हूँ' मैं विचारी, एकत्वबुद्धि यों धारी॥३॥

दुखदाई कर्म जु माने, रागादि रूप निज जाने।
आस्रव अरु बन्ध ही कीनो, नित पुण्य-पाप में भीनो॥४॥

पापों में सुख निहारा, पुण्य करते मोक्ष विचारा।
इन सबसे भिन्न स्वभावा, दृष्टि में कबहुँ न आवा॥५॥

मद मस्त भयो पर ही में, नित भ्रमण कियो भव-भव में।
मन वचन योग अरु तन से, कृत कारित अनुमोदन से॥६॥

विषयों में ही लिपटाया, निज सच्चा सुख नहीं पाया।
निशाचर हो अभक्ष्य भी खाया, अन्याय किया मन भाया॥७॥

लोभी लक्ष्मी का होकर, हित-अहित विवेक मैं खोकर।
निज-पर विराधना कीनी, किञ्चित् करुणा नहिं लीनी॥८॥

षट्काय जीव संहारे, उर में आनन्द विचारे।
जो अर्थ वाक्य पद बोले, थे त्रुटि प्रमाद विष घोले॥९॥

किञ्चित् व्रत संयम धारा, अतिक्रम व्यतिक्रम अतिचारा।
उनमें अनाचार भी कीने, बहु बाँधे कर्म नवीने॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिकूल मार्ग यों लीना, निज-पर का अहित ही कीना।
प्रभु शुभ अवसर अब आयो, पावन जिनशासन पायो॥११॥

लब्धि त्रय मैंने पायी, अनुभव की लगन लगायी।
अतएव प्रभो मैं चाहूँ, सबके प्रति समता लाऊँ॥१२॥

नहिं इष्टानिष्ट विचारूँ, निज सुक्ख स्वरूप संभारूँ।
दुःखमय हैं सभी कषायें, इनमें नहिं परिणति जाये॥१३॥

वेश्या सम लक्ष्मी चंचल, नहिं पकडूँ इसका अंचल।
निर्ग्रन्थ मार्ग सुखकारी, भाऊँ नित ही अविकारी॥१४॥

निज रूप दिखावन हारी, तव परिणति जो सुखकारी।
उसको ही नित्य निहारूँ, यावत् न विकल्प निवारूँ॥१५॥

तुम त्याग अठारह दोषा, निजरूप धरो निर्दोषा।
वीतराग भाव तुम भीने, निज अनन्त चतुष्टय लीने॥१६॥

तुम शुद्ध बुद्ध अनपाया, तुम मुक्तिमार्ग बतलाया।
अतएव मैं दास तुम्हारा, तिष्ठो मम हृदय मंझारा॥१७॥

तव अवलम्बन से स्वामी, शिवपथ पाऊँ जगनामी।
निर्द्वन्द निशल्य रहाऊँ, श्रेणि चढ़ कर्म नशाऊँ॥१८॥

जिनने मम रूप न जाना, वे शत्रु न मित्र समाना।
जो जाने मुझ आतम रे, वे ज्ञानी पूज्य हैं मेरे॥१९॥

जो सिद्धात्मा सो मैं हूँ, नहिं बाल युवा नर मैं हूँ।
सब तैं न्यारा मम रूप, निर्मल सुख ज्ञान स्वरूप॥२०॥

जो वियोग संयोग दिखाता, वह कर्म जनित है भ्राता।
नहिं मुझको सुख दुःखदाता, निज का मैं स्वयं विधाता॥२१॥

आसन संघ संगति शाला, पूजन भक्ति गुणमाला।
इनतैं समाधि नहिं होवे, निज में थिरता दुःख खोवे॥२२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

घिन गेह देह जड़ रूपा, पोषत नहिं सुक्ख स्वरूपा।
जब इससे मोह हटावे, तब ही निज रूप दिखावे॥२३॥

वनिता बेड़ी गृह कारा, शोषक परिवार है सारा।
शुभ जनित भोग जो पाई, वे भी आकुलता दायी॥२४॥

सबविधि संसार असारा बस निज स्वभाव ही सारा।
निज में ही तृप्त रहूँ मैं, निज में संतुष्ट रहूँ मैं॥२५॥

निज स्वभाव का लक्ष्य ले, मैंटूँ सकल विकल्प।
सुख अतीन्द्रिय अनुभवूँ, यही भावना अल्प॥२६॥

परमार्थ विंशतिका

राग-द्वेष की परिणति के वश, होते नाना भाँति विकार।
जीव मात्र ने उन भावों को, देखा सुना अनेकों बार॥
किन्तु न जाना आत्मतत्त्व को, है अलभ्य सा उसका ज्ञान।
भव्यों से अभिवन्दित है नित, निर्मल यह चेतन भगवान॥१॥

अर्न्तबाह्य विकल्प जाल से, रहित शुद्ध चैतन्य स्वरूप।
शान्त और कृत-कृत्य सर्वथा, दिव्य अनन्त चतुष्टय रूप॥
छूती उसे न भय की ज्वाला, जो है समता रस में लीन।
वन्दनीय वह आत्म-स्वस्थता, हो जिससे आत्मिक सुखपीन॥२॥

एक स्वच्छ एकत्व ओर भी, जाता है जब मेरा ध्यान।
वही ध्यान परमात्म तत्त्व का, करता कुछ आनन्द प्रदान॥
शील और गुण युक्त बुद्धि जो, रहे एकता में कुछ काल।
हो प्रगटित आनन्द कला वह, जिसमें दर्शन ज्ञान विशाल॥३॥

नहीं कार्य आश्रित मित्रों से, नहीं और इस जग से काम।
नहीं देह से नेह लेश अब, मुझे एकता में आराम॥
विश्वचक्र में संयोगों वश, पाये मैंने अतिशय कष्ट।
हुआ आज सबसे उदास मैं, मुझे एकता ही है इष्ट॥४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाने और देखता सबको, रहे तथा चैतन्य स्वरूप।
श्रेष्ठ तत्त्व है वही विश्व में, उसी रूप मैं नहिं पररूप॥
राग द्वेष तन मन क्रोधादिक, सदा सर्वथा कर्मोत्पन्न।
शत-शत शास्त्रश्रवण कर मैंने, किया यही दृढ़ यह सब भिन्न॥५॥

दुषमकाल अब शक्ति हीन तन, सहे नहीं परीषह का भार।
दिन-दिन बढ़ती है निर्बलता, नहीं तीव्र तप पर अधिकार॥
नहीं कोई दिखता है अतिशय, दुष्कर्मों से पाऊँ त्रास।
इन सबसे क्या मुझे प्रयोजन, आत्मतत्त्व का है विश्वास॥६॥

दर्शन ज्ञान परम सुखमय मैं, निज स्वरूप से हूँ द्युतिमान।
विद्यमान कर्मों से भी है, भिन्न शुद्ध चेतन भगवान॥
कृष्ण वस्तु की परम निकटता, बतलाती मणि को सविकार।
शुद्ध दृष्टि से जब विलोकते, मणि स्वरूप तब तो अविकार॥७॥

राग-द्वेष वर्णादि भाव सब, सदा अचेतन के हैं भाव।
हो सकते वे नहीं कभी भी, शुद्ध पुरुष के आत्मस्वभाव॥
तत्त्व-दृष्टि हो अन्तरंग में, जो विलोकता स्वच्छ स्वरूप।
दिखता उसको परभावों से, रहित एक निज शुद्ध स्वरूप॥८॥

पर पदार्थ के इष्टयोग को, साधु समझते हैं आपत्ति।
धनिकों के संगम को समझें, मन में भारी दुःखद विपत्ति॥
धन मदिरा के तीव्रपान से, जो भूपति उन्मत्त महान।
उनका तनिक समागम भी तो, लगता मुनि को मरण समान॥९॥

सुखदायक गुरुदेव वचन जो, मेरे मन में करें प्रकाश।
फिर मुझको यह विश्व शत्रु बन, भले सतत दे नाना त्रास॥
दे न जगत भोजन तक मुझको, हो न पास में मेरे वित्त।
देख नग्न उपहास करें जन, तो भी दुःखित नहीं हो चित्त॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दुःख व्याल से पूरित भव वन, हिंसा अघद्रुम जहाँ अपार।
ठौर-ठौर दुर्गति-पल्लीपति, वहाँ भ्रमे यह प्राणि अपार॥
सुगुरु प्रकाशित दिव्य पंथ में, गमन करे जो आप मनुष्य।
अनुपम-निश्चल मोक्षसौख्य को, पा लेता वह त्वरित अवश्य॥११॥

साता और असाता दोनों कर्म और उसके हैं काज।
इसीलिए शुद्धात्म तत्त्व से, भिन्न उन्हें माने मुनिराज॥
भेद भावना में ही जिनका, रात-दिवस रहता है वास।
सुख-दुःखजन्य विकल्प कहाँ से, रहते ऐसे भवि के पास॥१२॥

देव और प्रतिमा पूजन का, भक्ति भाव सह रहता ध्यान।
सुनें शास्त्र गुरुजन को पूजें, जब तक है व्यवहार प्रधान॥
निश्चय से समता से निज में, हुई लीन जो बुद्धि विशिष्ट।
वही हमारा तेज पुंजमय, आत्मतत्त्व सबसे उत्कृष्ट॥१३॥

वर्षा हरे हर्ष को मेरे, दे तुषार तन को भी त्रास।
तपे सूर्य मेरे मस्तक पर, काटें मुझको मच्छर डांस॥
आकर के उपसर्ग भले ही, कर दें इस काया का पात।
नहीं किसी से भय है मुझको, जब मन में है तेरी बात॥१४॥

मुख्य आँख इन्द्रिय कर्षकमय, ग्राम सर्वथा मृतक समान।
रागादिक कृषि से चेतन को, भिन्न जानना सम्यक्ज्ञान॥
जो कुछ होना हो सो होगा, करूँ व्यर्थ ही क्यों मैं कष्ट ?
विषयों की आशा तज करके, आराधूँ मैं अपना इष्ट॥१५॥

कर्मों के क्षय से उपशम से, अथवा गुरु का पा उपदेश।
बनकर आत्मतत्त्व का ज्ञाता, छोड़े जो ममता निःशेष॥
करें निरन्तर आत्म-भावना, हों न दुःखों से जो संतप्त।
ऐसा साधु पाप से जग में, कमलपत्र सम हो नहिं लिप्त॥१६॥

गुरु करुणा से मुक्ति प्राप्ति के, लिए बना हूँ मैं निर्ग्रन्थ।
उसके सुख से इन्द्रिय सुख को, माने चित्त दुःख का पंथ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अपनी भूल विवश नर तब तक, लेता रहा खली का स्वाद।
जबतक उसे स्वच्छ मधु रसमय, नहीं शर्करा का हो स्वाद॥१७॥

ध्यानाश्रित निर्ग्रन्थ भाव से, मुझे हुआ है जो आनन्द।
दुर्ध्यानाक्ष सुखों का तो फिर, कैसे करे स्मरण मतिमन्द ?
ऐसा कौन मनुज है जग में, तज करके जो जलता गेह।
छोड़ वापिका का शीतल जल, पड़े अग्नि में आप सनेह॥१८॥

मोह जन्य मोक्षाभिलाषि भी, करे मोक्ष का स्वयं विरोध।
अन्य द्रव्य की करें न इच्छा, जिन्हें तत्त्व का है शुभ बोध॥
आलोचन में दत्तचित्त नित, शुद्ध आत्म का जिन्हें विचार।
तत्त्व ज्ञान में तत्पर मुनिजन ग्रहें नहीं ममता का भार॥१९॥

इस निर्मल चेतन के सुख का, जिस क्षण आता है आस्वाद।
विषय नष्ट होते सारे तब, रस समस्त लगते निस्वाद॥
होती दूर देह की ममता, मन वाणी हो जाते मौन।
गोष्ठी कथा, कुतूहल छूटें, उस सुख को नर जाने कौन॥२०॥

वचनातीत, पक्ष च्युत सुन्दर निश्चय नय से है यह तत्व।
व्यवहृति पथ में प्राप्त शिष्य, वचनों द्वारा समझें आत्मत्व॥
करूँ तत्त्व का दिव्य कथन मैं, नहीं यहाँ वह शक्ति समृद्धि।
जान अशक्त आपको इसमें, मौन रहे मुझसा जड़बुद्धि॥२१॥

ऐसा योग्य मनुष्य भव एवं सत्संग के साधन मिले हैं
और जीव विचार न करे।
तब यह क्या पशु की देह में विचार करेगा ? कहाँ करेगा ?

धर्म यह वस्तु बहुत गुप्त रही है। वह बाह्य संशाधनों से मिलने वाली नहीं है। अपूर्व अंतःसंशोधन से ही प्राप्त होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिनमार्ग

कितना सुन्दर, कितना सुखमय, अहो सहज जिनपंथ है।
धन्य धन्य स्वाधीन निराकुल, मार्ग परम निर्ग्रन्थ है॥टेक॥

श्री सर्वज्ञ प्रणेता जिसके, धर्म पिता अति उपकारी।
तत्त्वों का शुभ मर्म बताती, माँ जिनवाणी हितकारी।
अंगुली पकड़ सिखाते चलना, ज्ञानी गुरु निर्ग्रन्थ हैं॥धन्य.॥१॥

देव-शास्त्र-गुरु की श्रद्धा ही, समकित का सोपान है।
महाभाग्य से अवसर आया, करो सही पहिचान है॥
पर की प्रीति महा दुखःदायी, कहा श्री भगवंत है॥धन्य.॥२॥

निर्णय में उपयोग लगाना ही, पहला पुरुषार्थ है।
तत्त्व विचार सहित प्राणी ही, समझ सके परमार्थ है॥
भेद ज्ञान कर करो स्वानुभव, विलसे सौख्य बसंत है॥धन्य.॥३॥

ज्ञानाभ्यास करो मनमाहीं, विषय-कषायों को त्यागो।
कोटि उपाय बनाय भव्य, संयम में ही नित चित पागो॥
ऐसे ही परमानन्द वेदें, देखो ज्ञानी संत हैं॥धन्य.॥४॥

रत्नत्रयमय अक्षय सम्पत्ति, जिनके प्रगटी सुखकारी।
अहो शुभाशुभ कर्मोदय में, परिणति रहती अविकारी॥
उनकी चरण शरण से ही हो, दुखमय भव का अंत है॥धन्य.॥५॥

क्षमाभाव हो दोषों के प्रति, क्षोभ नहीं किंचित् आवे।
समता भाव आराधन से निज, चित्त नहीं डिगने पावे॥
उर में सदा विराजें अब तो, मंगलमय भगवंत हैं॥धन्य.॥६॥

हो निशंक, निरपेक्ष परिणति, आराधन में लगी रहे।
क्लेशित हो नहीं पापोदय में, जिनभक्ति में पगी रहे॥
पुण्योदय में अटक न जावे, दीखे साध्य महंत है॥धन्य.॥७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

परलक्षी वृत्ति ही आकर, शिवसाधन में विघ्न करे।
हो पुरुषार्थ अलौकिक ऐसा, सावधान हर समय रहे॥
नहीं दीनता, नहीं निराशा, आतम शक्ति अनंत है॥धन्य.॥८॥

चाहे जैसा जगत परिणमे, इष्टानिष्ट विकल्प न हो।
ऐसा सुन्दर मिला समागम, अब मिथ्या संकल्प न हो॥
शान्तभाव हो प्रत्यक्ष भासे, मिटे कषाय दुरन्त है॥धन्य.॥९॥

यही भावना प्रभो स्वप्न में भी, विराधना रंच न हो।
सत्य, सरल परिणाम रहें नित, मन में कोई प्रपंच न हो॥
विषय कषायारम्भ रहित, आनन्दमय पद निर्ग्रन्थ है॥ धन्य...॥१०॥

धन्य घड़ी हो जब प्रगटावे, मंगलकारी जिनदीक्षा।
प्रचुर स्वसंवेदनमय जीवन, होय सफल तब ही शिक्षा॥
अविरल निर्मल आत्मध्यान हो, होय भ्रमण का अंत है॥ धन्य.॥११॥

अहो जितेन्द्रिय जितमोही ही, सहज परम पद पाता है।
समता से सम्पन्न साधु ही, सिद्ध दशा प्रगटाता है॥
बुद्धि व्यवस्थित हुई सहज ही, यही सहज शिवपंथ है॥ धन्य.॥१२॥

आराधन में क्षण-क्षण बीते, हो प्रभावना सुखकारी।
इसी मार्ग में सब लग जावें, भाव यही मंगलकारी॥
सद्दृष्टि-सद्ज्ञान-चरणमय, लोकोत्तम यह पंथ है॥धन्य.॥१३॥

तीनलोक अरु तीनकाल में, शरण यही है भविजन को।
द्रव्य दृष्टि से निज में पाओ, व्यर्थ न भटकाओ मन को॥
इसी मार्ग में लगें-लगावें, वे ही सच्चे संत हैं॥धन्य.॥१४॥

है शाश्वत अकृत्रिम वस्तु, ज्ञानस्वभावी आत्मा।
जो आतम आराधन करते, बनें सहज परमात्मा॥
परभावों से भिन्न निहारो, आप स्वयं भगवंत है॥धन्य.॥१५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मेरा सहज जीवन

अहो चैतन्य आनन्दमय, सहज जीवन हमारा है।
अनादि अनंत पर निरपेक्ष, ध्रुव जीवन हमारा है॥टेक॥

हमारे में न कुछ पर का, हमारा भी नहीं पर में।
द्रव्य-दृष्टि हुई सच्ची, आज प्रत्यक्ष निहारा है॥१॥

अनंतों शक्तियाँ उछलें, सहज सुख ज्ञानमय विलसें।
अहो प्रभुता परम पावन, वीर्य का भी न पारा है॥२॥

नहीं जन्मूँ नहीं मरता, नहीं घटता नहीं बढ़ता।
अगुरूलघु रूप ध्रुव ज्ञायक, सहज जीवन हमारा है॥३॥

सहज ऐश्वर्य मय मुक्ति, अनंतों गुण मयी ऋद्धि।
विलसती नित्य ही सिद्धि, सहज जीवन हमारा है॥४॥

किसी से कुछ नहीं लेना, किसी को कुछ नहीं देना।
अहो निश्चिंत परमानन्दमय जीवन हमारा है॥५॥

ज्ञानमय लोक है मेरा, ज्ञान ही रूप है मेरा।
परम निर्दोष समता मय, ज्ञान जीवन हमारा है॥६॥

मुक्ति में व्यक्त है जैसा, यहाँ अव्यक्त है वैसा।
अबद्धस्पृष्ट अनन्य, नियत जीवन हमारा है॥७॥

सदा ही है न होता है, न जिसमें कुछ भी होता है।
अहो उत्पाद व्यय निरपेक्ष, ध्रुव जीवन हमारा है॥८॥

विनाशी बाह्य जीवन की, आज ममता तजी झूठी।
रहे चाहे अभी जाये, सहज जीवन हमारा है॥९॥

नहीं परवाह अब जग की, नहीं है चाह शिवपद की।
अहो परिपूर्ण निष्पृह ज्ञानमय जीवन हमारा है॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मंगल शृङ्गार

मस्तक का भूषण गुरु आज्ञा, चूड़ामणि तो रागी माने।
सत्-शास्त्र श्रवण है कर्णों का, कुण्डल तो अज्ञानी जाने॥१॥

हीरों का हार तो व्यर्थ कण्ठ में, सुगुणों की माला भूषण।
कर पात्र-दान से शोभित हो, कंगन हथफूल तो हैं दूषण॥२॥

जो घड़ी हाथ में बंधी हुई, वह घड़ी यहीं रह जायेगी।
जो घड़ी आत्म-हित में लागी, वह कर्म बंध विनशायेगी॥३॥

जो नाक में नथुनी पड़ी हुई, वह अन्तर राग बताती है।
श्वास-श्वास में प्रभु सुमिरन से, नासिका शोभा पाती है॥४॥

होठों की यह कृत्रिम लाली, पापों की लाली लायेगी।
जिसमें बँधकर तेरी आत्मा, भव-भव के दुःख उठायेगी॥५॥

होठों पर हँसी शुभ्र होवे, गुणियों को लखते ही भाई।
ये होठ तभी होते शोभित, तत्त्वों की चर्चा मुख आई॥६॥

क्रीम और पाउडर मुख को, उज्ज्वल नहिं मलिन बनाता है।
हो साम्यभाव जिस चेहरे पर, वह चेहरा शोभा पाता है॥७॥

आँखों में काजल शील का हो, अरु लज्जा पाप कर्म से हो।
स्वामी का रूप बसा होवे, अरु नाता केवल धर्म से हो॥८॥

जो कमर करधनी से सुन्दर, माने उस सम है मूढ़ नहीं।
जो कमर ध्यान में कसी गई, उससे सुन्दर है नहीं कहीं॥९॥

पैरों में पायल ध्वनि करतीं, वे अन्तर द्वन्द बताती हैं।
जो चरण चरण की ओर बढ़े, उनके सन्मुख शरमाती हैं॥१०॥

जड़ वस्त्रों से तो तन सुन्दर, रागी लोगों को दिखता है।
पर सच पूछो उनके अन्दर, आतम का रूप सिसकता है॥११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जब बाह्य मुमुक्षु रूप धार, ज्ञानाम्बर को धारण करता।
अत्यन्त मलिन रागाम्बर तज, सुन्दर शिवरूप प्रकट करता ॥१२॥

एकत्व ज्ञानमय ध्रुव स्वभाव ही, एक मात्र सुन्दर जग में।
जिसकी परिणति उसमें ठहरे, वह स्वयं विचरती शिवमग में ॥१३॥

वह समवसरण में सिंहासन पर, गगन मध्य शोभित होता।
रत्नत्रय के भूषण पहने, अपनी प्रभुता प्रगटाता ॥१४॥

पर नहीं यहाँ भी इतिश्री, योगों को तज स्थिर होता।
अरु एक समय में सिद्ध हुआ, लोकाग्र जाय अविचल होता ॥१५॥

समता षोडसी

समता रस का पान करो, अनुभव रस का पान करो।
शान्त रहो शान्त रहो, सहज सदा ही शान्त रहो ॥टेक॥

नहीं अशान्ति का कुछ कारण, ज्ञान दृष्टि से देख अहो।
क्यों पर लक्ष करे रे मूरख, तेरे से सब भिन्न अहो ॥१॥

देह भिन्न है कर्म भिन्न हैं, उदय आदि भी भिन्न अहो।
नहीं अधीन हैं तेरे कोई, सब स्वाधीन परिणमित हो ॥२॥

पर नहीं तुझसे कहता कुछ भी, सुख दुख का कारण नहीं हो।
करके मूढ़ कल्पना मिथ्या, तू ही व्यर्थ आकुलित हो ॥३॥

इष्ट अनिष्ट न कोई जग में, मात्र ज्ञान के ज्ञेय अहो।
हो निरपेक्ष करो निज अनुभव, बाधक तुमको कोई न हो ॥४॥

तुम स्वभाव से ही आनंद मय, पर से सुख तो लेश न हो।
झूठी आशा तृष्णा छोड़ो, जिन वचनों में चित्त धरो ॥५॥

पर द्रव्यों का दोष न देखो, क्रोध अग्नि में नहीं जलो।
नहीं चाहो अनुरूप प्रवर्तन, भेदज्ञान ध्रुव दृष्टि धरो ॥६॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो होता है वह होने दो, होनी को स्वीकार करो।
कर्त्तापन का भाव न लाओ, निज हित का पुरुषार्थ करो ॥७॥

दया करो पहले अपने पर, आराधन से नहीं चिगो।
कुछ विकल्प यदि आवे तो भी, सम्बोधन समतामय हो ॥८॥

यदि माने तो सहज योग्यता, अहंकार का भाव न हो।
नहीं माने भवितव्य विचारो, जिससे किंचित् खेद न हो ॥९॥

हीनभाव जीवों के लखकर, ग्लानिभाव नहीं मन में हो।
कर्मोदय की अति विचित्रता, समझो स्थितिकरण करो ॥१०॥

अरे कलुषता पाप बंध का, कारण लखकर त्याग करो।
आलस छोड़ो बनो उद्यमी, पर सहाय की चाह न हो ॥११॥
पापोदय में चाह व्यर्थ है, नहीं चाहने पर भी हो।
पुण्योदय में चाह व्यर्थ है, सहजपने मन वांछित हो ॥१२॥

आर्तध्यान कर बीज दुख के, बोना तो अविवेक अहो।
धर्म ध्यान में चित्त लगाओ, होय निर्जरा बंध न हो ॥१३॥

करो नहीं कल्पना असम्भव, अब यथार्थ स्वीकार करो।
उदासीन हो पर भावों से सम्यक् तत्त्व विचार करो ॥१४॥

तजो संग लौकिक जीवों का, भोगों के अधीन न हो।
सुविधाओं की दुविधा त्यागो, एकाकी शिवपंथ चलो ॥१५॥

अति दुर्लभ अवसर पाया है, जग प्रपंच में नहीं पड़ो।
करो साधना जैसे भी हो, यह नर भव अब सफल करो ॥१६॥

ज्ञानाष्टक

निरपेक्ष हूँ कृतकृत्य मैं, बहु शक्तियों से पूर्ण हूँ।
मैं निरालम्बी मात्र ज्ञायक, स्वयं में परिपूर्ण हूँ ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पर से नहीं सम्बन्ध कुछ भी, स्वयं सिद्ध प्रभु सदा।
निर्बाध अरु निःशंक निर्भय, परम आनन्दमय सदा॥१॥

निज लक्ष से होऊँ सुखी, नहिं शेष कुछ अभिलाष है।
निज में ही होवे लीनता, निज का हुआ विश्वास है॥
अमूर्तिक चिन्मूर्ति मैं, मंगलमयी गुणधाम हूँ।
मेरे लिए मुझसा नहीं, सच्चिदानन्द अभिराम हूँ॥२॥

स्वाधीन शाश्वत मुक्त अक्रिय अनन्त वैभववान हूँ।
प्रत्यक्ष अन्तर में दिखे, मैं ही स्वयं भगवान हूँ॥
अव्यक्त वाणी से अहो, चिन्तन न पावे पार है।
स्वानुभव में सहज भासे, भाव अपरम्पार है॥३॥

श्रद्धा स्वयं सम्यक् हुई, श्रद्धान ज्ञायक हूँ हुआ।
ज्ञान में बस ज्ञान भासे, ज्ञान भी सम्यक् हुआ॥
भग रहे दुर्भाव सम्यक्, आचरण सुखकार है।
ज्ञानमय जीवन हुआ, अब खुला मुक्ति द्वार है॥४॥

जो कुछ झलकता ज्ञान में, वह ज्ञेय नहिं बस ज्ञान है।
नहिं ज्ञेयकृत किंचित् अशुद्धि, सहज स्वच्छ सुज्ञान है॥
परभाव शून्य स्वभाव मेरा, ज्ञानमय ही ध्येय है।
ज्ञान में ज्ञायक अहो, मम ज्ञानमय ही ज्ञेय है॥५॥

ज्ञान ही साधन, सहज अरु ज्ञान ही मम साध्य है।
ज्ञानमय आराधना, शुद्ध ज्ञान ही आराध्य है॥
ज्ञानमय ध्रुव रूप मेरा, ज्ञानमय सब परिणमन।
ज्ञानमय ही मुक्ति मम, मैं ज्ञानमय अनादिनिधन॥६॥

ज्ञान ही है सार जग में, शेष सब निस्सार है।
ज्ञान से च्युत परिणमन का नाम ही संसार है॥
ज्ञानमय निजभाव को बस भूलना अपराध है।
ज्ञान का सम्मान ही, संसिद्धि सम्यक् राध है॥७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अज्ञान से ही बंध, सम्यग्ज्ञान से ही मुक्ति है।
ज्ञानमय संसाधना, दुख नाशने की युक्ति है॥
जो विराधक ज्ञान का, सो डूबता मंझधार है।
ज्ञान का आश्रय करे, सो होय भव से पार है॥८॥

यों जान महिमाज्ञान की, निजज्ञान को स्वीकार कर।
ज्ञान के अतिरिक्त सब, परभाव का परिहार कर॥
निजभाव से ही ज्ञानमय हो, परम-आनन्दित रहो।
होय तन्मय ज्ञान में, अब शीघ्र शिव-पदवी धरो॥९॥

कर्त्तव्याष्टक

आतम हित ही करने योग्य, वीतराग प्रभु भजने योग्य।
सिद्ध स्वरूप ही ध्याने योग्य, गुरु निर्ग्रन्थ ही वंदन योग्य॥१॥

साधर्मी ही संगति योग्य, ज्ञानी साधक सेवा योग्य।
जिनवाणी ही पढ़ने योग्य, सुनने योग्य समझने योग्य॥२॥

तत्त्व प्रयोजन निर्णय योग्य, भेद-ज्ञान ही चिन्तन योग्य।
सब व्यवहार हैं जानन योग्य, परमारथ प्रगटावन योग्य॥३॥

वस्तुस्वरूप विचारन योग्य, निज वैभव अवलोकन योग्य।
चित्स्वरूप ही अनुभव योग्य, निजानंद ही वेदन योग्य॥४॥

अध्यातम ही समझने योग्य, शुद्धातम ही रमने योग्य।
धर्म अहिंसा धारण योग्य, दुर्विकल्प सब तजने योग्य॥५॥

श्री जिनधर्म प्रभावन योग्य, ध्रुव आतम ही भावन योग्य।
सकल परीषह सहने योग्य, सर्व कर्म मल दहने योग्य॥६॥

भव का भ्रमण मिटाने योग्य, क्षपक श्रेणी चढ़ जाने योग्य।
तजो अयोग्य करो अब योग्य, मुक्तिदशा प्रगटाने योग्य॥७॥

आया अवसर सबविधि योग्य, निमित्त अनेक मिले हैं योग्य।
हो पुरुषार्थ तुम्हारा योग्य, सिद्धि सहज ही होवे योग्य॥८॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सांत्वनाष्टक

शान्तचित्त हो निर्विकल्प हो, आत्मन् निज में तृप्त रहो।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ, चिदानन्द रस सहज पिओ॥टेक॥

स्वयं स्वयं में सर्व वस्तुएँ, सदा परिणमित होती हैं।
इष्ट-अनिष्ट न कोई जग में, व्यर्थ कल्पना झूठी है॥
धीर-वीर हो मोहभाव तज, आतम-अनुभव किया करो॥१॥ व्यग्र.॥

देखो प्रभु के ज्ञान माँहिं, सब लोकालोक झलकता है।
फिर भी सहज मग्न अपने में, लेश नहीं आकुलता है॥
सच्चे भक्त बनो प्रभुवर के ही पथ का अनुसरण करो॥२॥ व्यग्र.॥

देखो मुनिराजों पर भी, कैसे-कैसे उपसर्ग हुए।
धन्य-धन्य वे साधु साहसी, आराधन से नहीं चिगे॥
उनको निज-आदर्श बनाओ, उर में समताभाव धरो॥३॥ व्यग्र.॥

व्याकुल होना तो, दुख से बचने का कोई उपाय नहीं।
होगा भारी पाप बंध ही, होवे भव्य अपाय नहीं॥
ज्ञानाभ्यास करो मन माहीं, दुर्विकल्प दुखरूप तजो॥४॥ व्यग्र.॥

अपने में सर्वस्व है अपना, परद्रव्यों में लेश नहीं।
हो विमूढ़ पर में ही क्षण-क्षण, करो व्यर्थ संक्लेश नहीं॥
अरे विकल्प अकिंचित्कर ही, ज्ञाता हो ज्ञाता ही रहो॥५॥ व्यग्र.॥

अन्तर्दृष्टि से देखो नित, परमानन्दमय आत्मा।
स्वयंसिद्ध निर्द्वन्द्व निरामय, शुद्ध बुद्ध परमात्मा॥
आकुलता का काम नहीं कुछ, ज्ञानानन्द का वेदन हो॥६॥ व्यग्र.॥

सहज तत्त्व की सहज भावना, ही आनन्द प्रदाता है।
जो भावे निश्चय शिव पावे, आवागमन मिटाता है॥
सहजतत्त्व ही सहज ध्येय है, सहजरूप नित ध्यान धरो॥७॥ व्यग्र.॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उत्तम जिन वचनामृत पाया, अनुभव कर स्वीकार करो।
पुरुषार्थी हो स्वाश्रय से इन, विषयों का परिहार करो॥
ब्रह्मभावमय मंगल चर्या, हो निज में ही मग्न रहो॥८॥ व्यग्र.॥

परमार्थ-शरण

अशरण जग में शरण एक शुद्धातम ही भाई।
धरो विवेक हृदय में आशा पर की दुखदाई॥१॥

सुख दुख कोई न बाँट सके यह परम सत्य जानो।
कर्मोदय अनुसार अवस्था संयोगी मानो॥२॥

कर्म न कोई देवे-लेवे प्रत्यक्ष ही देखो।
जन्मे-मरे अकेला चेतन तत्त्वज्ञान लेखो॥३॥

पापोदय में नहीं सहाय का निमित्त बने कोई।
पुण्योदय में नहीं दण्ड का भी निमित्त होई॥४॥

इष्ट-अनिष्ट कल्पना त्यागो हर्ष-विषाद तजो।
समता धर महिमामय अपना आतम आप भजो॥५॥

शाश्वत सुखसागर अन्तर में देखो लहरावे।
दुर्विकल्प में जो उलझे वह लेश न सुख पावे॥६॥

मत देखो संयोगों को कर्मोदय मत देखो।
मत देखो पर्यायों को गुणभेद नहीं देखो॥७॥

अहो देखने योग्य एक ध्रुव ज्ञायक प्रभु देखो।
हो अन्तर्मुख सहज दीखता अपना प्रभु देखो॥८॥

देखत होउ निहाल अहो निज परम प्रभू देखो।
पाया लोकोत्तम जिनशासन आतमप्रभु देखो॥९॥

निश्चय नित्यानन्दमयी अक्षय पद पाओगे।
दुखमय आवागमन मिटे भगवान कहाओगे॥१०॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशिष्ट-खण्ड

मंगल पंचक

– पण्डित पन्नालालजी

(हरिगीतिका)

गुणरत्नभूषा विगतदूषा: सौम्यभावनिशाकरा:,
सद्बोध-भानुविभा-विभाषितदिक्चया विदुषांवरा:।
नि:सीमसौख्यसमूह मण्डितयोगखण्डितरतिवरा:,
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते श्री वीरनाथ जिनेश्वरा: ॥१॥

सद्ध्यानतीक्ष्ण-कृपाणधारा निहतकर्मकदम्बका,
देवेन्द्रवृन्दनरेन्द्रवन्द्या: प्राप्तसुखनिकुरम्बका:।
योगीन्द्रयोगनिरुपणीया: प्राप्तबोधकलापका:,
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते सिद्धा: सदा सुखदायका ॥२॥

आचारपंचकचरणचारणचुंचव: समताधरा:,
नानातपोभरहेतिहापितकर्मका: सुखिताकरा:।
गुप्तित्रयीपरिशीलनादिविभूषिता वदतांवरा:,
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते श्री सूरयोऽर्जितशंभरा: ॥३॥

द्रव्यार्थ भेदविभिन्नश्रुतभरपूर्ण तत्त्वनिभालिनो,
दुर्योगयोगनिरोधदक्षा: सकलवरगुणशालिन:।
कर्तव्यदेशनतत्परा विज्ञानगौरवशालिन:,
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते गुरुदेवदीधितिमालिन: ॥४॥

संयमसमित्यावश्यका-परिहाणिगुप्तिविभूषिता:,
पंचाक्षदान्तिसमुद्यता: समतासुधापरिभूषिता:।
भूपृष्ठविष्टरसायिनो विविधर्द्धिवृन्द विभूषिता:,
कुर्वन्तु मंगलमत्र ते मुनय: सदा शमभूषिता: ॥५॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुण्याहवाचन

ॐ पुण्याहं पुण्याहं लोकोद्योतनकरा अतीतकालसंजाता निर्वाणसागरप्रभृतयश्चतुर्विंशतिपरमदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ सम्प्रतिकालसंभवा वृषभादिवीरान्ताश्चतुर्विंशतिपरम-जिनेन्द्रा वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ भविष्यत्कालाभ्युदयप्रभवा महापद्मादिचतुर्विंशति-भविष्यत्परम देवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम्। (धारा)

विंशति परमदेवाः वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम्। (धारा)

ॐ सप्तर्द्धिविशोभिताः कुन्दाकुन्दाद्यनेकदिगम्बरसाधुचरणा वः प्रीयन्तां प्रीयन्ताम्। (धारा)

इह वान्यनगरग्रामदेवतामनुजाः सर्वे गुरुभक्ता जिनधर्मपरायणा भवन्तु। दानतपोवीर्यानुष्ठानं नित्यमेवास्तु। सर्वजिनधर्मभक्तानां धनधान्यै-श्वर्यबलद्युतियशः प्रमोदोत्सवाः प्रवर्तन्ताम्।

तुष्टिरस्तु, पुष्टिरस्तु, वृद्धिरस्तु, कल्याणमस्तु, अविघ्नमस्तु, आरोग्यमस्तु, कर्मसिद्धिरस्तु, इष्टसम्पत्तिरस्तु, काममागंल्योत्सवाः सन्तु, पापानि शाम्यन्तु, घोराणि शाम्यन्तु, पुण्यं वर्धताम्, धर्मो वर्धताम्, श्रीवर्धताम्, कुलं गोत्रं चाभिवर्धेताम्, स्वस्ति भद्रं चास्तु, आयुष्यमस्तु, पापानि क्ष्वीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा। श्री मज्जिनेन्द्रचरणारविन्देष्वानन्दभक्तिः सदास्तु।

तदनन्तर शान्ति पाठ और विसर्जन पाठ पढें।

स्वरूप की भूल मिथ्यात्व है। स्वरूप से विरति अविरति है। स्वरूप में असावधानी प्रमाद है। स्वरूप की अस्थिरता कषाय है। देह का वियोग मृत्यु नहीं, आत्म-विस्मृति ही मृत्यु है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चौबीस तीर्थंकर वंदना

– पण्डित अभयकुमारजी

जो अनादि से व्यक्त नहीं था त्रैकालिक ध्रुव ज्ञायक भाव।
वह युगादि में किया प्रकाशित वन्दन ऋषभ जिनेश्वर राव ॥१॥

जिसने जीत लिया त्रिभुवन को मोह शत्रु वह प्रबल महान।
उसे जीतकर शिवपद पाया वन्दन अजितनाथ भगवान ॥२॥

काललब्धि बिन सदा असम्भव निज सन्मुखता का पुरुषार्थ।
निर्मल परिणति के स्वकाल में सम्भव जिनने पाया अर्थ ॥३॥

त्रिभुवन जिनके चरणों का अभिनंदन करता तीनों काल।
वे स्वभाव का अभिनन्दन कर पहुँचे शिवपुर में तत्काल ॥४॥

निज आश्रय से ही सुख होता यही सुमति जिन बतलाते।
सुमतिनाथ प्रभु की पूजन कर भव्यजीव शिवसुख पाते ॥५॥

पद्मप्रभ के पद-पंकज की सौरभ से सुरभित त्रिभुवन।
गुण अनन्त के सुमनों से शोभित श्री जिनवर का उपवन ॥६॥

श्री सुपार्श्व के शुभ सु-पार्श्व में जिनकी परिणति करे विराम।
वे पाते हैं गुण अनन्त से भूषित सिद्ध सदन अभिराम ॥७॥

चारु चन्द्रसम सदा सुशीतल चेतन चन्द्रप्रभ जिनराज।
गुण अनन्त की कला विभूषित प्रभु ने पाया निजपद राज ॥८॥

पुष्पदन्त सम गुण आवलि से सदा सुशोभित हैं भगवान।
मोक्षमार्ग की सुविधि बताकर भविजन का करते कल्याण ॥९॥

चन्द्रकिरण सम शीतल वचनों से हरते जग का आताप।
स्याद्वादमय दिव्यध्वनि से मोक्षमार्ग बतलाते आप ॥१०॥

त्रिभुवन के श्रेयस्कर हैं श्रेयांसनाथ जिनवर गुणखान।
निज-स्वभाव ही परम श्रेय का केन्द्र बिन्दु कहते भगवान ॥११॥

शत इन्द्रों से पूजित जग में वासुपूज्य जिनराज महान।
स्वाश्रित परिणति द्वारा पूजित पञ्चमभाव गुणों की खान ॥१२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निर्मल भावों से भूषित हैं जिनवर विमलनाथ भगवान।
राग-द्वेष मल का क्षय करके पाया सौख्य अनन्त महान ॥१३॥

गुण अनन्तपति की महिमा से मोहित है यह त्रिभुवन आज।
जिन अनन्त को वन्दन करके पाऊँ शिवपुर का साम्राज्य ॥१४॥

वस्तुस्वभाव धर्मधारक हैं धर्म धुरन्धर नाथ महान।
ध्रुव की धुनमय धर्म प्रगट कर वन्दित धर्मनाथ भगवान ॥१५॥

रागरूप अंगारों द्वारा दहक रहा जग का परिणाम।
किंतु शांतिमय निजपरिणति से शोभित शांतिनाथ भगवान ॥१६॥

कुन्थु आदि जीवों की भी रक्षा का देते जो उपदेश।
स्व-चतुष्टय में सदा सुरक्षित कुन्थुनाथ जिनवर परमेश ॥१७॥

पंचेन्द्रिय विषयों से सुख की अभिलाषा है जिनकी अस्त।
धन्य-धन्य अरनाथ जिनेश्वर राग-द्वेष अरि किए परास्त ॥१८॥

मोह-मल्ल पर विजय प्राप्त कर जो हैं त्रिभुवन में विख्यात।
मल्लिनाथ जिन समवशरण में सदा सुशोभित हैं दिन-रात ॥१९॥

तीन कषाय चौकड़ी जयकर मुनि-सु-व्रत के धारी हैं।
वन्दन जिनवर मुनिसुव्रत जो भविजन को हितकारी हैं ॥२०॥

नमि जिनवर ने निज में नमकर पाया केवलज्ञान महान।
मन-वच-तन से करूँ नमन सर्वज्ञ जिनेश्वर हैं गुणखान ॥२१॥

धर्मधुरा के धारक जिनवर धर्मतीर्थ रथ संचालक।
नेमिनाथ जिनराज वचन नित भव्यजनों के हैं पालक ॥२२॥

जो शरणागत भव्यजनों को कर लेते हैं आप समान।
ऐसे अनुपम अद्वितीय पारस हैं पार्श्वनाथ भगवान ॥२३॥

महावीर सन्मति के धारक वीर और अतिवीर महान।
चरण-कमल का अभिनन्दन है वन्दन वर्धमान भगवान ॥२४॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विद्यमान बीस तीर्थंकर वंदना

– पण्डित अभयकुमारजी

स्वचतुष्टय की सीमा में, सीमित हैं सीमन्धर भगवान।
किन्तु असीमित ज्ञानानन्द से सदा सुशोभित हैं गुणखान॥१॥

युगल धर्ममय वस्तु बताते नय-प्रमाण भी उभय कहे।
युगमन्धर के चरण-युगल में, दर्श-ज्ञान मम सदा रमें॥२॥

दर्शन-ज्ञान बाहुबल धरकर, महाबली हैं बाहु जिनेन्द्र।
मोह शत्रु को किया पराजित शीष झुकाते हैं शत इन्द्र॥३॥

जो सामान्य-विशेष रूप उपयोग सुबाहु सदा धरते।
श्री सुबाहु के चरण कमल में भविजन नित वन्दन करते॥४॥

शुद्ध स्वच्छ चेतनता ही है जिनकी सम्यक् जाति महान।
अन्तर्मुख परिणति में लखते वन्दन संजातक भगवान॥५॥

निजस्वभाव से स्वयं प्रगट होती है जिनकी प्रभा महान।
लोकालोक प्रकाशित होता धन्य स्वयंप्रभ प्रभु का ज्ञान॥६॥

चेतनरूप वृषभमय आनन से जिनकी होती पहिचान।
वृषभानन प्रभु के चरणों में नमकर परिणति बने महान॥७॥

वीर्य अनन्त प्रगट कर प्रभुवर भोगें निज आनन्द महान।
ज्ञान लखें ज्ञेयाकारों में धन्य अनन्तवीर्य भगवान॥८॥

सूर्यप्रभा भी फीकी पड़ती ऐसी चेतन प्रभा महान।
धारण कर जिनराज सूर्यप्रभ देते जग को सम्यग्ज्ञान॥९॥

अहो विशाल कीर्ति धारण कर शत इन्द्रों से वन्दित हैं।
श्री विशालकीर्ति जिनवर नित त्रिभुवन से अभिनन्दित हैं॥१०॥

स्वानुभूतिमय वज्र धार कर, मोह शत्रु पर किया प्रहार।
वन्दन वज्रधार जिनवर को, भोगें नित आनन्द अपार॥११॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चारु-चन्द्र सम आनन जिनका, हरण करे जग का आताप।
चन्द्रानन जिन चरण-कमल में प्रक्षालित हों सारे पाप॥१२॥

दर्शन-ज्ञान सुबाहु भद्र लख, भद्र भव्य भूलें आताप।
वन्दन भद्रबाहु जिनवर को मोह नष्ट हों अपने आप॥१३॥

गुण अनन्त वैभव के धारी, सदा भुजंगम जिन परमेश।
जिनकी विषय विरक्त वृत्ति लख भोग भुजंग हुए निस्तेज॥१४॥

हे ईश्वर ! जग को दिखलाते निज में ही निज का ऐश्वर्य।
निज परिणति में प्रगट हुए हैं दर्शन-ज्ञान-वीर्य-सुख कार्य॥१५॥

निज वैभव की परम प्रभा से, शोभित नेमप्रभ जिनराज।
ध्रुव की धुनमय धर्मधुरा से, पाया गुण अनन्त साम्राज्य॥१६॥

परम अहिंसामय परिणति से शोभित वीरसेन भगवान।
गुण अनन्त की सेना में हो व्याप्त द्रव्य तुम वीर महान॥१७॥

सहज सरल स्वाभाविक गुण से भूषित महाभद्र भगवान।
भद्रजनों द्वारा पूजित हैं, अतः श्रेष्ठ हैं भद्र महान॥१८॥

गुण अनन्त की सौरभ से है जिनका यश त्रिभुवन में व्याप्त।
धन्य-धन्य जिनराज यशोधर एक मात्र शिवपथ में आप्त॥१९॥

मोह शत्रु से अविजित रहकर, अजितवीर्य के धारी हैं।
वन्दन अजितवीर्य जिनवर जो त्रिभुवन के उपकारी हैं॥२०॥

सत्पुरुष के वचन सुनना दुर्लभ है, विचारना दुर्लभ है, तो अनुभवना दुर्लभ हो – इसमें क्या आश्चर्य ?

जिन आदतों को हम प्रयत्नपूर्वक पालते हैं, वे हमारा भाग्य बन जाती हैं और फिर हम उनके दास बन जाते हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिमा प्रक्षाल पाठ

– पण्डित अभयकुमारजी

(दोहा)

परिणामों की स्वच्छता, के निमित्त जिनबिम्ब ।
इसीलिए मैं निरखता, इनमें निज प्रतिबिम्ब ॥
पञ्च प्रभु के चरण में, वन्दन करूँ त्रिकाल ।
निर्मल जल से कर रहा, प्रतिमा का प्रक्षाल ॥

अथ पौर्वाह्निकदेववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजास्तवन-वन्दनासमेतं श्री पंचमहागुरुभक्तिपूर्वककायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़ें)

(छप्पय)

तीन लोक के कृत्रिम और अकृत्रिम सारे ।
जिनबिम्बों को नित प्रति अगणित नमन हमारे ॥
श्री जिनवर की अन्तर्मुख छवि उर में धारूँ ।
जिन में निज का निज में जिन-प्रतिबिम्ब निहारूँ ॥
मैं करूँ आज संकल्प शुभ, जिनप्रतिमा प्रक्षाल का ।
यह भाव सुमन अर्पण करूँ, फल चाहूँ गुणमाल का ॥

ॐ ह्रीं प्रक्षालप्रतिज्ञायै पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

(प्रक्षाल की प्रतिज्ञा हेतु पुष्प क्षेपण करें)

(रोला)

अन्तरंग बहिरंग सुलक्ष्मी से जो शोभित ।
जिनकी मंगल वाणी पर है त्रिभुवन मोहित ॥
श्री जिनवर सेवा से क्षय मोहादि विपत्ति ।
हे जिन! श्री लिख पाऊँगा निज-गुण सम्पत्ति ॥

(थाली की चौकी पर केशर से श्री लिखें)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(दोहा)

अन्तर्मुख मुद्रा सहित, शोभित श्री जिनराज ।
प्रतिमा प्रक्षालन करूँ, धरूँ पीठ यह आज ॥

ॐ ह्रीं श्री पीठस्थापनं करोमि । **(प्रक्षाल हेतु थाली स्थापित करें)**

(रोला)

भक्ति रत्न से जड़ित आज मंगल सिंहासन ।
भेद-ज्ञान जल से क्षालित भावों का आसन ॥
स्वागत है जिनराज! तुम्हारा सिंहासन पर ।
हे जिनदेव पधारो श्रद्धा के आसन पर ॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ ।

(थाली में जिनबिम्ब विराजमान करें)

क्षीरोदधि के जल से भरे कलश ले आया ।
दृग-सुख-वीरज ज्ञानस्वरूपी आतम पाया ॥
मंगल कलश विराजित करता हूँ जिनराजा ।
परिणामों के प्रक्षालन से सुधरें काजा ॥

ॐ ह्रीं अर्हं कलशस्थापनं करोमि ।

(चारों कोनों में निर्मल जल से भरे कलश स्थापित करें)

जल-फल आठों द्रव्य मिलाकर अर्घ्य बनाया ।
अष्ट अंग युत मानो सम्यग्दर्शन पाया ॥
श्री जिनवर के चरणों में यह अर्घ्य समर्पित ।
करूँ आज रागादि विकारी भाव विसर्जित ॥

ॐ ह्रीं श्री स्नपनपीठस्थिताय जिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(पीठ स्थित जिनप्रतिमा को अर्घ्य चढ़ायें)

मैं रागादि विभावों से कलुषित हे जिनवर ।
और आप परिपूर्ण वीतरागी हो प्रभुवर ॥
कैसे हो प्रक्षाल, जगत के अघ-क्षालक का ।
क्या दरिद्र होगा पालक? त्रिभुवन पालक का ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भक्ति भाव के निर्मल जल से अघ-मल धोता।
है किसका अभिषेक भ्रान्त चित खाता गोता॥
नाथ! भक्तिवश जिनबिम्बों का करूँ न्हवन मैं।
आज करूँ साक्षात् जिनेश्वर का पर्शन मैं॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादिमहावीरपर्यन्तं चतुर्विंशतितीर्थंकर परम देवमाद्यानामाद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे.....नाम्निनगरे मासानामुत्तमे ..... मासे.....पक्षे.....दिने मुन्यार्यिकाश्रावकश्राविकाणां सकलकर्मक्षयार्थं पवित्रतर-जलेन जिनमभिषेचयामि।

(चारों कलशों से अभिषेक करें तथा वादित्र नाद करायें एवं जय-जय शब्दोच्चारण करें)

(दोहा)

क्षीरोदधिसम नीर से, करूँ बिम्ब प्रक्षाल।
श्री जिनवर की भक्ति से, जानूँ निज पर चाल॥
तीर्थंकर का न्हवन शुभ, सुरपति करें महान।
पंचमेरु भी हो गये, महातीर्थ सुखदान॥
करता हूँ शुभ भाव से, प्रतिमा का अभिषेक।
बचूँ शुभाशुभ भाव से, यही कामना एक॥
जल-फलादि वसु द्रव्य ले, मैं पूजूँ जिनराज।
हुआ बिम्ब अभिषेक अब, पाऊँ निज पदराज॥

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादिवीरान्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवर का धवल यश, त्रिभुवन में है व्याप्त।
शान्ति करें मम चित्त में, हे परमेश्वर आप्त॥

(पुष्पाञ्जलिं क्षेपण करें)

(रोला)

जिनप्रतिमा पर अमृतसम जल-कण अति शोभित।
आत्म-गगन में गुण अनन्त तारे भवि मोहित॥
हो अभेद का लक्ष्य भेद का करता वर्जन।
शुद्ध वस्त्र से जल-कण का करता परिमार्जन॥

(प्रतिमा को शुद्ध वस्त्र से पोंछे)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(दोहा)

श्री जिनवर की भक्ति से, दूर होय भव-भार ।
उर-सिंहासन थापिये, प्रिय चैतन्य कुमार ॥

(जिनप्रतिमा को सिंहासन पर विराजमान करें तथा निम्न छन्द बोलकर अर्घ्य चढ़ायें ।)

जल-गन्धादिक द्रव्य से, पूजूँ श्री जिनराज ।
पूर्ण अर्घ्य अर्पित करूँ, पाऊँ चेतनराज ॥

ॐ ह्रीं श्री पीठस्थितजिनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

(दोहा)

जिन संस्पर्शित नीर यह, गन्धोदक गुण खान ।
मस्तक पर धारूँ सदा, बनूँ स्वयं भगवान ॥

(मस्तक पर गन्धोदक चढ़ायें, अन्य किसी अंग से गन्धोदक का स्पर्श वर्जित है ।

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन

– बाबू युगलजी

केवल रवि किरणों से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अंतर।
उस श्री जिनवाणी में होता, तत्त्वों का सुन्दरतम दर्शन॥
सद्दर्शन बोध चरण पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण।
उन देव परम-आगम गुरु को, शत-शत वंदन शत-शत वंदन॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

इन्द्रिय के भोग मधुर विषसम, लावण्यमयी कंचन काया।
यह सब कुछ जड़ की क्रीड़ा है, मैं अबतक जान नहीं पाया॥
मैं भूल स्वयं के वैभव को, पर ममता में अटकाया हूँ ।
अब निर्मल सम्यक् नीर लिये, मिथ्यामल धोने आया हूँ ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

जड़ चेतन की सब परिणति प्रभु ! अपने-अपने में होती है।
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ती है॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रतिकूल संयोगों में क्रोधित, होकर संसार बढ़ाया है।
सन्तप्त हृदय प्रभु ! चन्दन सम, शीतलता पाने आया है॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

उज्ज्वल हूँ कुन्द धवल हूँ प्रभु ! पर से न लगा हूँ किंचित् भी।
फिर भी अनुकूल लगें उन पर, करता अभिमान निरंतर ही॥
जड़ पर झुक-झुक जाता चेतन, की मार्दव की खंडित काया।
निज-शाश्वत अक्षयनिधि पाने, अब दास चरण रज में आया॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

यह पुष्प सुकोमल कितना है, तन में माया कुछ शेष नहीं।
निज अन्तर का प्रभु ! भेद कहूँ, उसमें ऋजुता का लेश नहीं॥
चिंतन कुछ फिर संभाषण कुछ, क्रिया कुछ की कुछ होती है ।
स्थिरता निज में प्रभु पाऊँ, जो अन्तर-कालुष धोती है॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

अबतक अगणित जड़द्रव्यों से प्रभु ! भूख न मेरी शान्त हुई।
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही॥
युग-युग से इच्छा सागर में, प्रभु ! गोते खाता आया हूँ।
पंचेन्द्रिय मन के षट्रस तज, अनुपम रस पीने आया हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

मेरे चैतन्य सदन में प्रभु ! चिर व्याप्त भयंकर अंधियारा।
श्रुत-दीप बुझा हे करुणानिधि ! बीती नहिं कष्टों की कारा॥
अतएव प्रभो ! यह ज्ञान प्रतीक, समर्पित करने आया हूँ।
तेरी अंतर लौ से निज अंतर, दीप जलाने आया हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

जड़कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या भ्रान्ति रही मेरी।
मैं रागी-द्वेषी हो लेता, जब परिणति होती है जड़ की॥
यों भाव-करम या भाव-मरण, सदियों से करता आया हूँ।
निज अनुपम गंध अनल से प्रभु ! परगंध जलाने आया हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जग में जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है।
मैं आकुल-व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है॥
मैं शान्त निराकुल चेतन हूँ, है मुक्तिरमा सहचर मेरी।
यह मोह तड़ककर टूट पड़े, प्रभु ! सार्थक फल पूजा तेरी॥

ॐ ह्री श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

क्षणभर निजरस को पी चेतन, मिथ्यामल को धो देता है।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है॥
अनुपमसुख तब विलसित होता, केवलरवि जगमग करता है।
दर्शन बल पूर्ण प्रगट होता, यह ही अर्हन्त अवस्था है॥
यह अर्घ समर्पण करके प्रभु, निज गुण का अर्घ बनाऊँगा।
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु, अर्हन्त अवस्था पाऊँगा॥

ॐ ह्री श्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

(बारह भावना)

भव-वन में जीभर घूम चुका, कण-कण को जी भर-भर देखा।
मृगसम मृगतृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा॥

झूठे जग के सपने सारे, झूठी मन की सब आशायें।
तन-जीवन-यौवन अस्थिर हैं, क्षणभंगुर पल में मुरझायें॥

सम्राट महाबल सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या?
अशरण मृतकाया में हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या?

संसार महादुख सागर के, प्रभु दुखमय सुख आभासों में।
मुझको न मिला सुख क्षणभर भी, कंचन-कामिनि-प्रासादों में॥

मैं एकाकी एकत्व लिये, एकत्व लिये सब ही आते।
तन-धन को साथी समझा था, पर ये भी छोड़ चले जाते॥

मेरे न हुए ये मैं इनसे, अतिभिन्न अखण्ड निराला हूँ।
निज में पर से अन्यत्व लिये, निज समरस पीनेवाला हूँ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जिसके शृंगारों में मेरा यह, मंहगा जीवन घुल जाता।
अत्यन्त अशुचि जड़ काया से, इस चेतन का कैसा नाता॥

दिन-रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता।
मानस वाणी और काया से, आस्रव का द्वार खुला रहता॥

शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अन्तस्तल।
शीतल समकित किरणें फूटें, संवर से जागे अन्तर्बल॥

फिर तप की शोधक बह्नि जगे, कर्मों की कड़ियाँ टूट पड़ें।
सर्वांग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के झरने फूट पड़ें॥

हम छोड़ चलें यह लोक तभी, लोकान्त विराजें क्षण में जा।
निजलोक हमारा वासा हो, शोकान्त बनें फिर हमको क्या॥

जागे मम दुर्लभ बोधि प्रभु ! दुर्नयतम सत्वर टल जावे।
बस ज्ञाता दृष्टा रह जाऊँ, मद-मत्सर मोह विनश जावे॥

चिर रक्षक धर्म हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी।
जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहें जग के साथी॥

(देव-स्तवन)

चरणों में आया हूँ प्रभुवर ! शीतलता मुझको मिल जावे।
मुरझाई ज्ञानलता मेरी, निज अन्तर्बल से खिल जावे॥

सोचा करता हूँ भोगों से, बुझ जावेगी इच्छा-ज्वाला।
परिणाम निकलता है लेकिन, मानों पावक में घी डाला॥

तेरे चरणों की पूजा से, इन्द्रिय सुख को ही अभिलाषा।
अबतक ना समझ ही पाया प्रभु, सच्चे सुख की भी परिभाषा॥

तुम तो अविकारी हो प्रभुवर ! जग में रहते जग से न्यारे।
अतएव झुकें तव चरणों में, जग के माणिक मोती सारे॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(शास्त्र-स्तवन)

स्याद्वादमयी तेरी वाणी, शुभनय के झरने झरते हैं।
उस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं॥

(गुरु-स्तवन)

हे गुरुवर शाश्वत सुखदर्शक, यह नग्नस्वरूप तुम्हारा है।
जग की नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्शन करनेवाला है॥

जब जग विषयों में रच-पच कर, गाफिल निद्रा में सोता हो।
अथवा वह शिव के निष्कटंक, पथ में विषकंटक बोता हो॥

हो अर्द्ध निशा का सन्नाटा, वन में वनचारी चरते हों।
तब शान्त निराकुल मानस तुम, तत्त्वों का चिंतन करते हो॥

करते तप शैल नदी तट पर, तरुतल वर्षा की झड़ियों में।
समता रसपान किया करते, सुख-दुख दोनों की घड़ियों में॥

अन्तर ज्वाला हरती वाणी, मानों झड़ती हों फुलझड़ियाँ।
भवबन्धन तड़-तड़ टूट पड़ें, खिल जावें अन्तर की कलियाँ॥

तुम-सा दानी क्या कोई हो, जग को दे दीं जग की निधियाँ।
दिन रात लुटाया करते हो, सम-शम की अविनश्वर मणियाँ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं नि. स्वाहा।

हे निर्मल देव! तुम्हें प्रणाम, हे ज्ञानदीप आगम! प्रणाम।
हे शान्ति-त्याग के मूर्तिमान! शिवपथ-पंथी गुरुवर! प्रणाम॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

उजालों का जन्म अधेरे की कोख में ही हुआ है। संन्यासी कोई नहीं होता, केवल न्यास बदलता है।

अपना बुरा करनेवाले को भुला देना उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना किसी की भलाई करके भूल जाना।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समुच्चय पूजन

– ब्र. सरदारमलजी

(श्री देव-शास्त्र-गुरु, विदेहक्षेत्र में विद्यमान बीस तीर्थंकर, सिद्धपूजन)

(दोहा)

देव-शास्त्र-गुरु नमनकरि, बीस तीर्थंकर ध्याय।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूँ चित्त हुलसाय॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह ! श्री विद्यमान विंशति तीर्थंकर समूह अनन्तानंत सिद्ध परमेष्ठी समूह !अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

अनादिकाल से जग में स्वामिन् जल से शुचिता को माना।
शुद्ध निजातम सम्यक्, रत्नत्रयनिधि को नहिं पहचाना॥
अब निर्मल रत्नत्रयजल ले, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलम् नि. ।

भव आताप मिटावन की निज में ही क्षमता समता है ।
अनजाने ही अब तक मैंने पर में की झूठी ममता है॥
चन्दन सम शीतलता पाने श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ ॥विद्यमान.॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्यः, संसार तापविनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

अक्षयपद बिन फिरा जगत की, लख चौरासी योनि में।
अष्टकर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिंग लाया मैं॥
अक्षयनिधि निज की पाने अब, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ॥विद्यमान.॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है।
मन्मथ वाणों से बिंध करके, चहुँगति दुख उपजाया है॥
स्थिरता निज में पाने को श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ ॥विद्यमान.॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विद्यमान विदेहक्षेत्रे विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

षट्रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शान्त हुई ।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई॥
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

जड़दीप विनश्वर को, अबतक समझा था मैंने उजियारा।
निजगुण दरशायक ज्ञानदीप से, मिटा मोह का अंधियारा॥
ये दीप समर्पित करके मैं श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ ॥विद्यमान.॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विद्यमान विदेहक्षेत्रे विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्यः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।
निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग द्वेष नशायेगी॥
उस शक्ति दहन प्रगटाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ॥विद्यमान.॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्योऽष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बदाम, श्रीफल, लवंग चरणन तुम ढिंग मैं ले आया।
आतमरस भीने निजगुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया॥
अब मोक्ष-महाफल पाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ॥विद्यमान.॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्यः, मोक्षफल प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

अष्टम बसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये ।
सहजशुद्ध स्वाभाविकता से निज में निजगुण प्रकट किये॥
ये अर्घ्य समर्पण करके मैं श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ ॥विद्यमान.॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंतसिद्धपरमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

(दोहा)

देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थङ्कर, सिद्ध प्रभु भगवान।
अब बरणू जयमालिका करूँ स्तवन गुणगान॥

(भुजंगप्रयात)

नसे घातिया कर्म जु अर्हन्त देवा,
करें सुर असुर नर मुनि नित्य सेवा।
दरश ज्ञान सुख बल अनन्त के स्वामी,
छियालिस गुण युक्त महा ईश नामी॥
तेरी दिव्य वाणी सदा भव्य मानी,
महा मोह विध्वंसिनी मोक्ष दानी।
अनेकान्तमय द्वादशांगी बखानी,
नमोलोक माता श्री जैन वाणी॥
विरागी आचारज उवज्झाय साधू,
दरश ज्ञान भण्डार समता अराधू।
नगन वेषधारी सु एकाविहारी,
निजानन्द मंडित मुकति पथ प्रचारी॥
विदेह क्षेत्र में तीर्थङ्कर बीस राजें,
विहरमान वन्दूँ सभी पाप भाजें।
नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी,
अनाकुल समाधान सहजाभिरामी॥

ॐ ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यः, श्री विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यः श्री अनन्तानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्योऽनर्घपद प्राप्तये जयमाला अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थङ्कर सिद्ध हृदय बिच धरले रे।
पूजन ध्यान गान गुण करके भवसागर जिय तरले रे॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री पंचपरमेष्ठी पूजन

– पण्डित राजमलजी पवैया

अर्हंत सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन।
जय पंच परम परमेष्ठी जय, भव सागर तारणहार नमन॥
मन वच काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध हृदय से आह्वानन ।
मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन॥
निज-आत्मतत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्टद्रव्य करता पूजन ।
तुम चरणों की पूजन से प्रभु, निज सिद्ध रूप का हो दर्शन॥

ॐ ह्रीं श्री अरहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधु पंचपरमेष्ठिन् अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ।
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भर कर लाया हूँ॥
मैं जन्म जरा मृत नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुःख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

संसार ताप में जल-जल कर मैंने अगणित दुःख पाए है।
निजशान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाए हैं॥
शीतल चन्दन है भेंट तुम्हें, संसार ताप नाशो स्वामी॥हे पंच..॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः संसारताप विनाशनाय चन्दनं नि. स्वाहा।

दुःखमय अथाह भवसागर में, मेरी यह नौका भटक रही ।
शुभ-अशुभभाव की भंवरों में, चैतन्यशक्तिनिज अटक रही॥
तन्दुल हैं धवल तुम्हें अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी॥हे पंच..॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्योऽक्षयपदप्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

मैं कामव्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किञ्चित् छाया।
चरणों में पुष्प चढ़ाता हूँ, तुम को पाकर मन हर्षाया॥
मैं कामभाव विध्वंस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी॥ हे पंच..॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मैं क्षुधा रोग से व्याकुल हूँ, चारों गति में भरमाया हूँ।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी तृप्त नहीं हो पाया हूँ॥
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा रोग मेटो स्वामी॥
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुःख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

मोहान्ध महा अज्ञानी मैं, निज को पर का कर्ता माना।
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्म स्वरूप न पहिचाना॥
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहांधकार क्षय हो स्वामी ॥हे पंच..॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः मोहांधकारविनाशनाय दीपम् नि. स्वाहा।

कर्मों की ज्वाला धधक रही, संसार बढ़ रहा है प्रतिपल।
संवर से आस्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल-पल॥
मैं धूप चढ़ाकर अब आठों, कर्मों का हनन करूँ स्वामी॥ हे पंच..॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्योऽष्टकर्मदहनाय धूपम् निर्वपामीति स्वाहा।

निज-आत्मतत्त्व का मनन करूँ, चिंतवन करूँ निजचेतन का।
दो श्रद्धा ज्ञान चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का॥
उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महाफल हो स्वामी॥ हे पंच..॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ।
अब तक के संचित कर्मों का, मैं पुञ्ज जलाने आया हूँ॥
यह अर्घ्य समर्पित करता हूँ, अविचल-अनर्घ्यपद दो स्वामी ॥हे पंच..॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्योऽनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अर्हंत देव को नमस्कार॥
अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरंजन निराकार।
जय अजर अमर हे मुक्तिकंत, भगवंत सिद्ध को नमस्कार॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार।
हे मुक्ति वधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार॥

एकादश अंग पूर्व चौदह के, पाठी गुण पच्चीस धार।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार॥

व्रत समिति गुप्ति चारित्र धर्म, वैराग्य भावना हृदय धार।
हे द्रव्य भाव संयम मय मुनिवर, सर्व साधु को नमस्कार॥

बहु पुण्य संयोग मिला नरतन, जिनश्रुत जिनदेव चरण दर्शन।
हो सम्यग्दर्शन प्राप्त मुझे, तो सफल बने मानव जीवन॥

निजपर का भेद जानकर मैं, निज को ही निज में लीन करूँ।
अब भेदज्ञान के द्वारा मैं निज आत्म स्वयं स्वाधीन करूँ॥

निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहिचानूँ।
पर परिणति से हो विमुख सदा, निज़ ज्ञान तत्त्व को ही जानूँ॥

जब ज्ञान ज्ञेय ज्ञाता विकल्प तज, शुक्लध्यान मैं ध्याऊँगा।
तब चार घातिया क्षय करके, अर्हंत महापद पाऊँगा॥

है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु कब इसको पाऊँगा।
सम्यक् पूजा फल पाने को, अब निज स्वभाव में आऊँगा॥

अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु, हे प्रभु मैंने की है पूजन।
तबतक चरणों में ध्यान रहे, जबतक न प्राप्त हो मुक्ति सदन॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हन्त-सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधु पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूँ।
मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल, नवकार मंत्र का ध्यान करूँ॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

भविष्यदृष्टा वह है, जो पानी आने से पहले पाल बाँध ले।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री सीमन्धर जिनपूजन

– डॉ. भारिल्ल

भवसमुद्र सीमित कियो, सीमंधर भगवान।
कर सीमित निजज्ञान को प्रगट्यो पूरण ज्ञान॥
प्रगट्यो पूरण ज्ञान वीर्य दर्शन सुखधारी।
समयसार अविकार विमल चैतन्य विहारी॥
अन्तर्बल से किया प्रबल रिपु मोह पराभव।
अरे भवान्तक ! करो अभय, हर लो मेरा भव॥

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

प्रभुवर तुम जल से शीतल हो, जल से निर्मल अविकारी हो।
मिथ्यामल धोने को जिनवर, तुम ही तो मल-परिहारी हो॥
तुम सम्यज्ञान जलोदधि हो, जलधर अमृत बरसाते हो।
भविजन-मनमीन प्राणदायक, भविजन मनजलज खिलाते हो॥
हे ज्ञानपयोनिधि सीमन्धर ! यह ज्ञानप्रतीक समर्पित है।
हो शान्त ज्ञेयनिष्ठा मेरी, जल से चरणाम्बुज चर्चित है॥

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय जन्म जरा मृत्यु रोग विनाशनाय जलं नि.स्वाहा।

चन्दनसम चन्द्रवदन जिनवर, तुम चन्द्रकिरण से सुखकर हो।
भवताप निकन्दन हे प्रभुवर ! सचमुच तुम ही भव दुखहर हो॥
जल रहा हमारा अन्तःस्तल, प्रभु इच्छाओं की ज्वाला से।
यह शान्त न होगा हे जिनवर, रे विषयों की मधुशाला से॥
चिर अन्तर्दाह मिटाने को, तुम ही मलयागिरि चन्दन हो।
चन्दन से चरचूँ चरणाम्बुज, भवतप हर ! शत-शत वन्दन हो॥

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनम् नि.स्वाहा।

प्रभु ! अक्षतपुर के वासी हो, मैं भी तेरा विश्वासी हूँ।
क्षत-विक्षत में विश्वास नहीं, तेरे पद का प्रत्याशी हूँ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अक्षत का अक्षत सम्बल ले, अक्षत साम्राज्य लिया तुमने।
अक्षत विज्ञान दिया जग को, अक्षत ब्रह्माण्ड किया तुमने॥
मैं केवल अक्षत अभिलाषी, अक्षत अतएव चरण लाया।
निर्वाणशिला के संगम-सा, धवलाक्षत मेरे मन भाया॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधर जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम् नि. स्वाहा।

तुम सुरभित ज्ञानसुमन हो प्रभु, नहिं राग-द्वेष दुर्गन्ध कहीं।
सर्वांग सुकोमल चिन्मय तन, जग से कुछ भी सम्बन्ध नहीं॥
निज अन्तर्वास सुवासित हो, शून्यान्तर पर की माया से।
चैतन्य विपिन के चितरंजन, हो दूर जगत की छाया से॥
सुमनों से मन को राह मिली, प्रभु कल्पवेलि से यह लाया।
इनको पा चहक उठा मन-खग, भर चोंच चरण में ले आया॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पम् नि. स्वाहा।

आनन्द रसामृत के द्रह हो, नीरस जड़ता का दान नहीं।
तुम मुक्त क्षुधा के वेदन से, षट्रस का नाम निशान नहीं॥
विध-विध व्यंजन के विग्रह से, प्रभु भूख न शांत हुई मेरी।
आनन्द सुधारस निर्झर तुम, अतएव शरण ली प्रभु तेरी॥
चिर-तृप्ति-प्रदायी व्यंजन से, हों दूर क्षुधा के अंजन ये।
क्षुत्पीड़ा कैसे रह लेगी ! जब पाये नाथ निरंजन से॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यम् नि. स्वाहा।

चिन्मय विज्ञानभवन अधिपति, तुम लोकालोक प्रकाशक हो।
कैवल्यकिरण से ज्योतित प्रभु, तुम महामोहतम नाशक हो॥
तुम हो प्रकाश के पुँज नाथ, आवरणों की परछाँह नहीं।
प्रतिबिंबित पूरी ज्ञेयावली, पर चिन्मयता को आँच नहीं॥
ले आया दीपक चरणों में, रे ! अन्तर आलोकित कर दो।
प्रभु तेरे-मेरे अन्तर को, अविलम्ब निरन्तर से भर दो॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपम् नि. स्वाहा।

धू धू जलती दुख की ज्वाला, प्रभु त्रस्त निखिल जगती तल है।
बेचेत पड़े सब देही हैं, चलता फिर राग प्रभंजन है॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यह धूम-घूमरी खा खा कर, उड़ रहा गगन की गलियों में।
अज्ञानतमावृत चेतन ज्यों, चौरासी की रंग रलियों में॥
संदेश धूप का तात्त्विक प्रभु, तुम हुए ऊर्ध्वगामी जग से।
प्रगटे दशाँग प्रभुवर तुम को, अन्तः दशाँग की सौरभ से॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपम् नि. स्वाहा।

शुभ-अशुभ वृत्ति एकांत दुख, अत्यंत मलिन संयोगी है।
अज्ञान विधाता है इनका, निश्चित चैतन्य विरोधी है॥
काँटों सी पैदा हो जाती, चैतन्य सदन के आँगन में।
चंचल छाया की माया सी, घटती क्षण में बढ़ती क्षण में॥
तेरी पूजा का फल प्रभुवर ! हों शान्त शुभाशुभ ज्वालायें।
मधुकल्प फलों-सी जीवन में, प्रभु शान्त लतायें छा जायें॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय मोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल जल-सा प्रभु निजस्वरूप, पहिचान उसी में लीन हुए।
भवताप उतरने लगा तभी, चन्दन-सी उठी हिलोर हिये॥
अविराम भवन प्रभु अक्षत का, सब शक्ति प्रसून लगे खिलने।
क्षुत् तृषा अठारह दोष क्षीण, कैवल्य प्रदीप लगा जलने॥
मिट चली चपलता योगों की, कर्मों के ईंधन ध्वस्त हुए।
फल हुआ प्रभो ! ऐसा मधुरिम, तुम धवल निरंजन व्यक्त हुए॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

वैदही हो देह में, अतः विदेही नाथ।
सीमंधर निज सीम में, शाश्वत करो निवास॥
श्रीजिन पूर्व विदेह में, विद्यमान अरहंत।
वीतराग सर्वज्ञ श्री सीमंधर भगवंत॥

हे ज्ञानस्वभावी सीमंधर, तुम हो असीम आनन्द रूप।
अपनी सीमा में सीमित हो, फिर भी हो तुम त्रैलोक्य भूप॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोहान्धकार के नाश हेतु, तुम ही हो दिनकर अतिप्रचण्ड।
हो स्वयं अखण्डित कर्मशत्रु को, किया आपने खण्ड-खण्ड॥

गृहवास राग की आग त्याग, धारा तुमने मुनिपद महान।
आतमस्वभाव साधन द्वारा, पाया तुमने परिपूर्ण ज्ञान॥

तुम दर्शन ज्ञान-दिवाकर हो, वीरज मंडित आनन्द कन्द।
तुम हुए स्वयं में स्वयं पूर्ण, तुम ही हो सच्चे पूर्णचन्द॥

पूरव विदेह में हे जिनवर, हो आप आज भी विद्यमान।
हो रहा दिव्य उपदेश भव्य, पा रहे नित्य अध्यात्म ज्ञान॥

श्री कुन्दकुन्द आचार्य देव को, मिला आपसे दिव्यज्ञान।
आत्मानुभूति से कर प्रमाण, पाया उनने आनन्द महान॥

पाया था उनने समयसार, अपनाया उनने समयसार।
समझाया उनने समयसार, हो गये स्वयं वे समयसार॥

दे गये हमें वे समयसार, गा रहे आज हम समयसार।
है समयसार बस एक सार, है समयसार बिन सब असार॥

मैं हूँ स्वभाव से समयसार, परिणति हो जावे समयसार।
है यही चाह, है यही राह, जीवन हो जावे समयसार॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालार्घ्यं नि. स्वाहा।

समयसार है सार, और सार कुछ है नहीं।
महिमा अपरम्पार, समयसारमय आपकी॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

सत्य स्वयं प्रकाशित होता है, उसे दिया नहीं दिखाना पड़ता। साँच को आँच नहीं।

केवल जुटावोगे तो बोझ बढ़ेगा, केवल लुटावोगे तो खोखले हो जाओगे। दोनों का सन्तुलन रखें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री सिद्ध पूजन

– बाबू युगलजी

(हरिगीतका एवं दोहा)

निज वज्रपौरुष से प्रभो ! अन्तरकलुष सब हर लिये।
प्रांजल प्रदेश-प्रदेश में, पीयूष निर्झर झर गये॥
सर्वोच्च हो अतएव बसते लोक के उस शिखर रे।
तुम को हृदय में स्थाप, मणि-मुक्ता चरण को चूमते॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर अवतर
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपते सिद्धपरमेष्ठिन् !अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्

शुद्धातम-सा परिशुद्ध प्रभो ! यह निर्मल नीर चरण लाया।
मैं पीड़ित निर्मम ममता से, अब इसका अन्तिम दिन आया॥
तुम तो प्रभु अंतर्लीन हुए, तोड़े कृत्रिम सम्बन्ध सभी।
मेरे जीवन-धन तुमको पा, मेरी पहली अनुभूति जगी॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्म-मरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं नि.

मेरे चैतन्य-सदन में प्रभु ! धू धू क्रोधानल जलता है।
अज्ञानअमा के अंचल में, जो छिपकर पल-पल पलता है॥
प्रभु ! जहाँ क्रोध का स्पर्श नहीं, तुम बसो मलय की महकों में।
मैं इसीलिए मलयज लाया क्रोधासुर भागे पलकों में॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारताप-विनाशनाय चंदनं नि. स्वाहा।

अधिपति प्रभु! धवल भवन के हो, और धवल तुम्हारा अन्तस्तल।
अन्तर के क्षत सब विक्षत कर, उभरा स्वर्णिम सौंदर्य विमल॥
मैं महा मान से क्षत-विक्षत, हूँ खंड खंड लोकांत-विभो।
मेरे मिट्टी के जीवन में, प्रभु अक्षत की गरिमा भर दो॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं नि. स्वाहा।

चैतन्य-सुरभि की पुष्प वाटिका, में विहार नित करते हो।
माया की छाया रंच नहीं, हर बिन्दु सुधा की पीते हो॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

निष्काम प्रवाहित हर हिलोर, क्या काम काम की ज्वाला से।
प्रत्येक प्रदेश प्रमत्त हुआ, पाताल-मधु-मधुशाला से॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं नि. स्वाहा।

यह क्षुधा देह का धर्म प्रभो ! इसकी पहिचान कभी न हुई।
हर पल तन में ही तन्मयता, क्षुत्-तृष्णा अविरल पीन हुई॥
आक्रमण क्षुधा का सह्य नहीं, अतएव लिये हैं व्यंजन ये।
सत्वर तृष्णा को तोड़ प्रभो ! लो, हम आनंद-भवन पहुँचे॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं नि. स्वाहा।

विज्ञान नगर के वैज्ञानिक, तेरी प्रयोगशाला विस्मय।
कैवल्य-कला में उमड़ पड़ा, सम्पूर्ण विश्व का ही वैभव॥
पर तुम तो उससे अति विरक्त, नित निरखा करते निज निधियाँ।
अतएव प्रतीक प्रदीप लिये, मैं मना रहा दीपावलियाँ॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं नि. स्वाहा।

तेरा प्रासाद महकता प्रभु ! अति दिव्य दशांगी धूपों से।
अतएव निकट नहिं आ पाते, कर्मों के कीट-पतंग अरे॥
यह धूप सुरभि-निर्झरणी, मेरा पर्यावरण विशुद्ध हुआ।
छक गया योग-निद्रा में प्रभु ! सर्वांग अमी है बरस रहा॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्म-दहनाय धूपं नि. स्वाहा।

निजलीन परमस्वाधीन बसो, प्रभु! तुम सुरम्य शिवनगरी में।
प्रतिपल बरसात गगन से हो, रसपान करो शिवगगरी में॥
ये सुरतरुओं के फल साक्षी, यह भवसंतति का अंतिम क्षण।
प्रभु मेरे मंडप में आओ, है आज मुक्ति का उद्घाटन॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफल-प्राप्तये फलं नि. स्वाहा।

तेरे विकीर्ण गुण सारे प्रभु ! मुक्ता-मोदक से सघन हुए।
अतएव रसास्वादन करते, रे ! घनीभूत अनुभूति लिये॥
हे नाथ ! मुझे भी अब प्रतिक्षण निज-अन्तरवैभव की मस्ती।
है आज अर्घ्य की सार्थकता, तेरी अस्ति मेरी बस्ती॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जयमाला

चिन्मय हो, चिद्रूप प्रभु ! ज्ञाता मात्र चिदेश।
शोध-प्रबन्ध चिदात्म के, सृष्टा तुम ही एक॥

जगाया तुमने कितनी बार, हुआ नहिं चिर-निद्रा का अन्त।
मदिर सम्मोहन ममता का, अरे ! बेचेत पड़ा मैं सन्त॥

घोर तम छाया चारों ओर, नहीं निज सत्ता की पहिचान।
निखिल जड़ता दिखती सप्राण, चेतना अपने से अनजान॥

ज्ञान की प्रतिपल उठे तरंग, झाँकता उसमें आतमराम।
अरे! आबाल सभी गोपाल, सुलभ सबको चिन्मय अभिराम॥

किंतु पर सत्ता में प्रतिबद्ध, कीर-मर्कट-सी गहल अनन्त।
अरे ! पाकर खोया भगवान, न देखा मैंने कभी बसन्त॥

नहीं देखा निज शाश्वत देव, रही क्षणिका पर्यय की प्रीति।
क्षम्य कैसे हों ये अपराध ? प्रकृति की यही सनातन रीति॥

अतः जड़ कर्मों की जंजीर, पड़ी मेरे सर्वात्म प्रदेश।
और फिर नरक निगोदों बीच, हुए सब निर्णय हे सर्वेश॥

घटाघन विपदा की बरसी, कि टूटी शंपा मेरे शीश।
नरक में पारद-सा तन टूक, निगोदों मध्य अनन्ती मीच॥

करें क्या स्वर्ग सुखों की बात, वहाँ की कैसी अद्भुत टेव।
अन्त में बिलखे छह-छह मास, कहें हम कैसे उसको देव॥

दशा चारों गति की दयनीय, दया का किन्तु न यहाँ विधान।
शरण जो अपराधी को दे, अरे ! अपराधी वह भगवान॥

अरे ! मिट्टी की काया बीच, महकता चिन्मय भिन्न अतीव।
शुभाशुभ की जड़ता तो दूर, पराया ज्ञान वहाँ परकीय॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अहो ! 'चित्' परम अकर्तानाथ, अरे ! वह निष्क्रिय तत्त्व विशेष।
अपरिमित अक्षय वैभवकोष, सभी ज्ञानी का यह परिवेश॥

बताये मर्म अरे ! यह कौन ? तुम्हारे बिन वैदेही नाथ।
विधाता शिव-पथ के तुम एक, पड़ा मैं तस्कर दल के हाथ॥

किया तुमने जीबन का शिल्प, खिरे सब मोह, कर्म और गात।
तुम्हारा पौरुष झंझावात, झड़ गये पीले-पीले पात॥

नहीं प्रज्ञा-आवर्तन शेष, हुए सब आवागमन अशेष।
अरे प्रभु ! चिर-समाधि में लीन, एक में बसते आप अनेक॥

तुम्हारा चित्-प्रकाश कैवल्य, कहैं तुम ज्ञायक लोकालोक।
अहो ! बस ज्ञान जहाँ हो लीन, वही है ज्ञेय, वही है भोग॥

योग-चांचल्य हुआ अवरुद्ध, सकल चैतन्य निकल निष्कंप।
अरे ! ओ योग रहित योगीश ! रहो यों काल अनन्तानन्त॥

जीव कारण-परमात्म त्रिकाल, वही है अन्तस्तत्व अखंड।
तुम्हें प्रभु ! रहा वही अवलम्ब, कार्य परमात्म हुए निर्बन्ध॥

अहो ! निखरा कांचन चैतन्य, खिले सब आठों कमल पुनीत।
अतीन्द्रिय सौख्य चिरंतन भोग, करो तुम धवल महल के बीच॥

उछलता मेरा पौरुष आज, त्वरित टूटेंगे बंधन नाथ।
अरे ! तेरी सुख-शय्या बीच, होगा मेरा प्रथम प्रभात॥

प्रभो ! बीती विभावरी आज, हुआ अरुणोदय शीतल छाँव।
झूमते शांति-लता के कुंज, चलें प्रभु ! अब अपने उस गाँव॥

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद-प्राप्तये जयमालाऽर्घ्यं.

चिर-विलास चिद्ब्रह्म में, चिर-निमग्न भगवंत।
द्रव्य-भाव स्तुति से प्रभो ! वंदन तुम्हें अनन्त॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री पंचबालयति जिनपूजन

– पण्डित अभयकुमारजी

(हरिगीतिका)

निज-ब्रह्म में नित लीन परिणति से सुशोभित हे प्रभो।
पञ्चम परम निज पारिणामिक से विभूषित हे विभो॥
हे नाथ तिष्ठो अत्र तुम सन्निकट हो मुझमय अहो।
श्री बालयति पाँचों प्रभु को वन्दना शत बार हो॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लि-नेमि-पार्श्व-वीराः पंचबालयतिजिनेन्द्राः ! अत्र अवतरन्तु अवतरन्तु संवौषट्। अत्र तिष्ठन्तु तिष्ठन्तु ठः ठः। अत्र मम सन्निहिता भवन्तु भवन्तु वषट् (इति आह्वाननं स्थापनं सन्निधिकरणञ्च)

(वीरछन्द)

हे प्रभु ! ध्रुव की ध्रुव परिणति के पावन जल में कर स्नान।
शुद्ध अतीन्द्रिय आनन्द का तुम करो निरन्तर अमृत-पान॥
क्षणवर्ती पर्यायों का तो जन्म-मरण है नित्य स्वभाव।
पंच बालयति-चरणों में हो तन संयोग-वियोग अभाव॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लि-नेमि-पार्श्व-वीराः पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो जन्म-मरा-मृत्यु विनाशनाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित चेतनद्रव्य आपकी परिणति में नित महक रहा।
क्षणवर्ती चैतन्य विवर्तन की ग्रन्थि में चहक रहा॥
द्रव्य और गुण पर्यायों में सदा महकती चेतन गन्ध।
पंच बालयति के चरणों में क्षय हो राग-द्वेष दुर्गन्ध॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

परिणामों के ध्रुव प्रवाह में बहे अखण्डित ज्ञायकभाव।
द्रव्य-क्षेत्र अरु काल-भाव में नित्य अभेद अखण्ड स्वभाव॥
निज गुण-पर्यायों में प्रभु का अक्षय पद अविचल अभिराम।
पंच बालयति जिनवर ! मेरी परिणति में नित करो विराम॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुण अनन्त के सुमनों से हो शोभित तुम ज्ञायक उद्यान।
त्रैकालिक ध्रुव परिणति में ही प्रतिपल करते नित्य विराम॥
ध्रुव के आश्रय से प्रभु तुमने नष्ट किया है काम-कलङ्क।
पंच बालयति के चरणों में धुला आज परिणति का पङ्क॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हे प्रभु ! अपने ध्रुव प्रवाह में रहो निरन्तर शाश्वत तृप्त।
षट्रस की क्या चाह तुम्हें तुम निजरस के अनुभव में मस्त॥
तृप्त हुई अब मेरी परिणति ज्ञायक में करके विश्राम।
पंच बालयति के चरणों में क्षुधा-रोग का रहा न नाम॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सहज ज्ञानमय ज्योति प्रज्ज्वलित रहती ज्ञायक के आधार।
प्रभो ! ज्ञानदर्पण में त्रिभुवन पल-पल होता ज्ञेयाकार॥
अहो निरखती मम श्रुत-परणति अपने में तव केवलज्ञान।
पंच बालयति के प्रसाद से प्रगट हुआ निज ज्ञायक भान॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपम् निर्वपामीति स्वाहा।

त्रैकालिक परिणति में व्यापी ज्ञान सूर्य की निर्मल धूप।
जिससे सकलकर्म-मल क्षयकर हुए प्रभो! तुम त्रिभुवन भूप॥
मैं ध्याता तुम ध्येय हमारे मैं हूँ तुममय एकाकार।
पंच बालयति जिनवर ! मेरे शीघ्र नशो अब त्रिविध विकार॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपम् निर्वपामीति स्वाहा।

सहज ज्ञान का ध्रुव प्रवाह फल सदा भोगता चेतनराज।
अपनी चित् परिणति में रमता पुण्य-पाप फल का क्या काज॥
अरे ! मोक्षफल की न कामना शेष रहे अब हे जिनराज।
पंच बालयति के चरणों में जीवन सफल हुआ है आज॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचम परमभाव की पूजित परिणति में जो करें विराम।
कारण-परमपारिणामिक का अवलम्बन लेते अविराम॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

वासुपूज्य अरु मल्लि-नेमिप्रभु-पार्श्वनाथ-सन्मति गुणखान।
अर्घ्य समर्पित पंच बालयति को पञ्चम गति लहूँ महान॥

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

पंच बालयति नित बसो, मेरे हृदय मँझार।
जिनके उर में बस रहा, प्रिय चैतन्य कुमार॥

(छप्पय)

प्रिय चैतन्य कुमार सदा परिणति में राजे,
पर-परिणति से भिन्न सदा निज में अनुरागे।
दर्शन-ज्ञानमयी उपयोग सुलक्षण शोभित,
जिसकी निर्मलता पर आतमज्ञानी मोहित॥
ज्ञायक त्रैकालिक बालयति मम परिणति में व्याप्त हो।
मैं नमूँ बालयति पंच को पंचमगति पद प्राप्त हो॥

(वीरछन्द)

धन्य-धन्य हे वासुपूज्य जिन ! गुण अनन्त में करो निवास,
निज आश्रित परिणति में शाश्वत महक रही चैतन्य-सुवास।
सत् सामान्य सदा लखते हो क्षायिक दर्शन से अविराम,
तेरे दर्शन से निज दर्शन पाकर हर्षित हूँ गुणखान॥

मोह-मल्ल पर विजय प्राप्त कर **महाबली हे मल्लि जिनेश!**,
निज गुण-परिणति में शोभित हो शाश्वत मल्लिनाथ परमेश।
प्रतिपल लोकालोक निरखते केवलज्ञान स्वरूप चिदेश,
विकसित हो चित् लोक हमारा तव किरणों से सदा दिनेश॥

राजमती तज नेमि जिनेश्वर ! शाश्वत सुख में लीन सदा,
भोक्ता-भोग्य विकल्प विलयकर निज में निज का भोग सदा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मोह रहित निर्मल परिणति में करते प्रभुवर सदा विराम,
गुण अनन्त का स्वाद तुम्हारे सुख में बसता है अविराम।।
आत्म-पराक्रम निरख आपका कमठ शत्रु भी हुआ परास्त,
क्षायिक श्रेणी आरोहण कर मोह शत्रु को किया विनष्ट।
पार्श्वबिम्ब के चरण युगल में क्यों बसता यह सर्प कहो ?,
बल अनन्त लखकर जिनवर का चूर कर्म का दर्प अहो।।
क्षायिक दर्शन ज्ञान वीर्य से शोभित हो सन्मति भगवान !,
भरतक्षेत्र के शासन नायक अन्तिम तीर्थंकर सुखखान।
विश्व सरोज प्रकाशक जिनवर हो केवल-मार्तण्ड महान,
अर्घ्य समर्पित चरण-कमल में **वन्दन वर्धमान भगवान।।**

ॐ ह्रीं श्री पंचबालयतिजिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालामहार्घ्यं नि. स्वाहा।

(सोरठा)

पंचम भाव स्वरूप पंच बालयति को नमूँ।
पाऊँ ध्रुव चिद्रूप निज कारणपरिणाममय।।

।। पुष्पांजलिं क्षिपामि ।।

तुम कहाँ से आये हो, यह जानना जरूरी नहीं,
पर कहाँ जाना है ? यह निश्चय कर लो।

पाने का आनन्द बड़ा होता है, पर देने का सुख भी छोटा नहीं होता; बशर्ते कि मन छोटा न हो।

भूल करना मानव की कमजोरी है, लेकिन उसे स्वीकार कर उसमें सुधार करना मानव की ताकत है।

इच्छा पूर्ति होने का मार्ग दुख का मार्ग है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अर्घ्यावलि

श्री देव-शास्त्र-गुरु को अर्घ्य

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत, पुष्प चरु दीपक धरूँ।
वर धूप निरमल फल विविध बहु, जनम के पातक हरूँ॥
इह भाँति अर्घ्य चढ़ाय नित भवि, करत शिव पंकति मचूँ।
अरहंत श्रुत सिद्धान्त गुरु, निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ॥

(दोहा)

वसु विधि अर्घ्य संजोयकै, अति उछाह मन कीन।
जासों पूजों परम पद, देव-शास्त्र-गुरु तीन॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री देव-शास्त्र-गुरु को अर्घ्य

क्षण भर निजरस को पी चेतन मिथ्यामल को धो देता है।
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज आनन्द अमृत पीता है॥
अनुपम सुख तब विलसित होता, केवल-रवि जग-मग करता है।
दर्शन-बल पूर्ण प्रकट होता यह ही अरहंत अवस्था है॥
यह अर्घ्य समर्पण करके प्रभु, निज गुण का अर्घ्य बनाऊँगा।
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु, अरहन्त अवस्था पाऊँगा॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचपरमेष्ठी का अर्घ्य

जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ।
अब तक के संचित कर्मों का, मैं पुंज जलाने आया हूँ॥
यह अर्घ्य समर्पित करता हूँ, अविचल अनर्घ्य पद दो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव दुःख मेटो अन्तर्यामी॥

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सिद्धपरमेष्ठी को अर्घ्य

जल पिया और चन्दन चरचा, मालायें सुरभित सुमनों की।
पहनी, तन्दुल सेये व्यंजन, दीपावलियों की रत्नों की।।
सुरभि धूपायन की फैली, शुभ कर्मों का सब फल पाया।
आकुलता फिर भी बनी रही, क्या कारण जान नहीं पाया।।
जब दृष्टि पड़ी प्रभुजी तुम पर, मुझको स्वभाव का भान हुआ।
सुख नहीं विषय-भोगों में है, तुमको लख यह सद्ज्ञान हुआ।।
जल से फल तक का वैभव यह, मैं आज त्यागने हूँ आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सीमंधर भगवान को अर्घ्य

निर्मलजल-सा प्रभु निजस्वरूप, पहिचान उसी में लीन हुए।
भवताप उतरने लगा तभी, चन्दन-सी उठी हिलोर हिये॥
अभिराम भवन प्रभु अक्षत का, सब शक्ति प्रसून लगे खिलने।
क्षुत् तृषा अठारह दोष क्षीण, कैवल्य प्रदीप लगा जलने॥
मिट चली चपलता योगों की, कर्मों के ईंधन ध्वस्त हुए।
फल हुआ प्रभो ! ऐसा मधुरिम, तुम धवल निरंजन स्वस्थ हुए॥

ॐ ह्रीं श्रीसीमंधरजिनेन्द्राय नमः अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विदेहक्षेत्र में विद्यमान बीस तीर्थंकरों को अर्घ्य

जल फल आठों दर्व अरघ कर प्रीति धरी है।
गणधर इन्द्रनि हूतैं थुति पूरी न करी है॥
'द्यानत' सेवक जानके (हो) जगतैं लेहु निकार।
सीमंधर जिन आदि दे (स्वामी) बीस विदेह मँझार॥
श्री जिनराज हो भव तारणतरण जिहाज, श्री महाराज हो।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री चौबीस तीर्थंकर भगवन्तों को अर्घ्य

मिट जाये मेरा जन्म-मरण, सन्ताप न हो अक्षय पद हो,
निष्काम रहूँ न विभुक्षा हो, न मोह न यह विधि भयप्रद हो।
बन जाऊँ जीवन मुक्त नाथ, यह अर्घ्य चढ़ा करता अर्चन,
ऋषभादि चतुर्विंशति जिनवर, आदर्श रहो मेरे प्रतिक्षण।

ॐह्रीं श्री वृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मानस्तम्भजी को अर्घ्य

देखत मान गले मानी का, मान स्तम्भ सार्थक नाम ।
चतुर्मुखी जिनबिम्ब विराजे, भाव सहित मैं करूँ प्रणाम ॥
द्रव्य-भावमय अर्घ्य चढ़ाकर, भाऊँ भावना मंगलकार ।
ज्ञानमयी निर्मान अवस्था, हे जिनवर पाऊँ अविकार ॥

ॐह्रीं श्री मानस्तम्भेषु विराजमान जिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यालयों को अर्घ्य

भूत भविष्यत् वर्तमान की, तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ।
चैत्य चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीनलोक के मन लाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालसम्बन्धी तीस चौबीसी, त्रिलोकसम्बन्धी कृत्रिमाकृत्रिम चैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अकृत्रिम चैत्य-चैत्यालयों को अर्घ्य

तीन लोक में अकृत्रिम चैत्यालय, अरु जिनबिम्ब महा ।
जिनके दर्शन से निज दर्शन, होते हैं सुखदाय अहा ॥
उन सब अकृत्रिम जिनबिम्बों, को मैं अर्घ चढ़ाता हूँ ।
निज अकृत्रिम भाव लखूँ, बस यही भावना भाता हूँ ॥

ॐह्रीं श्री अकृत्रिम चैत्य-चैत्यालय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री कृत्रिम जिनबिम्बों को अर्घ्य

जिस प्रकार पाषाण खण्ड में, शिल्पी बिम्ब प्रगटाता है !
मंत्र विधि से होय प्रतिष्ठा, त्रिजग पूज्य बन जाता है !!

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उस प्रकार मैं निज परिणति में, ज्ञायक का प्रतिबिम्ब धरूँ !
रत्नत्रय से होय प्रतिष्ठा, त्रिजग पूज्य पद प्राप्त करूँ !!

ॐह्रीं श्री कृत्रिम जिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री नन्दीश्वर द्वीप के जिनालयों को अर्घ्य

यह अरघ कियो निज हेत, तुमको अरपतु हों।
'द्यानत' कीज्यो शिवखेत, भूमि समरपतु हों॥
नन्दीश्वर श्री जिनधाम, बावन पुंज करों।
वसुदिन प्रतिमा अभिराम, आनन्द भाव धरों॥

ॐ ह्रीं श्री नन्दीश्वरद्वीपे पूर्वपश्चिमोत्तरदक्षिणदिशिद्विपंचासज्जिनालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री पंचमेरु के जिनालयों को अर्घ्य

आठ दरबमय अरघ बनाय, 'द्यानत' पूजौं श्रीजिनराय।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥
पाँचों मेरु असी जिनधाम, सब प्रतिमाजी को करहुँ प्रणाम।
महासुख होय, देखे नाथ परमसुख होय॥

ॐ ह्रीं श्रीसुदर्शन-विजय-अचल-मन्दरविद्युन्मालीपंचमेरुसम्बन्धि अशीतिः जिनचैत्यालयस्थजिनबिम्बेभ्यो नमः अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री सोलहकारण को अर्घ्य

जल फल आठों दरब चढ़ाय, 'द्यानत' वरत करों मन लाय।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परमगुरु हो॥
दरशविशुद्धि भावना भाय-सोलह तीर्थंकर पद पाय।
परमगुरु हो, जय-जय नाथ परमगुरु हो॥

ॐ ह्रीं श्रीदर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्योऽनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

श्री दशलक्षण धर्म को अर्घ्य

आठों दरब संवार, 'द्यानत' अधिक उछाह सों।
भव आताप निवार, दशलक्षण पूजों सदा ॥

ॐह्रीं श्री उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

श्री निर्वाण क्षेत्र को अर्घ्य

जल गंध अक्षत फूल चरु फल, दीप धूपायन धरौं।
'द्यानत' करो निरभय जगत सौं, जोर कर विनती करौं॥
सम्मेदगढ़ गिरनार चम्पा, पावापुरि कैलाश कों।
पूजों सदा चौबीस जिन, निर्वाण भूमि निवास कों॥

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकर-निर्वाणक्षेत्रेभ्योऽनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

सप्त ऋषि मुनिराजों को अर्घ्य

जल गंध अक्षत पुष्प चरुवर, दीप धूप सु लावना।
फल ललित आठों द्रव्य मिश्रित, अर्घ कीजे पावना॥
मन्वादि चारण-ऋद्धि-धारक, मुनिन की पूजा करूँ।
ता करें पातक हरें सारे, सकल आनन्द विस्तरूँ॥

ॐ ह्रीं श्रीमन्व-स्वरमन्व, निचय, सर्वसुन्दर, जयवान, विनयलालस, जयमित्र सप्त ऋषिभ्यो नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

श्री जिनवाणी (सरस्वति) को अर्घ्य

जल चंदन अक्षत फूल चरु, चत दीप धूप अतिफल लावै।
पूजा को ठानत जो तुम जानत, सो नर 'द्यानत' सुख पावै॥
तीर्थंकर की धुनि, गणधर ने सुनि, अंग रचे चुनि ज्ञानमई।
सो जिनवर-वानी, शिव-सुखदानी, त्रिभुवनमानी पूज्य भई॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भूत सरस्वतीदेव्यै नमः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

समुच्चय पूजन का अर्घ्य

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निज गुण प्रकट किये।।
यह अर्घ्य समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः अनन्तानन्त सिद्धपरमेष्ठिभ्यश्च अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कृत्रिमाकृत्रिम जिनचैत्य अर्घ्य

कृत्याकृत्रिम चारु चैत्यनिलयान्, नित्यं त्रिलोकी गतान्।
वन्दे भावनव्यन्तरान् द्युतिवरान् स्वर्गामरावासगान्॥
सद्गन्धाक्षत-पुष्प-दाम-चरुकैः, सद्दीप-धूपैः फलैः।
र्द्रव्यैर्नीरमुखैर्यजामि सततं दुष्कर्मणां शान्तये॥

ॐ ह्रीं कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयसम्बन्धिजिनबिम्बेभ्यो नमो नमः अर्घ्यं नि. स्वाहा।

कृत्रिमाकृत्रिम जिनचैत्य अर्घ्य

वर्षेषु वर्षांतर-पर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वंदे जिनपुंगवानाम्॥

अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां,
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम्।
इह मनुज-कृतानां देवराजार्चितानां,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि॥

जम्बू धातकि पुष्करार्ध वसुधा क्षेत्रत्रये ये भवा-
श्चन्द्राम्भोजशिखण्डिकण्ठ-कनक प्रावृड्घनाभा जिनाः।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षण-धरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः॥
श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचिके कुंडले मानुषाङ्के।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधि-मुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवन-महितले यानि चैत्यालयानि॥

द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविंद्रनील-प्रभौ,
द्वौ बंधूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियंगुप्रभौ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः संतप्त-हेम-प्रभाः
ते संज्ञान-दिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः॥

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधि-कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालयेभ्योऽर्घ्यं नि.स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महावीर भगवान का अर्घ्य

इस अर्घ्य का क्या मूल्य है अनर्घ्य पद के सामने?
उस परम-पद को पा लिया, हे पतित-पावन आपने ॥
संतप्त-मानस शान्त हों, जिनके गुणों के गान में।
वे वर्द्धमान महान जिन विचरें हमारे ध्यान में ॥

ॐ ह्रीं श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच-बालयति का अर्घ्य

सजि वसुविधि द्रव्य मनोज्ञ, अर्घ्य बनावत हैं।
वसुकर्म अनादि संयोग, ताहि नसावत हैं ॥
श्री वासु पूज्य-मल्लि-नेमि, पारस वीर अति।
नमूँ मन-वच-तन धरि प्रेम, पाँचों बालयति ॥

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्य-मल्लिनाथ-नेमिनाथ-पार्श्वनाथ-महावीर पंचबालयति-तीर्थंकरेभ्योः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय का अर्घ्य

आठ दरव निरधार, उत्तम सों उत्तम लिये।
जनम रोग निरवार, सम्यक् रत्नत्रय भजूँ ॥

ॐ ह्रीं सम्यक्रत्नत्रयाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शान्तिनाथ भगवान एवं अष्ट बलभद्र भगवंतों का अर्घ्य

ज्येष्ठ कृष्ण की चतुर्दशी को पाया स्वामी मोक्ष अटूट।
सम्मेदशिखर की कुन्दप्रभ कूट से, पाया पद निर्वाण प्रभु॥
वंदूं विजय अचल सुधर्म अरु, सुप्रभ श्री सुदर्शन नाथ।
नंदी नंदीमित्र रामचन्द्र, बलभद्रों को मैं नाऊँ माथ॥
कोटि कोटि मुनियों के चरणाम्बुज, वंदूं अति हर्षाय।
जल-फलादि वसुद्रव्य अर्घ्य ले, भावसहित पूजूं मन लाय॥

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ, विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नंदी, नंदीमित्र अरु रामचन्द्र बलभद्र जिनेन्द्रभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

समुच्चय महाऽर्घ

मैं देव श्री अर्हन्त पूजूँ सिद्ध पूजूँ चाव सों।
आचार्य श्री उवज्झाय पूजूँ साधु पूजूँ भाव सों॥
अर्हन्त भाषित बैन पूजूँ द्वादशांग रची गनी।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरन शिवहेत सब आशा हनी॥
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि दयामय पूजूँ सदा।
जजि भावना षोड़श रतनत्रय जा बिना शिव नहिं कदा॥
त्रैलोक्य के कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्य-चैत्यालय जजूँ।
पञ्चमेरु नन्दीश्वर जिनालय खचर सुर पूजित भजूँ॥
कैलाश श्री सम्मेदगिरि गिरनार मैं पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ शर्मदा॥
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस वसु जय होंय पति शिवगेह के॥

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, बहु विधि भक्ति बढ़ाय॥

ॐ ह्रीं भावपूजा भाववंदना त्रिकालपूजा त्रिकालवंदना करे-करावे भावना भावे श्री अरहन्तजी सिद्धजी आचार्यजी उपाध्यायजी सर्वसाधुजी पंचपरमेष्ठिभ्यो नमः, प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः, दर्शनविशुद्धयादि षोड़शकारणेभ्यो नमः, उत्तमक्षमादि दशलाक्षणिक धर्माय नमः, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः, जलविषैं थलविषैं आकाशविषैं गुफाविषैं पहाड़विषैं नगर-नगरीविषैं ऊर्ध्वलोक-मध्यलोक-पाताललोकविषैं विराजमान कृत्रिम-अकृत्रिम जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः, विदेहक्षेत्रे विद्यमान विंशति तीर्थङ्करेभ्यो नमः, पाँच भरत पाँच ऐरावत दशक्षेत्र सम्बन्धी तीस चौबीसी के सात सौ बीस तीर्थंकरेभ्यो नमः, नन्दीश्वरद्वीप सम्बन्धी बावन जिन चैत्यालयेभ्यो नमः, पञ्चमेरु सम्बन्धी अस्सी जिन-चैत्यालयेभ्यो नमः, सम्मेदशिखर चम्पापुर पावापुर गिरनार शत्रुञ्जय आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः, अयोध्या हस्तिनापुर राजगृही आदि तीर्थक्षेत्रेभ्यो नमः, जैनबद्री मूडबद्री आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नमः, श्री चारणऋद्धिधारी सप्त परमर्षिभ्यो नमः। ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं श्री कृपालसन्तं श्री वृषभादि महावीर पर्यन्तं चतुर्विंशति तीर्थङ्कर परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्य खण्डे ..... नाम्नि नगरे ..... मासे .... पक्षे ..... तिथौ ..... वासरे मुनि आर्यिकानां क्षुल्लक क्षुल्लिकानां श्रावक श्राविकानां सकलकर्मक्षयार्थं अनर्घ्यपद प्राप्तये महाऽर्घ्यम् निर्वपामीति स्वाहा।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानस्तंभ
कहान नगर, देवलाली

क : जैन कम्प्यूटर्स, जयपुर मो. 09414717816

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org